3235 43 E

सस्ती ग्रन्थमाला-संख्या १

आनन्द मठ

(सर्वोत्कृष्ट उपन्यास)



0157,3CH
152M9

स्वर्गीय बंकिमचन्द्र चटर्जी

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

0157,3CH 2658
152M9
Chattopadhyay, Bankim
Chadra.
Anandamath.

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

..... ग्रन्थमाला-संख्या १



ज्ञान मन्दिर ग्रन्थालय
जंगमवाड़ी मठ, वाराणसी
1815
43
e.

स्वर्गीय बाबू बंकिमचन्द्र चटर्जी कृत

आनन्दमठ



अनुवादक

आरा निवासी

स्व० पण्डित ईश्वरीप्रसाद शर्म्मा



C. M. V. Sharma Nahgpur

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी,

२०३, हरिसन रोड,

कलकत्ता।



तृतीयवार] सं० १९८६ [मूल्य ।॥)

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

प्रकाशक—
बैजनाथ केडिया,
प्रोप्राइटर,
हिंदी पुस्तक एजेन्सी,
२०३, हरिसन रोड,
कलकत्ता।

0157,3CH
152M9
1910



SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY.
Jangamwadi Math, VARANASI,
Acc. No. 2658
1910

मुद्रक—रावतमल चौधरी
वणिक् प्रेस,
१, सरकार लेन, कलकत्ता।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

प्राग्भाषण



स्वर्गीय वङ्किमचन्द्रका नाम बंगालके आबाल-वृद्ध-वनिता सभी जानते हैं। उनके उपन्यास वहाँ सभी श्रेणी और सभी अवस्थाके लोगोंको प्रिय हैं। उनके समान प्रतिभाशाली औपन्यासिक भारतके किसी प्रान्तमें पैदा नहीं हुआ। उनका एक-एक उपन्यास बहुमूल्य रत्नके समान है। हिंदीमें भी उनके उपन्यासोंके अनुवाद हो चुके हैं और हिन्दी पढ़नेवालोंमें उनकी पुस्तकोंका कैसा प्रचार है, वह इसीसे समझा जा सकता है कि उनकी एक-एक पुस्तकके भिन्न-भिन्न अनुवाद भिन्न-भिन्न स्थानोंसे निकलकर बरावर बाजारमें बिकते रहते हैं।

योंतो उनके सभी उपन्यास प्रशंसनीय, पठनीय और सुविख्यात हैं, तथापि जबसे लार्ड कर्जनने १९०५ई०में बंगालके दो टुकड़े किये, तबसे 'आनन्दमठ'का नाम सर्वापेक्षा प्रसिद्ध हो गया है। जो 'वन्देमातरम्'मंत्र इस समय सारे देशकी जबानपर हर जगह हर घड़ी मौजूद रहता है, जिस 'वन्देमातरम्'गानको हम अपना राष्ट्रीय गान मानते हैं, जिस 'वन्देमातरम्' ध्वनिको मुंहसे निकालनेके अपराधपर ही बंगालके दो टुकड़े किये जानेसे दुखित बंगालियोंको पुलिस और न्यायालयोंसे बड़े-बड़े दण्ड दिये गये, वह मंत्र और गान इस पुस्तकमें दिया हुआ है। इसी ग्रंथमें पहलेपहल भारतीय राष्ट्रको जन्मभूमिमें मातृभाव रखना सिखलाया गया था और कविके मुखसे निकले हुये इस दिव्यादेशकी अभिव्यक्तिका अवसर प्रदान करनेहीके लिये मानो बंगालके टुकड़े किये गये और बंगालियोंने इस आदेशको सारे देशमें फैला दिया। इस समय बङ्किम केवल बंगालकी ही सम्पत्ति नहीं; सारे देशकी सम्पत्ति हैं। इस गौरवको उन्होंने 'आनंद मठ' लिखकर ही प्राप्त किया है।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

इसी कारण 'आनंद-मठ' का इतना आदर है। कुछ दिन हुए, इसका अनुवाद भी हिन्दीमें निकला था; पर इधर वह दुष्प्राप्य हो रहा था, इसीसे हमारा विचार इसका अनुवाद करनेका हुआ। थोड़ी कापी लिखी जानेपर हमें हालका छपा हुआ एक दूसरा अनुवाद भी देखनेको मिला। परंतु जब हमने उन दानों अनुवादों-को मूलसे मिलाया, तो कुछ भूलें नजर आयीं, इसलिये हमने अनुवादका काम न रोककर इसे पूरा कर डाला। उन अनुवादोंमें क्या क्या त्रुटियां हैं, वह सब हम यहां वतलानेकी कोई जरूरत नहीं समझते। सिर्फ इतना ही कहना चाहते हैं कि हमने इस अनुवादमें मूलका रस-भङ्ग नहीं होने दिया। कहीं कोई वाक्य, शब्द या वाक्य खंड समझमें न आनेके कारण, छोड़नेकी चेष्टा नहीं की; तथा अनुवादकी भाषा अत्यन्त सरल रखनेका प्रयास किया है। साथही मूलमें जा दो परिशिष्ट अंगरेजीमें हैं, उनका हिन्दी-अनुवाद भी दे दिया है, क्योंकि यदि उन्हें अंगरेजीमें ही रहने दिया जाता, तो वह भाषा न जाननेवाले उससे कुछ भी लाभ नहीं उठा सकते। आशाहै, पाठकोंको हमारा यह परिश्रम प्रिय प्रतीत होगा।

आरा,
आषाढ़ शुक्ला १, सं० १९७९

निवेदक
ईश्वरीप्रसाद शर्मा

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

प्रकाशकका निवेदन

—*०*—

आज हम हिन्दी-संसारके सामने उपयोगी सस्ती ग्रंथ-मालाका प्रथम रत्न, आनन्द-मठ लेकर उपस्थित होते हैं। इतनी ग्रंथ-मालाओंके हाते हुए भी इस ग्रंथ-मालाके निकालनेका एकमात्र यही उद्देश्य है कि उपयोगी और अलभ्य पुस्तकोंको पाठकोंके पास स्वल्प मूल्यमें पहुंचानेकी अधिकाधिक चेष्टा की जाय। प्रकाशनकी व्यावसायिक वृत्तिपर ध्यान न देकर केवल प्रचारके उद्देश्यसे ही इस मालाके रत्न निकाले जायंगे।

'आनंद-मठ' को इस मालाका प्रथम रत्न बनानेका यही कारण है। इस पुस्तककी उपयोगिता सर्वविदित है। इसका प्रचार घर-घर होना चाहिये। पर इसके लिये कोई उपयुक्त साधन नहीं था। पहला अनुवाद, जो वेङ्कटेश्वर प्रेस बम्बईसे निकला था, दुष्प्राप्य है, दूसरा अनुवाद भी अभी एक अन्य स्थानसे निकला है, जिसमें मूल ग्रंथसे बहुत काट-छांटकर अनुवाद करनेपर भी मूल्य बहुत अधिक रखा गया है, अर्थात् उपयोगिताका ख्याल न कर लाभपर ही विशेष दृष्टि रखी गयी है। इसलिये हमने यह तीसरा अनुवाद निकालनेका प्रयत्न किया है, जो बहुत ही कम मूल्यपर पाठकोंकी सेवामें उपस्थित किया गया है। आशा है, हिन्दीके उदार पाठक इस मालाको सर्वथा उपयोगी समझकर इसे अपनानेकी चेष्टा करेंगे।

अंतमें हम पण्डित जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदीके अतिशय कृतज्ञ हैं, जिन्होंने असीम कृपाकर बंगला 'वंदे मातरम्' गानका अपना हिन्दी पद्यानुवाद उद्धृत करनेकी आज्ञा दी है।

विनीत,

प्रकाशक।

—————

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कथामुख



बड़ी दूरतक फैला हुआ घना जङ्गल है। तरह-तरहके पेड़ मौजूद होनेपर भी अधिकतर शालके ही वृक्ष दिखाई पड़ते हैं। उन पेड़ोंके सिरे और शाखा-पत्र एक दूसरेसे ऐसे मिले हुए हैं, और बहुत दूरतक वृक्षोंकी ऐसी घनी श्रेणी बन गयी है, कि उनके बीचमें तनिक भी छिद्र या फांक नहीं मालूम पड़ती; यहांतक कि, प्रकाश आनेका भी कहींसे रास्ता नहीं रह गया है। इस प्रकार वृक्षके पल्लवोंका अनन्त समुद्र हवाकी तरङ्गोंपर नाचता हुआ, कोसोंतक फैला हुआ दिखाई पड़ता है। नीचे घोर अन्धकार है। दोपहरमें भी सूर्यकी रोशनी साफ नहीं मालूम पड़ती। वहांका दृश्य बड़ा ही भयानक मालूम पड़ता है; इसीसे उसके भीतर कभी कोई आदमी नहीं जाता। पत्तोंकी लगातार खड़खड़ाहट और जंगली जानवरों तथा चिड़ियोंकी बोलीके सिवाय और कोई शब्द वहां नहीं सुनाई पड़ता।

एक तो इस लम्बे-चौड़े और घने जंगलमें आपही सदा अन्धकार छाया रहता है; दूसरे रातका समय, फिर क्या पूछना है? दोपहर रात बीत गयी है—बड़ी अंधेरी रात है। जंगल तो जंगल, बाहर भी घुप अन्धेरा है, हाथको हाथ नहीं सूझता। वनके भीतर तो ऐसा अन्धेरा हो रहा है, जैसा भूगर्भमें होता है।

सारे पशु-पक्षी चुप हैं। न जाने कितने, लाखों-करोड़ों पशु-पक्षी, कीट-पतंग इस जंगलमें बसेरा करते हैं, पर इस समय

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

किसीकी बोली नहीं सुनाई पड़ती। उस अन्धकारका अनुमान भले ही हो जाय, पर शब्दमयी पृथ्वीकी इस निस्तब्धताका तो अनुमानही नहीं हो सकता। उसी अनन्त शून्य अरण्यमें, उसी सूचीभेद्य अन्धकारमयी रात्रिमें, उस प्रगाढ़ निस्तब्धताको भंग करते हुए न जाने किसने कहा,—"मेरी मनोकामना पूरी न होगी?"

इस आवाजके बादही वह अरण्य मानों फिर निस्तब्धताके समुद्रमें डूब गया। अब भला कौन कह सकता है कि इस जंगलमें अभी मनुष्यकी बोली सुनाई पड़ी थी? थोड़ी ही देर बाद फिर वैसाही शब्द सुनाई पड़ा—फिर भी किसी मनुष्यकण्ठने उस निस्तब्धताके समुद्रको मथते हुए कहा,—"क्या मेरी मनोकामना पूरी न होगी?"

इस प्रकार तीन बार उस निस्तब्ध समुद्रमें खलबली पैदा हुई। तब किसीने मानों पूछा,—"अच्छा, बोलो, दाँवपर क्या रखते हो?"

प्रत्युत्तर मिला,—"मैं अपना जीवनसर्वस्व दाँवपर लगाता हूं।"

प्रतिशब्द हुआ,—"जीवन तुच्छ पदार्थ है, उसे तो सभी लोग त्याग सकते हैं।"

"तब और मेरे पास है ही क्या, जो दे सकूं?"

उत्तर मिला,—"भक्ति!"



CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative



आनन्दमठ।



पहला खण्ड

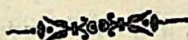


CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative



CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

पहला परिच्छेद



संवत् ११७६ की ग्रीष्म ऋतुका समय है, कड़ाकेकी धूप पड़ रही है। बंगालके पदचिह्न नामक गांवमें घर तो बहुत हैं, पर आदमी कहीं नहीं दिखाई पड़ते। बाजारमें कतारकी कतार दूकानें हैं, हाटमें छपरियोंका तांतासा लगा हुआ है, हर टोले-मुहल्लेमें सैकड़ों मिट्टीके बने मकान नजर आते हैं, बीचबीचमें छोटी-बड़ी अटारियां भी दिखाई देती हैं, पर आज सब जगह सन्नाटा छाया हुआ है। बाज़ारकी दूकानें बन्द हैं—दूकानदार किधर भाग गये हैं, पता नहीं। आज हाटका दिन है, तोभी हाट नहीं लगी। आज 'सदावर्त' का दिन है, पर भिखमंगे भिक्षा लेनेके लिये घरसे बाहर निकले ही नहीं। जुलाहोंने आज कपड़ा बुनना छोड़ दिया है और घरके एक कोनेमें बैठे हुए रो रहे हैं। व्यापारी अपना रोजगार छोड़ बच्चेको गोदमें लिये आंसू बहा रहे हैं। दाताओंने दान देना बन्द कर रखा है, पण्डितोंने पाठशाला बन्द कर दी है। शायद दूधपीते बच्चे भी खुलकर रोनेका साहस नहीं करते। राजपथपर आदमी चलते-फिरते नहीं नजर आते, सरोवरोंपर कोई स्नान करनेवाला नहीं दिखलाई देता, घरके दरवाजोंपर कोई आदमी बैठा नहीं दीखता, पेड़ोंपर पंछी न रहे, चारागाहोंमें गौएं चरती नहीं दीखतीं—हां, श्मशानमें स्यारों और कुत्तोंकी पलटन तैयार है। एक बड़ीसी अट्टालिकाके बड़े-बड़े छड़दार खम्भे दूरसे उस गृहारण्यमें शैलशिखरकी तरह शोभा दे रहे हैं। पर यह शोभा भी कोई शोभा है? दरवाजे बन्द हैं, घरमें कोई आदमी नहीं मालूम पड़ता, किसी तरहकी आहट नहीं सुनाई देती। शायद हवा भी विघ्नोंके भयसे उस घरमें प्रवेश करती हुई डरती है। मकानके भीतर इस दोपहरके समय भी अन्धेरा छाया है। उसी अन्धेरे घरके

C. M. V. Sharma Kalaguda

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

एक कमरेमें एक अति सुन्दर स्त्री और पुरुष बैठे हुए सोच-सागरमें डूब-उतरा रहे हैं। उनके सामने प्रलयका दृश्य उपस्थित है।

संवत् ११७४ में फ़सल अच्छी नहीं हुई, इसलिये ११७५ में चावलकी बड़ी महंगी रही, प्रजा घोर विपद्में रही, लेकिन राजाने अपनी मालगुजारी पाई-पाई वसूल कर ली। मालगुजारी बेबाककर बेचारी दरिद्र प्रजाने एकही वक्त खाकर दिन बिताये। ११७५में अच्छी बरसात हुई, लोगोंने सोचा, कि चलो, इस साल तो दैवकी कृपा हो गयी। आनन्दसे फूलके ग्वाले खेतोंमें गीत गाते हुए दिखाई देने लगे, गृहस्तोंकी स्त्रियाँ अपने स्वामीसे चाँदीके गहने गढ़ा देनेके लिये मचलने और हठ करने लगीं। यकायक आश्विनके महीनेमें विधाता वाम हो गये। आश्विन और कार्तिकमें एक बूंद भी जल न पड़नेसे खेतोंके धान सूखकर खाक हो गये। किसी किसीके एक दो बोघोंमें धान नहीं सूखने पाये थे, पर वे सब राजाके नौकरोंने सैनिकोंके खर्चके लिये खरीद लिये। अब तो लोगोंको अन्न मुहाल हो गया। पहले तो लोगोंने कुछ दिनोंतक एकही वेला भोजन किया, फिर एक ही वेला आधा पेट खाकर बिताया इसके बाद दोनों वेला उपवास करने लगे। चैतमें थोड़ी बहुत रबी पैदा हुई सही; पर वह भी सबके खानेभरको न हुई। इतनेपर भी सरकारी तहसीलदार मुहम्मद रजा खांने इसी मौकेको अपनी खैरख्वाही दिखलानेके लिये अच्छा समझा और एकबारगी दस रुपया सैकड़ा लगान बढ़ा दिया। सारे बंगालमें घोर हाहाकार मच गया।

पहले तो लोगोंने भीख मांगनी शुरू की, पर भीख मिलनी भी मुश्किल हो गयी। कौन किसे भीख देता? सब लगे उपवास करने। धीरे-धीरे लोग बीमार पड़ने लगे। लोगोंने गाय-गोरू बेच दिये, हल-बैल बेच दिये, बीजके अन्न खा डाले, घर-द्वार बेच डाला, जगह-जमीन भी बेच दी। इसके बाद लड़की बेचना शुरू किया। फिर लड़के बिकने लगे। अन्तमें स्त्री बेचनेकी भी नौबत आ

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

पहुंची। पर लड़का-लड़की और स्त्री भी कोई कहांतक खरीदे! खरीदारोंका ही टोटा हो गया। सब बेचनेको ही तैयार नजर आने लगे। अन्न न मिलनेपर लोग पेड़के पत्ते नोच-नोचकर खाने लगे। उससे हटे, तो घास खाने लगे। जंगली पेड़-पौधोंपर दिन काटने लगे। नीच और जंगली लोग तो कुत्तों, बिल्लियों और चूहोंको मार-मारकर खाने लगे। बहुतसे आदमी देश छोड़कर भाग गये, पर वे विदेशमें ही अन्नके अभावसे मर गये। जो नहीं भागे, उनमेंसे कितने अखाद्य भोजनसे भूखके कारण रोगी होकर प्राण त्याग करने लगे।

मौका पाकर रोगोंने जोर पकड़ा। ज्वर, हैजा, क्षयी और चेचकका प्रकोप बढ़ गया। खासकर चेचकका तो बहुत ही जोर हुआ। घर-घरमें चेचकसे मौत होने लगी। कौन किसे जल देता है? कौन किसे छूने जाता है? न कोई किसीकी चिकित्सा करता है, न किसीको देखने जाता है, मरनेपर कोई लाश उठानेवाला भी नहीं मिलता। लाशें घरमें पड़ी-पड़ी सड़ने लगीं। जिस घरमें चेचक प्रवेश करती, उस घरके लोग डरके मारे रोगीको छोड़कर भाग जाते।

इस ग्राममें महेन्द्रसिंह बड़े धनी थे। पर आज धनी-निर्धन सब एक ही भाव हो रहे हैं। इसी दुःखकी घड़ीमें व्याधि-ग्रस्त हो, उनके सभी आत्मीय स्वजन और दास-दासी उन्हें छोड़कर चल दिये। कोई मर गया, कोई भाग गया। आज उनके बहुत बड़े परिवारमें केवल उनकी स्त्री, एक छोटी कन्या और स्वयं वे रह गये हैं। इस समय हम उन्हींका हाल लिखते हैं।

उनकी पत्नी कल्याणीने लज्जा छोड़, गोशालामें जाकर स्वयं अपने हाथों दूध दूहा। उसे गरमकर कन्याको पिलाया और गौओंको घास और जल देने चली गई। उसके लौट आनेपर महेन्द्रने कहा,—"इस तरहसे कितने दिन चलेगा?"

कल्याणीने कहा,—"बहुत दिन तो नहीं चलनेका, पर जबतक

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

चलता है चलाये जाती हूं। इसके बाद तुम लड़कीको लेकर शहरमें चले जाना।"

महेन्द्र—"जब शहरमें गये बिना काम नहीं चलनेका, तब फिर तुम्हें इतना दुःख क्यों दूं? चलो, अभी चलें।"

इसपर दोनोंमें खूब तर्क-वितर्क होते रहे। अन्तमें कल्याणीने कहा—"क्या शहरमें जानेसे कोई विशेष उपकार होगा?"

महेन्द्र—"सम्भव है, वह स्थान भी ऐसा ही जनशून्य हो गया हो और वहां भी प्राणरक्षाका कोई उपाय न हो।"

कल्याणी—"मुर्शिदाबाद, कासिमबाजार या कलकत्ते जानेसे प्राणरक्षा हो सकती है। अब तो यह स्थान अवश्य ही छोड़ देना चाहिये।"

महेन्द्र—"यह घर बाप-दादोंके समयसे सञ्चित धनोंसे परिपूर्ण है, इसे छोड़कर चले जानेसे तो सब लुट जायगा।"

कल्याणी—"यदि घरमें लुटेरे आ ही पड़ेंगे, तो हमीं दोनोंसे रक्षा थोड़े हो सकेगी? जब प्राण ही न रहेंगे, तब धन कौन भोगेगा? चलो, अभी घरमें ताला बन्दकर चल दें। यदि प्राण बच गये तो फिर लौट आनेपर इन सब चीजोंकी फिक्र करेंगे।"

महेन्द्र—"क्या तुम पैदल रास्ता चल सकोगी? पालकीवाले कहार तो सब मर चुके। यदि बैल हैं, तो गाड़ीवान नहीं; और गाड़ीवान हैं, तो बैल नहीं।

कल्याणी—"मैं पैदल चल सकूंगी, तुम इसके लिये चिन्ता मत करो।"

कल्याणीने मन ही मन सोचा, कि यदि मैं रास्ता न चल सकी तो बहुत होगा मैं मर जाऊंगी, पर ये दोनों बाप-बेटी तो बच जायंगी।

दूसरे ही दिन सबेरे दोनों स्त्री-पुरुष थोड़ासा द्रव्य अपने साथ ले घरमें ताला लगा, गाय-गोरूको खुलाही छोड़, कन्याको गोदमें ले राजधानीकी ओर चल पड़े। थोड़ी दूर चलकर महेन्द्रने कहा—"रास्ता बड़ा ही विकट है, पग-पगपर लुटेरे मिलते हैं,

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

खाली हाथ जाना ठीक नहीं। यह कह, वे लौट पड़े और घरमेंसे बन्दूक, और थोड़ीसी गोली-बारूद ले ली।

यह देख, कल्याणीने कहा—"हथियारकी भी अच्छी याद दिलायी। तुम जरा सुकुमारीको गोदमें लिये रहो—मैं भी कुछ हथियार संग ले लूं।" यह कह, कन्याको महेन्द्रकी गोदमें दे, कल्याणी भी घरके अन्दर जाने लगी।

महेन्द्रने पूछा—"तुम कौनसा हथियार संग ले चलोगी?" घरमें आकर कल्याणीने एक छोटी-सी डिबिया निकाली और उसे अपने कपड़ेके अन्दर छिपा लिया। उस डिबियामें जहर रखा हुआ था। विपत्तिके दिन हैं, न जाने कब क्या हो, यही सोचकर कल्याणीने पहलेसे ही अपने पास विष रख लिया था।

जेठका महीना था। कड़ाकेकी धूपसे पृथ्वी आगसे भरी भट्ठी-की तरह दहक रही थी। दोपहरकी लूह आगकी लपटोंको मात करती थी। आसमान तपे हुए ताम्बेके चद्दरकी तरह तप रहा था। रास्ते-की धूल आगकी चिनगारी बन रही थी। कल्याणीको राह चलते-चलते पसीना आने लगा। वह कभी बबूलके पेड़के नीचे, कभी खजूरकी छायामें बैठकर, सूखे हुए सरोवरका गदला पानी पीकर बड़े कष्टसे रास्ता तय करने लगी। लड़की महेन्द्रकी गोदमें थी। वह रहरह कर उसके मुंहपर हवा करते जाते थे। इस तरह, चलते-चलते उन्हें हरे-हरे पत्तोंसे सुशोभित, सुगन्धित कुसुमोंसे लदी हुई लताओं वेष्ठित वृक्षोंकी सघन छाया मिली, दोनोंने बैठकर विश्राम किया।

महेन्द्र कल्याणीकी श्रमसहिष्णुता देखकर विस्मित थे। पासमें एक छोटासा जलाशय था, उसमेंसे अपना वस्त्र भिगो लाये और उसी जलसे अपने मुँह, हाथ, पैर धोये।

कल्याणीका जी कुछ ठण्ढा हुआ। पर क्षुधाकी ज्वालासे वे बड़े व्याकुल हो उठे, पर अपने पेटकी उन्हें उतनी परवा नहीं थी जितनी कन्याके लिये थी। उसे वे भूखी-प्यासी नहीं देख सकते थे। इसलिये वे लोग फिर रास्ता चलने लगे। उसी भीषण आगकी

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

लूहमें चलते हुए वे सांझ होते-होते एक चट्टीमें आ पहुंचे। महेन्द्र मन-ही-मन बड़ी आशा किये हुए थे कि चट्टीमें पहुंचनेपर स्त्री-कन्याके मुंहमें ठंढा पानी और प्राणरक्षाके लिए चार दाने अन्नके पहुंचा सकेंगे। पर चट्टीमें तो आदमी-जनका कहीं पताही नहीं है। बड़े-बड़े घर हैं, पर सब खाली पड़े हैं। आदमी सब भाग गये हैं। इधर-उधर देख-भालकर महेन्द्रने स्त्री-कन्याको एक घरमें सुला दिया और आप बाहर आकर जोर-जोरसे आवाजें देने लगे, पर किसीने उत्तर नहीं दिया।

महेन्द्रने कल्याणीसे कहा—"तुम जरा साहस करके थोड़ी देर अकेली बैठी रहो, मैं जरा देखूं, कहीं भगवानकी दयासे गाय मिल जाय तो थोड़ा दूध दुह लाऊं।" यह कह महेन्द्र वहींपर पड़ा एक छोटासा मिट्टीका घड़ा लिये बाहर निकले।

दूसरा परिच्छेद

महेन्द्रके चले जानेके बाद कल्याणी अकेली बैठी, कन्याको गोदमें लिये हुए, उस जनशून्य अंधेरी कोठरीमें चारों तरफ दृष्टि दौड़ा रही थी, उसके जीमें बड़ा भय पैदा हो रहा था। कहीं कोई आदमी नहीं, किसी मनुष्यकी आहट तक नहीं मिलती, केवल स्यार-कुत्तोंका भूंकना सुनाई पड़ता था। वह मन-ही-मन सोच रही थी,—"मैंने क्यों उन्हें जाने दिया? थोड़ी देर और भूख प्यास सह लेती। फिर विचारा कि चारों ओरके किवाड़ बन्द कर दें, पर किसी दरवाजेमें किवाड़ नदारद थे, तो किसी किवाड़में सांकल ही नहीं थी। इसी तरह वह चारों ओर देख रही थी कि सामनेके दरवाजेपर एक छाया-सी दीख पड़ी। आकार-प्रकार तो

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

मनुष्यका-सा मालूम पड़ा, पर शायद वह मनुष्य नहीं था। अत्यन्त दुबला-पतला, सूखी ठठरीवाला,काला नंग धड़ंग विकटाकार मनुष्य-का-सा न जाने कौन आकर दरवाजेपर खड़ा हो गया। कुछ देर बाद उस छायाने मानों अपना हाथ ऊपर उठाया और हड्डी-चाम-भर बचे हुए अपने लम्बे हाथकी लम्बी और सूखी ऊंगलियोंको घुमाकर किसीको संकेतसे अपने पास बुलाया। कल्याणीकी जान सूख गयी। इतनेमें एक और छाया उस छायाके पास आकर खड़ी हो गयी। यह छाया भी पहलोहीकी तरह थी। इसी तरह एक एक करके न जाने कितनीही छायायें आ पहुंचीं। सबकी सब चुप-चाप आकर घरमें घुस गयीं। वह अन्धकारमय गृह श्मशान-सा भयंकर मालूम पड़ने लगा। इसके बाद उन प्रेतमूर्त्तियोंने कल्याणी और उसकी कन्याको चारों ओरसे घेर लिया। कल्याणी मूर्च्छित हो गई। तब उन कृष्णवर्ण शीर्ण आकारने कल्याणी और उसकी कन्याको उठाया और उन्हें लिये हुए घरसे बाहर हो मैदान पारकर एक जंगलमें घुस गये।

कुछ ही देर बाद महेन्द्र घड़ेमें दूध लिये हुए वहां आ पहुंचे। उन्होंने देखा कि कहीं कोई नहीं है। उन्होंने चारों ओर बहुत ढूंढ़ा, स्त्री और कन्याका नाम ले-लेकर बार-बार पुकारा, पर न तो किसी-ने उत्तर दिया, न किसीका पता चला।

तीसरा परिच्छेद

जिस जंगलमें डाकुओंने कल्याणीको ले जाकर जमीनपर रखा वह बड़ा मनोहर था। न तो वहां प्रकाश था और न ऐसे पारखीही थे जो वहाँकी शोभाको देख और समझ सकें। जिस

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

तरह दरिद्रके हृदयके सौन्दर्यका कोई मूल्य नहीं होता उसी तरह उस वनकी शोभा निरर्थक थी। देशमें खानेको अन्न हो या न हो, पर वह वन विकसित था, जिसकी सुगंधसे वह अन्धकार प्रकाशमय हो रहा था। वनके बीच एक साफ-सुथरे और सुकोमल पुष्पोंसे भरे हुए भूमिखण्डमें डाकुओंने कल्याणी और उसकी कन्याको ला रखा था। वे उन्हें चारों ओरसे घेरकर बैठ गये और आपसमें वाद-विवाद करने लगे, कि उन दोनोंका क्या करना चाहिये। कल्याणी-के शरीरपरके गहने तो उन्होंने पहलेही निकाल लिये थे। कुछ डाकू उन्हींका बँटवारा करनेमें लगे हुए थे। गहनों का बँटवारा हो जाने-पर एक डाकूने कहा —“ भाई, हम सोना-चांदी लेकर क्या करेंगे? एक गहना लेकर यदि कोई मुट्ठीभर चावल दे दे तो प्राण बचें। भूखके मारे जान निकली जा रही है। आज केवल पेड़के पत्ते खाकर रह गया हूं।”—एकके मुंहसे यह बात निकलतेही सब भोजन भोजन चिल्लाने लगे। “हमें सोना-चांदी नहीं चाहिये, भूखसे प्राण निकले जा रहे हैं”। उनके सरदारने उन्हें समझा बुझाकर चुप कराना चाहा, पर कोई चुप न हुआ, उलटे सबके सब और जोर-से चिल्लाने और गाली बकने लगे। अन्तमें मारपीटकी नौबत आ पहुंची। जिन लोगोंको बंटवारेमें गहने मिले थे, उन्होंने क्रोधमें आकर उन गहनोंको सरदारके ऊपर जोरसे फेंक मारे। सरदारने भी एक-दोको खूब पीटा। तब सब मिलकर सरदारपर टूट पड़े और उसे मारने लगे। बेचारा सरदार भी कई दिनोंका भूखा था और कमजोर हो रहा था, इसलिये दो-ही-चार धौल-धप्पेमें उसका काम तमाम हो गया। तब भूखसे पीड़ित, क्रोधित, उत्तेजित और ज्ञानशून्य डाकुओंमेंसे एकने कहा,—“भाइयो! भूखसे प्राण निकले जा रहे हैं। स्यार-कुत्तोंका मांस तो बहुत खाया, आओ, आज इसी सालेका मांस खायें।” यह सुनतेही सब “जय काली मैयाकी” कहकर जोरसे चिल्ला उठे। “बम काली! आज मनुष्यका ही मांस उड़ने दो।” यह कहकर वे सब दुबली-पतली और प्रेत

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

सदृश काली-काली मूर्तियां अन्धकारमें खिल-खिलाकर हंसने और ताली बजा-बजाकर नाचने लगीं। एकने सरदारको लाश भुननेके लिये आग जलानेका उपाय करना आरम्भ किया। सूखी लतायें, लकड़ियां और तृण बटोरकर उसने चकमकसे आग पैदाकर उनकी ढेरमें आग लगा दी। आग धीरे-धीरे जलने लगी और उसके प्रकाश-में पासवाले आम, नीबू, कटहल, ताड़, खजूर और इमलीके पेड़ोंके हरे-हरे पत्ते चमकने लगे। कहीं तो पत्ते उजेलेमें चमक उठे, कहीं घासपर रोशनी पड़ने लगी और कहीं अंधेरा और भी बढ़ गया। आग खूब धधक उठनेपर एकने लाशकी टांग पकड़ी और उसे आग-में डालनेके लिये ले चला। इतनेमें एक बोल उठा, —"ठहर जा यार, ठहर जा। अगर आज नरमांस खाकर ही प्राण बचाने हैं, तो फिर इस बुड्ढेकी सूखी ठठरी जलाकर क्यों खायें? लाओ, आज हम जिसे पकड़ लाये हैं, उसीको भुनकर खायें, उसी अल्पवयस्क बा-लिकाका मुलायम मांसही खाकर प्राण बचायें।" दूसरेने कहा जो कुछ हो, जल्द भुन डालो, बाबा! अब तो भूख नहीं सही जाती! सभीकी जीभसे लार टपक पड़ी और सब-के-सब उधर ही चले जहां कल्याणी अपनी कन्याके साथ मूच्छित पड़ी थी। आकर सबोंने देखा कि वहां कोई नहीं है, न मांका पता है, न बेटीका। डाकुओं-को लड़ाई-झगड़ामें फंसा देख, सुयोग पाकर कल्याणी कन्याक गोदमें लेकर जंगलमें भाग गयी थी। शिकारको इस तरह हाथसे निकल गया देख, वे सब प्रेतमूर्त्ति डाकू "मारो! मारो!! पकड़ो! पकड़ो!!" करते हुए चारों ओर दौड़ पड़े।

सच पूछो तो, अवस्थाविशेषमें मनुष्य भी हिंस्र जन्तु ही हो जाता है।

—

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

चौथा परिच्छेद

बनमें निविड़ अंधेरा था, बेचारी कल्याणीको रास्ता नहीं सूझता था। एक तो वृक्षों, लताओं और कुश-कांटोंकी बहुतायत से आपही रास्ता छिप गया था, दूसरे निविड़ अन्धकार; कुश-काँटोंके बीचसे कल्याणी वनमें प्रवेश करने लगी। रह-रहकर लड़की-के बदनमें कांटे चुभ जाते थे, इससें वह रो उठती थी। उसकी आवाज सुनकर डाकू और भी चिल्लाने लगे। इस प्रकार आहत शरीर बालिकाको लिये हुए कल्याणी बहुत दूरतक जङ्गलमें चली गयी। कुछ देर बाद चन्द्रमा निकल आये। अबतक तो कल्याणीको यही भरोसा था कि अंधेरेमें डाकू उसे न देख सकेंगे, इधर-उधर ढूंढ़ खोजकर थक जायंगे, पर चन्द्रोदय हो जानेसे उसका यह भरोसा भी टूट गया। आसमानमें निकलतेही चन्द्रमाने जंगलके शिरपर प्रकाशकी वर्षा-सी कर दी, वनके भीतरवाले अन्धकारपर रोशनीके छीटेसे पड़ गये। अन्धकार भी उज्ज्वल हो गया। बीच-बीचमें थोड़ा छिद्र पाकर प्रकाश वनके भीतर प्रवेश करके झांकने लगा। चांद जितनाही ऊपर उठने लगा, उतनीही अधिक उजियाली वनमें प्रवेश करने लगी। कल्याणी कन्याको लिये और भी घने जङ्गलमें छिपने लगी। डाकुओंने और भी अधिक चिल्लाहट और शोरगुलके साथ वनमें चारों ओर दौड़ना शुरू किया। लड़की डरके मारे और भी जोर-जोरसे रोने लगी। कल्याणीने लाचार हो, भागनेका विचार छोड़ दिया। एक बड़ेसे पेड़के नीचे, जहां हरी-हरी घास उगी थी और कुश-कांटे नहीं थे, कन्याको गोदमें लिये वह बैठकर पुकार-पुकारकर कहने लगी—"हे भगवन्! तुम कहाँ हो? मधुसूदन! तुम्हें मैं नित्य पूजती और प्रणाम करती हूँ।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

तुम्हारेही भरोसे मैं इस जंगलमें घुसी थी। बताओ तुम कहाँ हो?" इसी समय भय तथा भक्तिकी प्रगाढ़ता और क्षुधा-तृष्णाकी मारसे बाह्य ज्ञान शून्य हो आन्तरिक चैतन्यसे भरकर कल्याणीको अन्तरिक्षमें स्वर्गीय गान सुनाई देने लगा, मानों कोई गा रहा है—

"हरे मुरारे, मधुकैटभारे!
गोपाल गोविन्द मुकुन्द शौरे!
हरे मुरारे मधुकैटभारे!"

कल्याणी लड़कपनसेही पुराणोंमें सुनती आयी थी कि देवर्षि नारद वीणा हाथमें लिये हरिनामका कीर्तन करते, गगनपथमें विचरण करते हुए, भुवन-भ्रमण किया करते हैं। यही कल्पना उसके मनमें जाग बैठी। उसे मालूम होने लगा मानों शुभ्र शरीर, शुभ्र-केश, शुभ्र-वसन, महाशरीर, महामुनि वीणा हाथमें लिये, चन्द्रलोकमें प्रदीप्त नीलाकाशमें गा रहे हैं,—

"हरे मुरारे मधुकैटभारे!"

क्रमशः गीत और पास सुनाई देने लगो। उसे साफ सुनाई दिया कि कोई कह रहा है—"हरे! मुरारे!! मधुकैटभारे!!!"

क्रमशः गाना और भी निकट—और भी स्पष्ट मालूम पड़ने लगा; मानों कोई गाता है—

"हरे! मुरारे! मधुकैटभारे!"

अन्तमें कल्याणीके सामने वनस्थलीसे भी उस गीतकी प्रतिध्वनि गूंज उठी—

"हरे! मुरारे! मधुकैटभारे!"

कल्याणीने आंखें खोलीं। उसने क्षीण प्रकाशमें देखा, कि वही शुभ्र-शरीर, शुभ्र-केश, शुभ्र-वसन ऋषि-मूर्त्ति उसके सामने खड़ी है! अन्यमनष्क कल्याणीने श्रद्धा-भक्ति-युक्त उन्हें प्रणाम करना चाहा, पर प्रणाम न कर सकी। सिर झुकाते ही बेहोश होकर गिर पड़ी।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

पाँचवाँ परिच्छेद



उस वनके एक विस्तृत भागमें पत्थरोंके ढोकोंसे घिरा हुआ एक बड़ा मठ था। उसे यदि कोई पुरातत्त्ववेत्ता देख पाये, तो यही कहेगा कि यह पहले बौद्धोंका 'विहार' रहा होगा, पीछे हिन्दुओंका मठ हो गया। अट्टालिका दो मंजिली है—बीचमें बहुतसे देवमन्दिर हैं, जिनके सामने नाट्यशाला बनी हुई है। मठके चारों तरफ दीवार खींची हुई है और बाहरसे जंगली वृक्षोंकी श्रेणी द्वारा ऐसा छिपा हुआ है कि पास जानेपर भी यह नहीं मालूम होता कि यहां पक्का मकान है। अट्टालिकाएं जगह-जगहसे टूटी-फूटी थीं, परन्तु दिनको देखनेसे मालूम होता था, कि उन सबकी हालमें ही मरम्मत हो गयी है। इससे प्रकट होता था कि इस गम्भीर और अभेद अरण्यमें मनुष्य वास करते हैं।

मठके एक कमरेमें बड़ी भारी धूनी जल रही थी। होशमें आकर कल्याणीने देखा कि वही शुभ्र-शरीर, शुभ्र-वसन महापुरुष उसके सामने खड़े हैं। कल्याणी विस्मयसे उनकी ओर देखने लगी। पर बहुत सोचनेपर भी उसे कुछ स्मरण नहीं हो सका। यह देख उस महापुरुषने कहा—"बेटी! शंका न करो, यह देवताका स्थान है। थोड़ा दूध है, इसे पीलो, तब तुम्हें सब कथा सुनाऊंगा।"

पहले तो कल्याणी कुछ न समझ सकी, पर मन कुछ स्थिर हो जानेपर उसने उन महात्माको प्रणाम किया। महात्माने शुभ आशीर्वाद दिया। फिर दूसरे कमरेसे एक सुगन्धित मिट्टीका बर्तन लाया और आगपर दूध गरम किया। दूध गरम होनेपर उन्होंने कल्याणीको देकर कहा—"बेटी! थोड़ा तुम पीओ और थोड़ा लड़कीको भी पिलाओ, इसके बाद बातें करूंगा।" यह सुन, कल्याणी प्रसन्न-मन कन्याको दूध पिलाने लगी। इसी समय वे

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

महापुरुष यह कहकर मन्दिरसे बाहर चले गये,—"कि मैं जब-तक नहीं आऊं, किसी प्रकारकी चिन्ता मत करना।" कुछ देर बाद वाहरसे लौट आनेपर उन्होंने देखा कि कल्याणी कन्याको तो दूध पिला चुकी है, पर अभी स्वयं नहीं पिया है। दूध ज्योंका त्यों रखा हुआ है, यह देख उस महापुरुषने कहा—"बेटी! तुमने क्यों नहीं पिया? लो, मैं बाहर जाता हूं, जबतक तुम न पी लोगी, मैं न लौटूंगा।"

यह कहकर वे महापुरुष चले ही जा रहे थे कि कल्याणीने उन्हें दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम किया।

बनवासीने पूछा—"क्या कुछ कहोगी?" कल्याणीने कहा—"मुझे दूध पीनेके लिये अनुरोध न करें—एक आपत्ति है। "मैं, नहीं पी सकती।" यह सुन वनवासीने अत्यन्त करुण स्वरमें कहा "कौनसी आपत्ति है, मुझसे कहो। मैं जङ्गलमें रहनेवाला ब्रह्मचारी हूं। तुम मेरी लड़कीके बराबर हो। कहो, मुझसे भी कहने लायक नहीं हो, ऐसी कौन-सी बात है। जब मैं तुम्हें जङ्गलसे बेहोशीकी हालतमें उठा लाया था, उस समय तुम बहुत भूखी-प्यासी मालूम पड़ती थी। बिना कुछ खाये-पीये प्राण कैसे बचेंगे।"

कल्याणीने रोते-रोते कहा—"आप देवता हैं, इसीसे आपसे कहती हूं। मेरे स्वामी अभीतक भूखे होंगे। बिना उन्हें देखे या उनके बिना खा-पी लेनेका संवाद पाये, मैं भला कैसे दूध पी सकती हूं।"

ब्रह्मचारीने पूछा—"तुम्हारे स्वामी कहां हैं?"

कल्याणी—"यह मुझे नहीं मालूम! वे दूध लाने बाहर चले गये थे। इसी समय डाकू मुझे उठा लाये।" ब्रह्मचारीने एक-एक करके कल्याणी और उसके स्वामीका सारा हाल मालूम कर लिया। कल्याणीने अपने स्वामीका नाम नहीं बतलाया, क्योंकि वह उनका नाम मुंहसे नहीं निकाल सकती थी, परन्तु ब्रह्मचारीजीने अन्य बातोंसे सब कुछ समझ लिया, पूछा—"क्या तुम्हीं महेन्द्रकी स्त्री

CC-0. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

हो ?" कल्याणीने कुछ जवाब नहीं दिया। केवल सिर झुकाये हुए वह आगमें लकड़ी उठाकर डालने लगी। ब्रह्मचारीने कहा—"मेरी बात मानो, दूध पी लो। मैं तुम्हारे स्वामीका समाचार लाने जाता हूं। तुम दूध न पीयोगी तो मैं जाऊंगा ही नहीं।

कल्याणीने कहा—"थोड़ा-सा पानी मिलेगा ?"

ब्रह्मचारीने जलके घड़ेकी ओर इशारा किया। कल्याणीने हाथ फैलाया, ब्रह्मचारीने पानी ढाल दिया। जलसे भरी हुई अंजलि ब्रह्मचारीके पैरोंके पास ले जाकर कल्याणीने कहा—"आप इसमें अपनी पदरज दे दीजिये।" ब्रह्मचारीने अपने पैरके अंगूठेसे उस जलको स्पर्श कर दिया। बस, कल्याणी उसे पी गयी और बोली-"मैंने अमृत पान कर लिया, अब और कुछ खाने-पीनेको न कहिये। स्वामीका संवाद पाये विना मुझसे कुछ भी ग्रहण नहीं किया जायगा।"

ब्रह्मचारीने कहा—"अच्छा, तुम निर्भय होकर इस देवमन्दिरमें बैठी रहो—मैं तुम्हारे स्वामीका पता लगाने जाता हूं।"

छठा परिच्छेद



रात बहुत बीत गयी है। चन्द्रदेव मध्य आकाशमें आ गये हैं। आज पूर्णमासी नहीं है। इससे प्रकाश तेज नहीं है। एक अत्यन्त विस्तीर्ण मैदानके ऊपर उस अन्धकारकी छायासे युक्त धुंधली रोशनी पड़ रही है। उस रोशनीमें मैदानका आरपार नहीं दिखाई देता। मैदानमें क्या है, कौन है, नहीं मालूम पड़ता। सारा मैदान अनन्त जन-शून्य और डरावना मालूम पड़ रहा है। रास्तेके किनारे एक छोटीसी पहाड़ी है, जिसपर आम आदिके बहुतसे पेड़ लगे हैं। पेड़ोंको पत्तियां चांदनीमें चमकती हुई हिल रही हैं, उनकी छाया काले पत्थरपर पड़कर और भी काली हो गयी है और लगा-

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

तार कांपती मालूम पड़ती है। ब्रह्मचारी उसी पहाड़ीके शिखरपर चढ़कर चुपचाप खड़े हो, न जाने क्या सुनने लगे—किस चीजकी आहट लेने लगे, नहीं कहा जा सकता। उस अनन्त प्रान्तमें कहीं कोई शब्द नहीं सुनाई पड़ता था, केवल वृक्षोंके पत्रोंकी खड़खड़ाहट सुनाई पड़ती थी। पहाड़ीके नीचे ही घना जंगल था।

ऊपर पहाड़ी, नीचे राजपथ और बीचमें जंगल था। वहींपर न जाने कैसा शब्द हुआ ; सो तो हमें नहीं मालूम, पर हां, ब्रह्मचारी उसीकी साधपर चल पड़े। घने जंगलमें प्रवेशकर उन्होंने देखा कि उस जंगलके पेड़ोंके नीचे अंधेरेमेंही बहुतसे आदमी कतार बांधे बैठे हुए हैं। वे सभी लम्बे, तगड़े, काले-काले और हथियारबन्द थे। पत्तोंके बीचसे छनकर आनेवाली रोशनी उनके पैने हथियारोंपर पड़ रही थी, जिससे वे खूब चमक रहे थे। इसी प्रकार दो सौ आदमी वहां जमा थे; पर किसीके मुंहसे बोली नहीं निकलती थी। धीरे-धीरे उनके पास पहुंचकर ब्रह्मचारीने न जाने किस बातका इशारा किया; पर न तो कोई बोला, न कोई कुछ हिलाडुला। वे सबके सामनेसे, हर एकको देखते हुए निकल गये, अंधेरेमें हर एकका चेहरा बड़े गौरसे देखते हुए चले, पर शायद वे जिसे खोज रहे थे, उसे न पा सके। खोजते-खोजते, एकको पहचानकर उन्होंने उसका अंग-स्पर्शकर कुछ इशारा किया। इशारा करतेही वह उठ खड़ा हुआ। ब्रह्मचारी उसे दूर ले जाकर खड़े हुए। वह आदमी नौजवान था। काली-काली दाढ़ी मूँछोंसे उसका चांदसा चेहरा छिपा हुआ था। वह बड़ा बलिष्ठ और अति सुन्दर पुरुष मालूम पड़ता था। गेरुआ वस्त्र पहने था और सारी देहमें चन्दन लगाये हुए था। ब्रह्मचारीने उससे कहा,—"भवानन्द ! क्या तुम महेन्द्रसिंहका कुछ पता-ठिकाना जानते हो ?"

यह सुन, भवानन्दने कहा—"महेन्द्रसिंह आज सवेरे स्त्री-कन्याके साथ घर छोड़कर जा रहे थे। रास्तेमें एक चट्टीमें—"

इतना सुनतेही ब्रह्मचारी बीचहीमें बोल उठे,—"चट्टीमें ज'

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

हुआ, वह मुझे मालूम है, पर यह तो कहो, यह किसकी कार्रवाई थी ?" भवानन्द,—"गांवके नीच जातियोंका काम है, और क्या ? इस समय सभी गाँवोंकी नीच जातियां पेटकी मारसे डाकू बन गयी हैं। आजकल कौन डाकू नहीं हो रहा है ? आज हमलोगोंने ही लूटकर अन्न पाया है, कोतवाल साहबके लिये दो मन चावल जा रहा था, हमलोगोंने उसे लूटकर वैष्णवोंको खिला दिया।"

ब्रह्मचारीने हंसकर कहा,—"मैंने चोरोंके हाथसे उसकी स्त्री-कन्याका तो बचा लिया है और इस समय उन्हें मठमें ही रख छोड़ा है। अब मैं तुम्हारे ऊपर इसका भार सौंपता हूं, कि महेन्द्र-को ढूंढ़ निकालो और उसकी स्त्री-कन्याको उसके हवाले कर दो। यहां जीवानन्द ही रहें, तो यहांका सारा काम चला जा सकता है।"

भवानन्दने स्वीकार कर लिया। ब्रह्मचारी दूसरी तरफ चले गये।

सातवां परिच्छेद

चट्टीमें बैठे-बैठे केवल सोच-विचार करते रहनेसे कोई नतीजा न निकलेगा, यही सोचकर महेन्द्र वहांसे उठे। शहरमें जाकर सरकारी अमलोंकी सहायतासे स्त्री-कन्याका पता लगा लूंगा, यही सोचकर वे उधर ही चल पड़े। कुछ दूर चलकर उन्होंने देखा कि बहुतसे सिपाही अनेक बैलगाड़ियोंको घेरे हुए चले जा रहे हैं।

११७६ सालमें बंगाल प्रान्त अंग्रेजोंके शासनाधिकारमें नहीं आया था। उस समयतक अंगरेजोंके हाथमें यहांकी दीवानी ही थी। ये लोग मालगुजारी वसूल करते थे सही, पर उस समयतक बंगालियोंके जानोमालके रक्षक नहीं बने थे। उन दिनों लगान वसूल करना तो अंगरेजोंके हाथमें था और प्रजाके प्राण और सम्पत्ति-

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

की रक्षाका भार था पापी, नराधम, विश्वासघाती और मनुष्य-कुल-कलंक मीरजाफरके हाथमें। पर मीरजाफर तो अपनी ही रक्षा नहीं कर सकता था, सारे बंगालकी रक्षा वह क्या करता? मीरजाफर अफीम खाकर पिनक लिया करता और अँगरेज लोग रुपये वसूलकर विलायतको खरीते लिख-लिखकर भेजा करते। बंगाली मरें, चाहे आठ-आठ आंसू रोया करें, इसकी किसे चिन्ता थी!

अतएव बंगालकी मालगुजारी अँगरेजोंकोही देनी पड़ती थी, किन्तु शासनका भार नवाबपर था। जहां-जहां अँगरेज लोगोंको अपनी मालगुजारी वसूल करनी पड़ती थी, वहां-वहां उन्होंने अपना एक कलक्टर मुकर्रर कर दिया था। मालगुजारी वसूल करके कलकत्ते भेज दी जाती थी। लोग भले ही खाये बिना मरें, पर मालगुजारीकी वसूली कभी बन्द नहीं होती थी। पर अब वसूलीमें कमी पड़ने लगी, क्योंकि मातावसुमती धन न दें तो कोई गढ़कर थोड़े ला सकता था!

इस बार जो कुछ वसूल हुआ था, वही बैलगाड़ीपर लादकर, सिपाहियोंके पहरेमें कलकत्ते कम्पनीके ख़जानेमें जमा करनेके लिये भेजा जा रहा था। आजकल डाकुओंका उपद्रव जोरोंपर है, यही सोचकर पचास हथियारबन्द सिपाही खुली संगीनें लिये गाड़ीके आगे-पीछे चले जा रहे थे। उनका अफसर एक गोरा था। गोरा सबके पीछे घोड़ेपर सवार था। धूपके मारे सिपाही दिनको रास्ता नहीं चलते, इसीलिये वे लोग रातको चले जा रहे थे। उन्हीं गाड़ियों और सिपाहियोंको महेन्द्रने देखा था। सिपाहियों और बैलगाड़ियोंसे रास्ता रुका देख, महेन्द्र हटकर बगलमें खड़े हो गये। तोभी सिपाहियोंने एकाध धक्का दे ही दिया। यह सोचकर कि यह समय इनसे वादविवाद करनेका नहीं है, महेन्द्र रास्तेके उस ओर, जिधर जंगल था, जाकर खड़े हो गये।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

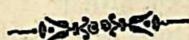
यह देख एक सिपाहीने कहा—"देखो, देखो, एक डाकू भागा जा रहा है।"

महेन्द्रके हाथमें बन्दूक देख, उसका यह विश्वास और भी दृढ़ हो गया। वह झटपट दौड़ा हुआ महेन्द्रके पास गया और उनका गला धर दबाया। इसके बाद "साला-चोर-बदमाश कहींका" कहता हुआ उसने उनको जोरसे एक घूँसा जमाया और उनके हाथसे बन्दूक छीन ली। महेन्द्रने खाली हाथ हो जानेपर भी उसे उलटकर एक घूंसा रसीद किया। उसकी मारसे सिपाहीका सिर घूम गया और वह चक्कर खाकर बेहोश हो रास्तेमें गिर पड़ा। यह देख, तीन-चार सिपाहियोंने महेन्द्रको पकड़ लिया और उन्हें घसीटते हुए सेनापति साहबके पास ले गये—बोले, इस आदमीने एक सिपाहीका खून कर डाला है। साहब चुरुट पी रहे थे, शराबका भी तेज नशा चढ़ा हुआ था, झट बोल उठे—"सालेको पकड़ ले चलो, इससे शादी कर लेना।" बेचारे सिपाहियोंकी समझमें न आया, कि वे इस बन्दूकधारी डाकूसे किस प्रकार विवाह करेंगे। पर नशा टूटनेपर साहबका मत बदल जायगा और वे हमसे फिर यह न कहेंगे, कि इससे शादी कर लो—यही सोचकर तीन-चार सिपाहियोंने रस्सेसे उनके हाथ-पैर बांध दिये और एक गाड़ीपर लाद दिया। महेन्द्रने देखा कि इतने लोगोंके साथ जोर आजमायश करना बेकार है। लड़भिड़कर छुटकारा पानेसे ही क्या लाभ है? स्त्री-कन्याके शोकसे महेन्द्र इतने कातर हो रहे थे कि उन्हें जीनेकी इच्छाही नहीं रह गयी थी। सिपाहियोंने महेन्द्रको भलीभांति गाड़ीके पहियेके पासवाले बांसमें बांध दिया। इसके बाद वे पहलेकी तरह सरकारी खजाना लिये हुये धीरे-धीरे आगे बढ़े।

——

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

आठवां परिच्छेद



ब्रह्मचारीकी आज्ञा पा भवानन्द मृदु स्वरसे हरिनाम लेते हुए उसी चट्टीकी ओर चले, जिसमें महेन्द्रने डेरा किया था। उन्होंने सोचा कि महेन्द्रका पता वहीं जानेसे लग सकता है।

उन दिनों आजकलकी-सी सड़कें नहीं थीं। छोटे-मोटे शहरोंसे कलकत्ते जाते समय मुसलमान बादशाहोंकी बनवाई हुई विचित्र सड़कोंसे हो जाना पड़ता था। महेन्द्र भी पदचिह्नसे नगर जाते समय, दक्षिणसे उत्तरकी ओर चले जा रहे थे। इसीलिये उनकी सिपाहियोंसे मुठभेड़ हो गयी थी। भवानन्द ताल पहाड़से जिस चट्टीकी ओर चले, वह भी दक्षिणसे उत्तरकी ओर थी। इसलिये कुछ ही दूर जाकर उनका सिपाहियोंसे मुकाबला हो गया। उन्होंने भी महेन्द्रकी ही तरह सिपाहियोंको रास्ता दे दिया। एक तो सिपाहियोंको सहजही इस बातका अन्देशा था, कि डाकू खजानेको लूटनेकी अवश्यही चेष्टा करेंगे, दूसरे, रास्तेमें उन्होंने एक डाकूको गिरफ्तार भी कर लिया था, इसीसे भवानन्दको फिर इस रातके समय किनारा काटकर जाते देख उनको पूरा विश्वास हो गया, कि यह भी कोई डाकूही है। फिर क्या था! सिपाहियोंने उन्हें झट गिरफ्तार कर लिया।

भवानन्दने धीरेसे मुस्कुराकर कहा,—"क्यों भाई! मुझे क्यों पकड़ते हो?"

एक सिपाहीने कहा—"तु साला डाकू है।"

भवा०—"देखते नहीं हो, मैं गेरुआधारी ब्रह्मचारी हूं। क्या डाकू ऐसे ही होते हैं।"

सिपाही—"बहुतेरे ससुरे साधु-संन्यासी चोरी-डकैती करते हैं" यह कह, सिपाहीने भवानंदको, गरदनमें हाथ डाल, धक्का देकर

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

अपनी ओर खींचा। भवानंदकी आंखें क्रोधके मारे लाल हो गयीं, पर वे और कुछ न कहकर अत्यन्त विनीत भावसे बोले—"प्रभो, आज्ञा दीजिये, मुझे क्या करना होगा।"

भवानन्दकी विनयसे संतुष्ट हो सिपाहीने कहा—"ले चल साला, यह गठरी सिरपर उठा ले।" यह कहकर उसने भवानन्दके सिरपर एक गठरी रख दी। यह देख, एक दूसरे सिपाहीने कहा, नहीं यार, ऐसा न करो। साला भाग जायगा। पहलेको जहां बांध रखा है, इसको भी वहीं बांध दो। यह सुन भवानन्दको बड़ा कौतूहल हुआ, कि देखें इन सबने किसे कहां बांध रखा है। यह सोचकर भवानन्दने सिरकी गठरी नीचे फेंक दी और जिस सिपाहीने उसके सिरपर गठरी रखी थी; उसके गालमें जोरसे चपत मारी। इसपर बिगड़कर सिपाहियोंने भवानंदको भी बांधकर महेंद्रके पास ही ला पटका। भवानन्द देखतेही पहचान गया कि यही महेन्द्रसिंह हैं।

सिपाही लोग फिर बेफिक्रीके साथ शोर-गुल मचाते हुए जाने लगे। गाड़ियां चूर्र-मुर्र करती हुई चलने लगीं। तब भवानन्दने धीमे स्वरमें, जिसे सिवा महेंद्रके और कोई न सुन सके, कहा—"महेन्द्रसिंह मैं तुम्हे पहचानता हूं और तुम्हारीही सहायताके लिये यहां आया हूं। मैं कौन हूं, यह तुम अभी सुनकर क्या करोगे? मैं जो कुछ कहूं, उसे सावधानीसे करो, तुम अपने बंधे हाथका बन्धन गाड़ीके पहियेपर रखो।

महेन्द्र बड़े अचम्भेमें पड़े, पर बिना कुछ कहे भवानंदके कहे मुताबिक काम करनेको तैयार हो गये। अंधेरेमें खिसकते हुए वे गाड़ीके पहियेके पास गये और जिस रस्सीसे उनके हाथ बंधे हुए थे उसे पहियेपर रख दिया। पहियेकी रगड़से रस्सी धीरे-धीरे कट गयी। इस तरह उन्होंने पैरोंका बंधन भी काट डाला। इस प्रकार बंधनसे मुक्त होकर वे भवानन्दके परामर्शके अनुसार चुपचाप गाड़ीपर पड़े रहे। भवानन्दने भी उसी प्रकार अपने हाथ-पैरके बन्धन काट डाले। दोनों चुप्पी साधे रहे।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

जंगलके पास राजपथपर जहां खड़े होकर ब्रह्मचारीने चारों-ओर देखा था, उसी रास्तेसे होकर इन लोगोंको जाना था। सिपाहियोंने उस पहाड़ीके पास पहुंचकर देखा, कि एक टीलेपर एक आदमी खड़ा है। नीचे आकाशमें प्रदीप्त चंद्रमाके प्रकाशमें प्रकाशमान उसका काला शरीर देख हवलदारने कहा, "यार! वह देख एक साला और भी है, पकड़ लाओ। गठरी ढोयेगा।" यह सुन एक सिपाही उसे पकड़ने चला। पर वह आदमी ज्यों-का-त्यों खड़ा रहा, जरा भी हिला डुला नहीं। सिपाहीने उसे जाकर पकड़ लिया। वह कुछ न बोला। उसे पकड़कर वह हवलदारके पास ले गया, तो भी वह कुछ न बोला। हवलदारने कहा, इसके सिरपर गठरी रख दो। सिपाहीने उसके सिरपर गठरी रख दी। उसने चुपचाप माथेपर गठरी रख ली। इसके बाद हवलदार पीछे फिरा और गाड़ीके साथ चला। इसी समय यकायक पिस्तौलकी आवाज आयी। हवलदारकी खोपड़ीमें गोली लगी और वह जमीनपर गिर पड़ा और मर गया। "इसी सालेने हवलदारको गोली मारी है" यह कहकर उस सिपाहीने उस मजदूरका हाथ पकड़ लिया। मजदूरके हाथमें उस समय भी पिस्तौल मौजूद थी, उसने झट सिरकी गठरी नीचे फेंक पिस्तौलका घोड़ा दबाकर दनसे फायर की। सिपाहीका शिर छिद गया। उसने उसका हाथ छोड़ दिया। इसी समय "हरि! हरि! हरि" का शब्द करते हुए दो सौ हथियारबन्द जवानोंने वहां आकर सिपाहियोंको घेर लिया। उस समय वे बेचारे सिपाही साहबके आनेकी राह देख रहे थे। साहबने यह सोचकर कि डाकुओंने छापा मारा है, सिपाहियोंको हुक्म दिया कि गाड़ियोंको चारों ओरसे घेरकर खड़े हो जाओ। विपत्तिके समय अंगरेजोंका नशा टूट जाता है। सिपाही चारों ओरसे गाड़ीको घेरकर हथियार लिये हुए सामनेकी ओर मुंह किए खड़े हो रहे। सेनापतिके दूसरी बार हुक्म देते ही उन लोगोंने अपनी-अपनी बंदूकें सीधी कीं। इसी समय न जाने किसने साहबकी कमरसे उनकी तलवार निकाल ली। तलवार लेकर

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

उसने झटपट उनका सिर काट लिया। साहबका सिर कटकर धड़से अलग हो गया और वे फायर करनेका हुक्म न दे सके। सबोंने देखा कि एक आदमी बैलगाड़ीपर तलवार लिये खड़ा है और "हरि! हरि! हरि!" कहता हुआ सिपाहियोंको मार डालनेका हुक्म दे रहा है। वह आदमी भवानन्द थे।

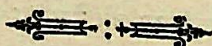
सहसा सेनापतिका सिर कटते देख और आत्मरक्षाकी आज्ञा किसीसे न पाकर सिपाही कुछ देरतक भौंचकसे चुप खड़े रह गये। इसी समय तेजस्वी डाकुओंने उनमेंसे कितनोंको मार गिराया और कितनोंहीको घायल कर डाला। इसके बाद गाड़ियोंके पास आ, उनपर जो रुपयेके बक्स लदे थे, उनपर अधिकार कर लिया। सिपाही हारसे हताश होकर भाग गये।

तब वह व्यक्ति, जो टीलेके ऊपर खड़ा था और अन्तमें जिसने इस युद्धका नेतृत्व ग्रहण कर लिया था, भवानन्दके पास आकर उसके गलेसे लिपट गया। दोनों खूब गले-गले मिले। भवानन्दने कहा, भाई जीवानन्द! तुम्हारा व्रत सार्थक हुआ।

जीवानंदने कहा—"भवानन्द, तुम्हारा नाम सार्थक हो।"

इसके बाद लूटको रकमको यथास्थान पहुंचानेका भार जीवानन्दको सौंपा गया। वे अपने अनुचरोंके साथ शीघ्र ही वहांसे अन्यत्र चले गये। भवानन्द अकेले रह गये।

नवां परिच्छेद



गाड़ीसे नीचे उतरकर महेन्द्रने एक सिपाहीका हथियार छीन लिया और युद्ध करनेही जा रहे थे कि यकायक उन्हें यह खयाल हो आया, कि ये लोग डाकू हैं और इन्होंने रुपये लूटनेके लिये ही इन सिपाहियोंपर आक्रमण किया है। यही सोचकर वे युद्धभूमिसे

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

हटकर अलग जा खड़े हुए, क्योंकि डाकुओंका साथ देनेसे उन्हें भी उनके पापका भागी बनना पड़ता। यह सोचकर वे तलवार फेंक चले ही जा रहे थे, कि इसी समय भवानन्द उनके सामने आ खड़े हुए। महेन्द्रने पूछा—"महाशय! आप कौन हैं?"

भवानन्दने कहा—"यह जानकर तुम क्या करोगे?"

महेन्द्र—"मुझे जानना जरूरी है; क्योंकि आज आपने मेरा बड़ा उपकार किया है।"

भवानंद—"इस बातका ज्ञान भी तुम्हें है, ऐसा तो मैं नहीं समझता; क्योंकि तुम युद्धके समय तलवार हाथमें रहते हुए भी दूरही खड़े रह गये। जमींदारके लड़के ऐसे ही होते हैं। दूध-घी खानेमें तो वे बड़ी बहादुरी दिखलाते हैं, पर "समरभूमि भा दुर्लभ प्राणा!"

भवानन्दकी बात पूरी होते न होते महेन्द्रने घृणाके साथ कहा—"राम! राम! यह भी कोई काम है! डकैती बड़ा बुरा काम है!"

भवानन्दने कहा,—"डकैती ही सही, पर तुम्हारा तो हमने उपकार ही किया है? अभी हम तुम्हारी और भी कुछ भलाई करना चाहते हैं।"

महेन्द्र—"तुम लोगोंने मेरा कुछ उपकार किया है, इसमें कोई सन्देह नहीं, पर अब और कौनसा उपकार करोगे? डाकुओंसे उपकार होनेकी अपेक्षा न होना ही अच्छा है।"

भवानन्द—"उपकार ग्रहण करना न करना तो तुम्हारी इच्छा-पर निर्भर है। खैर, यदि अपनी कुछ भलाई हमारे हाथों चाहते हो, तो मेरे साथ-साथ चलो, मैं तुम्हें तुम्हारी स्त्री-कन्यासे मिला दूंगा।"

महेन्द्र घूमकर खड़े हो गये और बोले,—"क्या कहा?"

भवानन्द इस प्रश्नका उत्तर दिये बिना ही चल पड़े। लाचार महेन्द्र भी उनके पीछे हो लिये। वे मनही मन सोचते जाते थे, "ये तो अजीब तरहके डाकू हैं!"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

दशवां परिच्छेद

उस चांदनी रातमें दोनों व्यक्ति उस निस्तब्ध मैदानको पारकर चले। महेन्द्र चुप थे। उनके मनमें शोक, गर्व और कौतूहलकी लहर उठ रही थी

सहसा भवानंदने अपना वेश बदला। अब भवानंद शान्त और धीर-प्रकृति संन्यासी न रहे, वह रणनिपुण वीर, वह सेनापतिका सिर काटनेवाले योद्धा न रहे। अभी जिसने पूर्ण अभिमानसे महेन्द्र-का तिरस्कार किया था, वह न रहे। उस ज्योत्स्नामयी, प्रशांत पृथ्वीके गिरि, कानन, और नदीकी शोभा देख, उनके मनमें उमङ्ग पैदा हो गयी, मानों चन्द्रमाको उदय होते देख, समुद्र खिलखिला उठा। भवानंदके मुखपर प्रसन्नताकी गहरी रेखा छा गयी, मीठी-मीठी बातें करनेके लिये उनका जी व्याकुल हो उठा। भवानंदने बातचीत करनेकी बड़ी चेष्टा की, पर महेंद्र न बोले। लाचार भवा-नंद आपही आप गाने लगे,-

वन्दौं भारतभूमि सुहावन।
सजल सफल श्यामल थल सुंदर,
मलय समीर चलय मन-भावन ॥

महेन्द्र गीत सुनकर बहुत विस्मित हुए। वे यह न समझ सके कि यह सजल सफल श्यामल थल सुन्दर मलय समीर चलय मन-भावन आदि गुणोंसे युक्ता माता कौन है। उन्होंने पूछा—"यह माता कौन है?" पर भवानन्द इसका उत्तर न दे, गाते चले गये—

हिमकर निकर प्रकाशित रजनी,
कुसुमित लता ललित छविवारी ॥
दिनमनि उदित मुदित मन पक्षी।
विकसित कमल नयन सुखकारी ॥

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

महेन्द्रने कहा—"यह देश है, माँ नहीं।"

भवानन्द बोले,—"हमलोग अन्य कोई माता नहीं जानते। 'जननी-जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।' जन्मभूमि ही हमारी माता है। हमारे मां नहीं, पिता नहीं, बन्धु नहीं, कलत्र नहीं, पुत्र नहीं, घर नहीं, द्वार नहीं—हमारी तो बस वही 'सजल सफल श्यामल थल सुन्दर मलय समीर चलय मनभावन' आदि गुणोंसे युक्ता सब कुछ हैं।"

भवानन्दके भावको समझकर महेन्द्रने कहा—"अच्छा, तो एक बार गाओ।"

भवानन्दने फिर गाना आरम्भ किया:—

वन्दौं भारतभूमि सुहावन।
सजल सफल श्यामल थल सुन्दर,
मलय समीर चलय मन-भावन॥

हिमकर निकर प्रकाशित रजनी,
कुसुमित लता ललित छविवारी।
दिनमनि उदित मुदित मन पच्छी,
विकसित कमल नयन सुखकारी॥
तीस कोटि सुत जाके गज्जित,
दुगुन करन करवाल उठाये
कौन कहत तोहि अबला जननी,
प्रबल प्रताप चहूं दिसि छाये॥
धर्म्म कर्म्म अरु मर्म्म तुही है,
शक्ति मुक्ति देनी जय करनी।
तू जननी आराध्य हमारी,
बहुबल धारिनि रिपुदल-दमनी॥
तू दुर्गा दस आयुध धारिनि,
तू ही अमला कमल-विहारिनि॥

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

सुखदा, वरदा, अतुला, अमला,
बानी-विद्या-दायिनि, तारिनि ॥
सुस्मित, सरला, भूषित विमला,
धरनी, भरनी, जननी, पाविनि ॥
"जगन्नाथ" कर जोरे वंदत,
जय जय भारतभूमि सुहाविनि ॥

महेंद्रने देखा, डाकू गाते-गाते रोने लगा। महेन्द्रने विस्मित होकर पूछा—"भाई! आप लोग कौन हैं?"

भवानंद—"हमलोग संतान हैं।"

महेंद्र—"सन्तान क्या? किसकी सन्तान हैं?"

भवा०—"मांकी संतान।"

महेंद्र—"अच्छा तो संतानका काम चोरी-डकैती करके मांकी पूजा करना है? यह कैसी मातृ-भक्ति है?"

भवा०—"हमलोग चोरी-डकैती नहीं करते!"

महेंद्र—"अभी तो तुम लोगोंने भरी गाड़ी लूट ली है?"

भवा०—"यह चोरी-डकैती थोड़े ही है? हमने किसका धन लूटा है?"

महेंद्र—"क्यों? राजाका?"

भवा०—"राजाका? यह लेनेका उसे क्या अधिकार है?"

महेंद्र—"यह राजकर था।"

भवा०—"जो राजा प्रजाका पालन नहीं करता, वह राजा कैसा?"

महेंद्र—"देखता हूं, तुम लोग किसी दिन सिपाहियोंकी तोपके सामने खड़े करके उड़ा दिये जाओगे।"

भवा०—"बहुत सुसरे सिपाहियोंको हम देख चुके हैं। आज भी तो कितने ही थे।"

महेंद्र—"अभीतक पूरी तरह पाला नहीं पड़ा है, जिस दिन पड़ जायगा, उस दिन छठीका दूध याद आ जायेगा।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

भवा०—"अच्छी बात है, मरना तो एक दिन है ही, दो बार तो मरेंगे ही नहीं।"

महेंद्र—"फिर जान-बूझकर जान देनेसे क्या लाभ ?"

भवा०—"महेंद्रसिंह ! तुम्हें देखकर मैंने समझा था, कि तुममें भी कुछ मनुष्यत्व है, पर अब मालूम हुआ कि जैसे सब हैं वैसे ही तुम भी हो। तुम केवल पेट पालनेके लिये ही पैदा हुए हो। देखो, सांप पेटके बल रेंगता है, उससे घटकर नीच जीव ही और कोई नहीं है। पर पैरतले दब जानेपर वह भी फन काढ़कर खड़ा हो जाता है। पर क्या तुम्हारा धैर्य अब भी नष्ट नहीं हुआ ? क्या मगध, मिथिला, काशी, काञ्ची, दिल्ली, काश्मीर—किसी देशकी ऐसी दुर्दशा हो रही है ? क्या इनमेंसे एक भी देशके निवासी दाने-दानेको तरसते हुए घास, पत्ते, जङ्गली लतायें, सियार-कुत्तेके मांस और आदमीतकका लाश खानेको बजबूर हो रहे हैं ? किस देशमें प्रजाको द्रव्य रखनेमें भी कल्याण नहीं है ? देवताकी उपासना करनेमें भी कल्याण नहीं है ? घरमें बहू-बेटियोंको रखनेमें कल्याण नहीं है ? बहू-बेटियोंके गर्भ धारण करनेमें कल्याण नहीं ! उनके पेट चीर कर लड़के निकाल लिये जाते हैं ! सब देशोंके राजा प्रजाका पालन करते हैं, परन्तु हमारे मुसलमान राजा क्या हमारी रक्षा करते हैं ? धर्म्म गया, जाति गयी, मान गया और अब प्राण भी जाया चाहते हैं। इन नशाखोरोंके भगाये विना हिन्दुओंकी हिंदुआई अब नहीं रह सकती।"

महेंद्र—"कैसे भगाओगे ?"

भवा०—"मार भगावेंगे ?"

महेन्द्र—"तुम क्या अकेले ही थप्पड़ मारकर भगा दोगे ?"

डाकूने फिर गाया,—

तीस कोटि सुत जाके गर्ज्जित

दुगुन करन करवाल उठाये,

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कौन कहत तोहि अबला जननी,
प्रबल प्रताप चहूँ दिशि छाये।

महेंद्र—"पर मैं तो देखता हूं, कि तुम अकेले हो।"

भवा०—"क्यों? अभी तो तुमने दो सौ आदमी देखे हैं?"

महेन्द्र—"क्या वे सभी सन्तान ही हैं?"

भवा०—"हां, सबके सब सन्तान ही हैं।"

महेन्द्र—"और कितने लोग हैं?"

भवा०—"ऐसे हजारों हैं। धीरे-धीरे और भी हो जायँगे।"

महेन्द्र—"मान लिया, कि दस बीस हजार आदमी इकट्ठे हो हो गये, तो क्या होगा? क्या इसीसे मुसलमानोंको मार भगाओगे?"

भवा०—"पलासीमें अंग्रेजोंके पास कितनी फौज थी?"

महेन्द्र—"अंग्रेजों और बंगालियोंकी क्या तुलना?"

भवा०—"क्यों नहीं? देहके जोरसे क्या होता है? देहमें अधिक जोर होनेसे क्या अधिक गोली चलाई जा सकती है?"

महेंद्र—"फिर मुसलमानों और अंग्रेजोंमें इतना फर्क क्यों?"

भवा०—"देखो, अंग्रेज प्राण जानेपर भी मैदानसे नहीं भागते और मुसलमान देहमें आंच लगते ही भाग जाते हैं और शरबत-पानीकी धुनमें लग जाते हैं। इसके सिवा अंग्रेजोंमें दृढ़ता होती है, वे जिस कामको उठा लेते हैं, उसे पूरा किये बिना नहीं छोड़ते। पर मुसलमान महा आलसी हैं। बेचारे सिपाही रुपयेके लिये प्राण देते हैं, फिर भी बेचारोंको ठीक-ठीक वेतन नहीं मिलता। इसके सिवाय साहस चाहिये। तोपका गोला एक जगह छोड़कर दस जगह तो गिरेगा नहीं, फिर एक गोलेके डरसे दस आदमियोंके भागनेका क्या काम है? पर एक गोला छूटते ही दलके दल मुसल-मान भाग खड़े होते हैं। इधर सैकड़ों गोले देखकर भी एक अंग्रेजका बच्चा नहीं भागता।"

महेन्द्र—"तो क्या तुम लोगोंमें ये सब गुण मौजूद हैं?"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

भवा०—"नहीं, पर गुण किसी पेड़में फलते नहीं; अभ्यास करनेसे ही आते हैं।"

महेन्द्र—"क्या तुम लोग अभ्यास कर रहे हो ?"

भवा०—"देखते नहीं, हम सब संन्यासी हैं ? इसी अभ्यासके लिये हमलोगोंने संन्यास ग्रहण किया है। काम पूरा होनेपर, अभ्यास भी पूरा हो जायगा और हमलोग फिर गृहस्थ हो जायंगे। हमारे भी पुत्र-कलत्र हैं।"

महेन्द्र—"तुम लोग तो इस बन्धनसे मुक्त होकर मायाका जाल काट चुके हो ?"

भवा०—"सन्तानको झूठ नहीं बोलना चाहिये। मैं तुम्हारे सामने झूठी बड़ाई न करूंगा। मायाका जाल कौन काट सकता है ? जो यह कहता है, कि मैंने मायाका फन्दा काट दिया है, उसे या तो माया व्यापीही नहीं, अथवा वह बड़ा भारी झूठा है; व्यर्थकी डींग मारता है। हमलोगोंने मायाका फन्दा नहीं काटा है, केवल व्रतकी रक्षा कर रहे हैं। क्या तुम भी सन्तान होना चाहते हो ?"

महेन्द्र—"बिना स्त्री-कन्याका सम्वाद पाये मैं कुछ नहीं कह सकता।"

भवा०—"चलो, तुम्हारी स्त्री-कन्यासे मुलाकात करा दूं।"

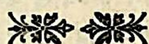
इतना कह, दोनों चल पड़े। भवानन्द फिर "वन्देमातरम्" गाने लगे। महेन्द्रका गला बड़ा सुरीला था, सङ्गीत-विद्यामें कुछ अनुराग भी था, अतएव वे भी साथ ही-साथ गाने लगे। उन्होंने देखा कि गाते-गाते आंखें आप ही आप भर आती हैं। महेन्द्रने कहा,—"यदि स्त्री-कन्याको न छोड़ना पड़े तो मुझे भी यह व्रत ग्रहण कराओ।"

भवा०—"जो यह व्रत ग्रहण करता है, उसे स्त्री-कन्या छोड़ देनी पड़ती है। यदि तुम यह व्रत ग्रहण करोगे, तो स्त्री-कन्यासे न मिल सकोगे। हां, उसकी रक्षाका पूरा बन्दोबस्त किया जायगा, परन्तु व्रतकी सफलतापर्यंन्त तुम उनका मुख देख न सकोगे।"

महेंद्र—"तब तो मैं यह व्रत न लूंगा।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

ग्यारहवां परिच्छेद



रात बीती, सवेरा हुआ। वह निर्जन वन जो अबतक अंधकारमय और सूनसान था, प्रकाशमय हो गया और पक्षियोंकी चहचहाहटसे आनन्दमय हो उठा। उसी आनन्दमय प्रभातमें, उस आनन्द-काननके 'आनन्दमठ' में सत्यानन्द ब्रह्मचारी मृगचर्मपर बैठे सन्ध्या कर रहे हैं। पासमें जीवानन्द बैठे हुए हैं। इसी समय भवानन्द महेंद्रसिंहको साथ लिए हुए आ पहुंचे। पर ब्रह्मचारीजी एकाग्रचित्त सन्ध्या कर रहे थे, इससे किसीको बोलनेका साहस न हुआ। कुछ देर बाद जब इनकी संध्या समाप्त हुई, तब भवानन्द और जीवानन्द दोनोंही उन्हें प्रणाम कर, उनके पैरोंकी धूल सिरपर चढ़ा, विनम्र होकर बैठ रहे। सत्यानन्दने भवानन्दको इशारेसे अपने पास बुलाया और उन्हें बाहर ले गये। क्या बातचीत हुई, नहीं मालूम, पर जब वे दोनों मन्दिरमें लौट आये, तब ब्रह्मचारीने अपने मुंहपर दयाभरी हंसी लाकर महेंद्रसे कहा,—"बेटा! मैं तुम्हारे दुःखसे स्वयं बड़ा दुःखी हो रहा हूं। कल एकमात्र दीनबन्धु भगवानकीही दयासे मैं तुम्हारी स्त्री-कन्याके प्राण बचा सका हूं।" यह कह, ब्रह्मचारीने कल्याणीकी रक्षाका सारा हाल कह सुनाया। इसके बाद बोले,—"चलो, अब वे दोनों जहां बैठी हैं, वहीं तुम्हें ले चलूंगा।"

यह कह, ब्रह्मचारीजी आगे-आगे चले और महेंद्र उनके पीछे। दोनों देवालयके भीतर गये। वहाँ पहुंचकर महेंद्रने देखा, कि बड़ाही लम्बा-चौड़ा और ऊंचा कमरा है। उस बालसूर्यकी किरणोंसे जब साराका सारा जंगल प्रस्फुटित मणिकी भांति जगमगा रहा है, उस लम्बे-चौड़े कमरेमें प्रायः अंधेराही छाया हुआ है। पहले महेंद्रको यह न मालूम पड़ा, कि उस घरमें क्या रखा है, पर आंखें गड़ाकर

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

देखनेसे उन्हें दिखलाई पड़ा कि एक विशाल चतुर्भुज मूर्त्ति विराजमान है, जिसके चारों हाथोंमें शंख, चक्र, गदा, पद्म विराजमान हैं, हृदयपर कौस्तुभमणि शोभा पा रही है और सामने सुदर्शनचक्र मानों घूम रहा है। सामने दो सिरकटी मूर्त्तियां हैं—जिनके शरीर रक्तरंजित हैं, सामने पड़ी हुई हैं, जो शायद मधु और कैटभकी हैं। बाईं ओर बिखरे केश, कमलकी मालासे सुशोभित, लक्ष्मी भयभीतसी खड़ी हैं। दाहिनी ओर सरस्वती पुस्तक, वीणा और मूर्त्तिमत् रागरागिनियोंसे घिरी हुई खड़ी हैं। विष्णुकी गोदमें एक मोहनी मूर्त्ति पड़ी हुई है, जो लक्ष्मी और सरस्वतीसे कहीं अधिक सुन्दरी और ऐश्वर्य और प्रतापमें बढ़ी-चढ़ी मालूम पड़ती है। गन्धर्व, किन्नर, देव, यक्ष; सब उनकी पूजा कर रहे हैं। ब्रह्मचारीने अति गम्भीर और अति भीत स्वरसे पूछा—"क्यों महेन्द्र! सब देख रहे हो न?"

महेन्द्र—"हां, देख रहा हूं।"

ब्रह्म०—"विष्णुकी गोदमें कौन है?"

महेन्द्र—"देखता तो हूं, पर वे कौन हैं।"

ब्रह्म०—"मां।"

महेन्द्र—"मां कौन?"

ब्रह्म०—"हमलोग जिसकी सन्तान हैं।"

महेन्द्र—"वे कौन हैं?"

ब्रह्म—"समय आनेपर उन्हें पहचान लोगे, बोलो, "वन्दे-मातरम्"। अब चलो, तुम्हें और कुछ दिखलाऊं।"

यह कह, ब्रह्मचारी उन्हें एक दूसरे कमरेमें ले गये। वहां जाकर महेन्द्रने देखा, कि एक अपूर्व, सर्वाङ्गसम्पन्ना, सर्वाभरणभूषिता जगद्धात्रीकी मूर्त्ति रखी है। महेन्द्रने पूछा—"ये कौन हैं?"

ब्रह्म०—"मां, जैसी पहले थीं, उन्हींकी यह मूर्त्ति है।"

महेन्द्र—"मांने हाथी और सिंह आदि जंगली जानवरोंको पैरों तले कुचलकर जंगली जानवरोंके रहनेके स्थानमें अपना पद्मासन जमाया था। उस समय वह सर्वालङ्कारभूषिता और हास्यमयी

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

सुन्दरी थीं। इनकी बाल सूर्यकी तरह कान्ति थी, ये सब ऐश्वर्यों से भरी पूरी थीं। इन्हें प्रणाम करो।"

महेन्द्रने बड़ी भक्तिसे जगद्धात्रिरूपिणी मातृभूमिको प्रणाम किया। तब ब्रह्मचारीने उन्हें एक अंधेरी सुरंग दिखलाते हुए कहा—"इसी रास्तेसे चले आओ।" यह कह वे स्वयं आगे-आगे चले। महेन्द्र डरते-डरते उनके पीछे हो लिये। भूगर्भके अंधेरे कमरेमें न जाने कैसी रोशनी आ रही थी। उस हलकी रोशनीमें उन्होंने एक काली मूर्त्ति देखी।

ब्रह्मचारीने कहा,—"देखो, यह मांका वर्तमान रूप है।"

महेन्द्रने डरते हुए कहा,—"मां काली हो गयी हैं?"

ब्रह्म०—"हां, काली ही हो गयी हैं—एकदम अन्धकारसे घिरी हुई कालिमामयी हो रही हैं। इनका सर्वस्व लुट गया है, इसीसे नंगी हो रही हैं। आज सारा देश श्मशान-तुल्य हो रहा है। इसीलिये मांने कंकालकी माला धारण कर ली है। अपने सौभाग्यको अपनेही पैरोंतले कुचल रही हैं। हाय मां!" यह कहते-कहते ब्रह्मचारीकी आंखोंसे आंसुओंकी धारा बह चली।

महेन्द्रने पूछा—"हाथमें खड्ग-खप्पर क्यों है?"

ब्रह्म०—"हम उनकी सन्तान हैं, इसीसे हमने मांके हाथमें यही अस्त्र दे दिये हैं। बोलो—वन्दे मातरम्।"

"वन्दे मातरम्" कहकर महेन्द्रने कालीको प्रणाम किया। तब ब्रह्मचारीने कहा,—"इधर आओ।" यह कह, वे दूसरी सुरंगमें घुसे और उसी राहसे ऊपर चढ़ने लगे। सहसा उनकी आंखें प्रातःकालके सूर्यकी किरणोंसे चमक उठीं। चारों ओरसे पक्षी सुरीले गीत गाने लगे। महेंद्रने देखा कि एक संगमर्मरके बने हुए लम्बे-चौड़े मन्दिरके अन्दर एक सोनेकी बनी हुई दशभुजी मूर्त्ति, बालसूर्यकी किरणोंसे देदीप्यमान मानों हंस रही है। ब्रह्मचारीने प्रणामकर कहा,—"देखो, मांका यही भविष्य रूप होगा। दशों दिशाओंमें दशों भुजाएं फैली हुई हैं, जिनमें हथियारके स्थान

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

तरह-तरहकी शक्तियाँ सुशोभित हैं, पैरोंतले शत्रु विमर्दित होकर पड़ा हुआ है, उनके चरणोंकी सेवा करनेवाले बड़े-बड़े वीरकेसरी शत्रु-संहार करनेमें लगे हुए हैं। "दिग्भुजा" कहते-कहते सत्यानन्दका गला भर आया और वे रोने लगे,—"दिग्भुजा, नाना आयुधधारिणी शत्रुमर्दिनी, वीरेन्द्रपृष्ठ-विहारिणी, दक्षिण भागमें भाग्यरूपिणी लक्ष्मी और वाम भागमें वाणी, विद्या-विज्ञान-दायिनी सरस्वती मौजूद हैं। साथही बलरूपी कार्तिकेय और कार्य-सिद्धिरूपी गणेश भी विराजमान हैं। आओ; हम दोनोंही मांको प्रणाम करें।"

तब वे दोनों व्यक्ति ऊपरको सिर उठा, हाथ जोड़, एक स्वरसे प्रार्थना करने लगे।

"सर्वमंगलमांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके !
शरण्ये त्र्यम्बिके गौरि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते।"

दोनों व्यक्तियोंने भक्ति-भावसे उन्हें प्रणाम किया। तब महेन्द्रने गद्गद् कंठसे पूछा,—"मांकी यह मूर्त्ति कब दिखाई देगी ?"

ब्रह्मचारीने कहा,—"जिस दिन मांकी सभी सन्तान उन्हें माँ कहकर पुकारने लगेंगी; उसी दिन वे प्रसन्न होंगी।"

सहसा महेन्द्र पूछ बैठे,—"मेरी स्त्री-कन्या कहां हैं ?"

ब्रह्मचारी—"चलो, दिखला दूं।"

महेन्द्र—"उन्हें एक बार देखकर ही मैं बिदा कर दूंगा।"

ब्रह्मचारी—"क्यों ?"

महेन्द्र—"मैं यह महामन्त्र ग्रहण करूंगा।"

ब्रह्म०—"उन्हें कहां भेजोगे ?"

महेन्द्र कुछ देर सोचनेके बाद बोले—"मेरे घरपर कोई नहीं है और कोई दूसरा स्थान भी नहीं है। इस महामारीके जमानेमें उन्हें रखनेको और स्थान ही कहां पाऊंगा।"

ब्रह्म०—"जिस राहसे तुम यहां आये हो, उसी राहसे मन्दिरके बाहर जाओ। मन्दिरके दरवाजेपर ही तुम्हारी स्त्री और कन्या बैठी हैं। कल्याणीने अबतक भोजन नहीं किया है। जहां वे दोनों

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

मां-बेटी बैठी हैं, वहीं खाने-पीनेकी चीजें भी रखी हैं। उन्हें खिला-पिलाकर, तुम्हारी जो इच्छा हो करना। अब तुम हममेंसे किसीको न देख सकोगे। तुम्हारा मन यदि ऐसा ही रहा, तो उपयुक्त समय आनेपर मैं आ मिलूंगा।"

यह कहकर, ब्रह्मचारी न जाने किस पथसे जाकर अन्तर्धान हो गये। महेन्द्रने बतलाये हुए रास्तेसे बाहर आते ही देखा कि कल्याणी कन्याको गोदमें लिये नाट्यशालामें बैठी है।

इधर सत्यानन्द एक दूसरी सुरंगसे नीचे उतरकर तहखानेके एक कमरेमें चले आये। वहां जीवानन्द और भवानन्द रुपये गिन-गिनकर उनकी अलग-अलग, गड्डियां लगा रहे थे। उस घरमें ढेरके ढेर सोना, चांदी, तांबा, हीरा, मूंगा और मोती आदि रखे हुए थे। ये दोनों कल रातके लूटे हुए रुपयोंकी गड्डियां लगानेमें लगे हुए थे। सत्यानन्दने कमरेमें प्रवेश करते ही कहा—"जीवानन्द! महेंद्र भी हमारे दलमें आनेवाला है। उसके मिल जानेसे सन्तानोंका विशेष उपकार होगा; क्योंकि उसके बापदादोंका संचित सारा धन मांकी सेवामें लग सकेगा, पर जबतक वह काय-मनोवाक्यसे मातृभक्त नहीं बन जाता उसे ग्रहण न करना। अपना-अपना काम करके तुम लोग भिन्न-भिन्न समयपर उसका अनुसरण करते रहना। अवसर देखकर उसे श्रीविष्णु भगवानके मण्डपमें ले आना। समय-कुसमयमें उसकी रक्षा बराबर करते रहना; क्योंकि दुष्टोंका शासन करना जैसा धर्म है वैसा ही शिष्टोंकी रक्षा करना भी है।

बारहवां परिच्छेद

अनेक कष्ट सहनेके बाद महेन्द्र और कल्याणीकी मुलाकात हुई। कल्याणी फूट-फूटकर रोने लगी। महेन्द्र तो और भी फूट-फूटकर रोने लगे। रोने-धोनेके बाद आंखें पोंछने लगे। जितना अधिक आंखें पोंछते

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

उतने ही अधिक आंसू उमड़ आते। आंसू रोकनेके लिये ही कल्याणीने खाने-पीनेकी बात छड़ दी। ब्रह्मचारीके अनुचर जो कुछ भोजन रख गये थे, उसको खानेके लिये उसने महेन्द्रसे अनुरोध किया। दुर्भिक्षके दिनोंमें अन्य व्यञ्जन कहां मिलते हैं। पर देशमें जो कुछ है, वह 'सन्तानों'के लिये सुलभ ही है। उस जंगलमें साधारण मनुष्यकी पहुंच नहीं थी, इसलिये इन दुर्गम वनके फलोंको कोई नहीं लेनें आता था, नहीं तो जहां-कहीं फल दिखाई पड़ते थे. भूखसे तड़पते हुए लोग उसे तोड़कर खा जाते थे। इसीसे ब्रह्मचारीके अनुचर अनेक तरहके जंगली फल और थोड़ा-सा दूध रख गये थे। इन संन्यासियोंके बहुत-सी गायें भी थीं। कल्याणीका रूहा मान, महेन्द्रने पहले तो स्वयं कुछ फलाहार किया। इसके बाद दूधमेंसे थोड़ासा लड़कीको पिलाया और थोड़ासा बचाकर रख दिया, कि फिर पिलायेंगे। इसके बादही दोनोंको नींद आने लगी और उन्होंने निश्चिन्त होकर कुछ देर विश्राम किया। नींद टूटनेपर दोनोंमें इस बातकी सलाह होने लगी कि अब कहाँ चलना चाहिये। कल्याणीने कहा;—"विपदकी बात सोचकर ही घर छोड़कर बाहर निकले थे। पर अब देखती हूं कि घरसे तो बाहरही विपद बहुत है। तब चलो, घर ही लौट चलें।" महेन्द्रका भी यही अभिप्राय था। वे चाहते थे कि कल्याणीको घरपर रख किसीको उसकी देखरेखके लिये ठीक कर चला आऊं और इस परम रमणीय अलौकिक, पुनीत मातृसेवा-व्रतमें लग जाऊं। इसलिये वे झट राजी हो गये। इस तरह दोनों व्यक्ति पूरी तरह विश्रामकर कन्याको गोदमें ले पदचिह्न ग्रामकी ओर चले।

पर उस अगम वनसे पदचिह्न जानेका रास्ता उन्हें नहीं मिला। उन्होंने सोचा था कि जंगलसे बाहर निकलते ही रास्ता मिल जायगा, पर यहां तो बाहर निकलनेका ही रास्ता न मिला। वे बड़ी देरतक जंगलके भीतर भटकते रहे; फिर-फिरकर उसी मठमें लौट आते थे। कहींसे रास्ता नहीं दिखाई देता था। सामने ही एक वैष्णवोंका वाना पहने हुए ब्रह्मचारी खड़े हंस रहे थे।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

उन्हें देख, महेन्द्रने झुंझलाकर कहा—"बाबाजी ! हंसते क्यों हो ?"

बाबाजी—"तुम लोग इस वनमें कैसे आये ?"

महेन्द्र—"चाहे जैसे आये, पर आ गये हैं।"

बाबाजी—"फिर बाहर क्यों नहीं निकल पाते ?" इतना कह वे फिर हंसने लगे।

महेन्द्र झल्ला उठे, बोले,—"बड़े हंसनेवाले बने हो; पर क्या तुम स्वयं बाहर निकल सकते हो ?"

वैष्णव बाबाने कहा,—"हां, मेरे साथ आओ; मैं तुम्हें अभी रास्ता दिखाये देता हूं। तुम दोनों अवश्य ही किसी संन्यासी या ब्रह्मचारीके साथ यहां आये हो, नहीं तो इस मठमें आने-जानेका रास्ता और किसीको नहीं मालूम है।"

यह सुनकर महेन्द्रने पूछा—"तो क्या आप भी सन्तान हैं ?"

वैष्णवने कहा—"हां, मैं भी सन्तानही हूं। आओ मेरे साथ-साथ चले आओ। मैं तुम लोगोंको रास्ता दिखलानेके लिये ही यहां खड़ा हूं।"

महेन्द्र—"आपका नाम क्या है ?"

वैष्णव—"धीरानन्द गोस्वामी।"

यह कह, धीरानन्द आगे-आगे चले और महेन्द्र तथा कल्याणी उनके पीछे। बड़े टेढ़े रास्तेसे उन्हें जंगलके बाहर निकालकर धीरानंद फिर उसी वनमें चले आये।

आनंदवनसे बाहर हो कुछ दूर जाते ही उन्हें हरे-भरे वृक्षोंसे भरा हुआ मैदान दिखाई दिया। एक ओर तो मैदान था और दूसरी ओर जंगलके बगलसे सड़क चली जाती थी। एक स्थानपर वनके बीचमेंसे बहती हुई एक छोटी-सी नदी कल-कल कर रही थी। उसका जल निर्मल और अति नीले रंगका था। नदीके दोनों ओरके सुन्दर शोभामय नाना भांतिके वृक्षोंकी छाया जलपर पड़ रही थी। तरह-तरहके पक्षी वृक्षोंपर बैठे हुए कलरव कर रहे

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

थे। वह मीठी-मीठी बोलियां नदीके मधुर कल-कल शब्दमें मिल जाती थीं। उसी तरह वृक्षोंकी छाया और जलके रंग भी आपसमें मिल गये थे। कदाचित् कल्याणीका मन भी उस छायामें रम गया। कल्याणी एक वृक्षके नीचे बैठ गयी और स्वामीसे भी बैठनेके लिये अनुरोध करने लगी। कल्याणीने स्वामीकी गोदसे कन्याको लेकर अपनी गोदमें बैठा लिया। इसके बाद स्वामीका हाथ अपने हाथमें लिये हुए वह कुछ देरतक चुपचाप बैठी रही। फिर पूछा,—"आज मैं आपको बड़ा उदास देख रही हूं। सिरपर जो विपद् आयी थी, वह तो टलही गयी, फिर यह उदासी किस लिये?"

महेन्द्रने एक लम्बी सांस लेकर कहा,—"अब मैं अपने आपेमें नहीं हूं। क्या करूं, कुछ समझमें नहीं आता।"

कल्याणी—"क्यों?"

महेन्द्र—"तुम्हारे खो जानेपर मेरे ऊपर जो बीती, उसका हाल कहता हूं सुनो।"

यह कह महेन्द्रने सारी कथा ब्यौरेवार कह सुनायी।

कल्याणीने कहा,—"मेरे ऊपर भी बड़े सङ्कट आये। मैं भी बड़ी मुसीबतमें पड़ गयी थी। पर वह सब सुनकर क्या लाभ, इतना दुःख होनेपर भी मुझे कैसे नींद आ गयी थी, समझमें नहीं आता; कल रात पिछले पहर मुझे नींद आ गयी थी। नींदमें मैंने स्वप्न देखा, किस पुण्य-बलसे मैंने वैसा स्वप्न देखा, नहीं कह सकती। मैंने देखा कि मैं एक अपूर्व स्थानमें पहुंच गयी हूं। वहां मिट्टीका नामनिशान नहीं है—है केवल ज्योति—अत्यन्त शीतल, तड़ित प्रवाहकी तरह अत्यन्त मधुर ज्योति। वहां मनुष्य नहीं हैं—केवल ज्योतिर्मयी मूर्तियांही दिखाई पड़ती हैं। वहां किसी तरहका शब्द नहीं होता—केवल कहीं दूरपर मधुर गीतवाद्यकी तरह कोई शब्द सुनाई पड़ता है। नवविकसित लक्ष-लक्ष मल्लिका-मालती तथा गन्धराजकी गन्ध चारों ओर फैली है। वहां सबसे ऊपर, सबके दर्शनीय स्थानमें न जाने कौन बैठा है, मानों नील पर्वत अग्निके

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

समान भीतर-ही-भीतर मन्द-मन्द जल रहा हो। उनके सिरपर बड़ा भारी दीप्तमान किरीट शोभा पा रहा है। उनके चार हाथ हैं और उनके दोनों तरफ कौन थीं, मैं नहीं पहचान सकी। कदाचित् वे स्त्री-मूर्तियां थीं, किन्तु उनमें इतना रूप, इतनी ज्योति, इतना सौरभ था कि मैं तो उनकी ओर देखतेही विह्वलासी हो गयी। और अच्छी तरह आंखें लगाकर न देख सकी और न पहचान सकी, कि ये कौन हैं। उन्हीं चतुर्भुज देवताके पास एक और स्त्री-मूर्ति थी। वह भी ज्योतिसे जगमगा रही थी; पर चारों ओर मेघ छा रहे थे, इसलिये ज्योति अच्छी तरह फूटकर बाहर नहीं निकल रही थी—धुंधली दिखाई दे रही थी। इससे मालूम होता था, कि वह कुछ खिन्नसी हो रही है। मुझे ऐसा मालूम पड़ा मानों कोई अत्यन्त रूपवती स्त्री मार्मिक वेदनाके कारण रो रही है। मन्द-सुगन्धि युक्त वायुकी तरंगोंमें प्रवाहित मैं भी उसी चतुर्भुजी मूर्तिके सिंहासनके सामने आ गयी। तब मानों उसी दुःखिता और मेघमण्डिता स्त्रीने मेरी ओर इशारा करते हुए कहा—"बस यही है वह, जिसके कारण महेन्द्र मेरी गोदमें नहीं आता।" इसी समय मुझे सुरीली मधुर ध्वनि सुनाई पड़ी। उस चतुर्भुजने मानों मुझसे कहा—"तुम स्वामीको छोड़कर मेरे पास चली आओ। यही तुम लोगोंकी मां है—तुम्हारा स्वामी इनकी सेवामें लगनेवाला है। यदि तुम अपने स्वामीके पास रहोगी, तो वह इनकी सेवा न कर सकेगा। तुम चली आओ।" मैं रो पड़ी और बोली, कि स्वामीको छोड़कर कैसे आऊँ? एक बार फिर वही मधुर ध्वनि सुनाई पड़ी कि मैं ही स्वामी, मैं ही माता, मैं ही पिता, मैं ही पुत्र और मैं ही कन्या हूं—तुम मेरे निकट आ जाओ। इसपर मैंने क्या उत्तर दिया, याद नहीं है, क्योंकि इसके बाद ही मेरी नींद टूट गयी।" यह कहकर कल्याणी चुप हो गयी।

महेन्द्र भी विस्मय और भयसे चुप हो रहे। पेड़के ऊपर दहियल नामक पक्षी बोल उठा, पपीहा 'पी कहां'के शोरसे आसमान गुंजाने लगा, कोयलकी कूक दशों दिशाओंमें गूंज गयी, भृंगराज अपने

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

सुरीले कण्ठसे कानन्को प्रतिध्वनित करने लगे। सामने नदी कलकल शब्द कर रही थी। हवा जंगली फूलोंकी भीनी-भीनी सुगन्धमें सराबोर थी, बीच-बीचमें कहीं-कहीं नदीके जलमें सूर्यकी किरणें झलमला रही थीं। कहीं ताड़के पत्तोंका मृदु-मधुर मर्मर शब्द हो रहा था। दूरपर नीले रङ्गकी पर्वत-श्रेणी दिखाई दे रही थी। इन सब सौन्दर्योंका आनन्द लेते हुए दोनों बड़ी देरतक चुपचाप बैठे रहे। इसके बाद कल्याणीने पूछा—"क्या सोच रहे हो?"

महेन्द्र—"यही, कि क्या करूँ। स्वप्न केवल निभीषिका मात्र है, यह आपही मनमें उत्पन्न होता और आपही लय हो जाता है। वह और कुछ नहीं—जीवनका जल-बिम्ब मात्र है। चलो, घर चलें।"

कल्याणी—"देवता तुम्हें जहां जानेको कहें वहीं जाओ।" यह कहकर कल्याणीने कन्याको स्वामीकी गोदमें दे दिया।

महेंद्रने कन्याको गोदमें लेकर पूछा—"और तुम—तुम कहां जाओगी?"

कल्याणीने दोनों हाथोंसे आंखें मूंद, सिर थामकर कहा,—"मुझे भी देवता जहां जानेको कहेंगे, वहीं चली जऊंगी।"

महेंद्र चौंककर बोले—"वह जगह कहां है? वहीं किस तरह?"

कल्याणीने स्वामीको जहरकी डिबिया दिखला दी।

महेन्द्रने विस्मित होकर पूछा—"क्या तुम विष खाओगी?"

"खानेका विचार कर चुकी थी, परन्तु"—इतना कहकर कल्याणी कुछ सोचने लगी। महेन्द्र उसके मुंहकी ओर ताकते रह गये। उन्हें एक-एक पल एक-एक वर्ष मालूम पड़ने लगा। कल्याणीने पूरी बात नहीं कही। यह देख महेन्द्रने पूछा—"तुम क्या कह रही थी, कहो न?"

कल्याणी—"खानेका इरादा कर चुकी थी, पर तुम्हें और सुकुमारीको छोड़कर वैकुण्ठमें भी जानेकी मेरी इच्छा नहीं होती। मुझसे मरा न जायगा।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

यह कह कल्याणीने विषकी डिब्रिया जमीनमें रख दी। फिर दोनों व्यक्ति भूत और भविष्यत्‌के सम्बंधमें बातें करने लगे। ध्यान बँट गया। लड़कीने खेलते-खेलते विषकी डिबिया उठा ली, दोनोंमेंसे किसीने न देखा।

सुकुमारीने उस डिबियाको कोई उम्दा खिलौना समझा। उसने एक बार उसे बायें हाथसे पकड़कर दाहिने हाथसे जोरसे दबाया। फिर दाहिने हाथसे पकड़कर बायें हाथसे दबाया। इसके बाद दोनों हाथोंसे उसे खोलनेकी चेष्टा करने लगी। अन्तमें डिबिया खुल गयी और विषकी गोली नीचे गिर पड़ी।

गोली उसके पिताके कपड़ेपर गिरी थी। उसे देखकर सुकुमारी-ने सोचा कि यह कोई और भी अच्छा खिलौना है। डिबिया छोड़कर उसने गोलीकी ओर हाथ बढ़ाया और उसे झटपट उठा लिया।

गोली उठाकर उसने मुंहमें डाल ली।

"क्या खाया ? क्या खाया ? हाय, सर्वनाश हुआ।" यह कह कल्याणीने झट उसके मुंहमें उंगली डाल दी। दोनोंने देखा कि विषकी डिबिया खाली पड़ी है। इसे भी एक तरहका खेल समझकर सुकुमारी अपनी नन्ही-नन्ही दंतुलियां निकाल अपनी मांकी ओर देखकर हंसने लगी। इतनेमें विषकी गोली जो कसैली मालूम पड़ी तो सुकुमारीने झट मुंह बा दिया और कल्याणीने गोली उसके मुंहसे बाहर निकालकर फेंक दी। बालिका रोने लगी।

गोली ज्यों-की-त्यों जमीनमें पड़ी रही। कल्याणी दौड़ी नदीसे आंचल भिगो लायी और कन्याके मुंहमें जल निचोड़ने लगी। उसने अधीर होकर महेन्द्रसे पूछा,—"क्या कुछ जहर पेटमें भी चला गया है ?"

सबसे पहले सन्ततिकी दुष्कामनाही मां-बापके ध्यानमें आती है। जहां अधिक प्रेम होता है, वहां आशंका भी अधिक होती है। महेंद्रने पहले नहीं देखा था, कि विषकी गोली कितनी बड़ी थी।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

यह प्रश्न सुन, उसे अच्छी तरह देख-भालकर बोले,—"हां, मालूम होता है, कि बहुतसा खा गयी है।"

कल्याणीको भी सहजही इस बातका विश्वास हो गया। वह भी बड़ी देरतक विषकी गोलीका देखती रही। थूकके साथ विषका कुछ अंश पेटमें चला गया था, अतएव विषके प्रभावसे वह बेहोश होने लगी। वह छटपटाने लगी और रोती-रोती एकदम बेसुध हो गयी। तब कल्याणीने स्वामीसे कहा,—"अब क्या देखते हो? सुकुमारीको देवताओंने बुला लिया। वह जिस राहपर गयी है, मुझे उस राहपर जाना है।" यह कह, कल्याणी उस विषकी गोलीको मुंहमें डालकर तुरन्त ही निगल गयी।

महेन्द्र रो पड़े, बोले,—"हाय! कल्याणी! तुमने यह क्या कर डाला?"

कल्याणीने कुछ उत्तर न दिया, स्वामीके पैरोंकी धूल माथे चढ़ाकर बोली,—"स्वामी, अब बातें करना व्यर्थ है, मैं तो चली।"

"हाय! कल्याणी! यह तुमने क्या कर डाला!" यह कहकर महेन्द्र जार-जार रोने लगे। कल्याणीने बड़ेही धीमे स्वरमें कहा,—"मैंने जो कुछ किया है, अच्छा ही किया है। तुच्छ नारीके कारण तुम्हें देवताके कार्यसे विमुख होना पड़ता। मैंने देवताकी बात टाल देनी चाही थी, इससे मेरी लड़कीके प्राण गये। अधिक अवज्ञा करती, तो कदाचित् तुम्हींको खोना पड़ता।"

महेन्द्रने रोते हुए कहा,—"मैं तुम्हें कहीं रख आता। जब हमलोगोंका कार्य सिद्ध हो जाता, तब फिर तुम्हें लेकर सुखसे जीवन बिताता। कल्याणी! तुम्हारेही दमतक तो मेरा इस दुनियांसे नाता था। तुमने आज यह क्या कर डाला? जिस हाथके बलपर मैं तलवार पकड़ता वही हाथ तुमने आज काट डाला! तुम्हारे बिना अब मैं व्यर्थ हूं।"

कल्याणी,—"तुम मुझे कहां ले जाकर रख आते? ऐसा कौन स्थान रह गया है? मां, बाप, भाई, बन्धु सभी तो इस अकाल चक्कर-

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

में पड़कर मर गये। फिर मेरे लिये किसके घरमें जगह थी, जहां ले-जाते ? मुझे कौन-सी राह ले जाते, तुम्हीं कहा ? मैं तुम्हारे गलेकी फांस थी, मर गयी, बला टली। अब मुझे आशीर्वाद दो, कि मैं मरकर उसी ज्योतिर्मय लोकमें जाऊं और वहीं तुमसे मिलूं।" यह कहकर कल्याणीने फिर स्वामीकी पदरज माथेपर चढ़ाया। महेन्द्र कुछ बोल न सके, फिर रोने लगे। कल्याणी अति मृदु, अति मनोहर अति स्नेहमय कण्ठसे फिर कहने लगी,—"देवताकी इच्छाको कौन टाल सकता है ? उन्होंने मुझे संसारसे विदा होनेको आज्ञा दी है, अब मैं चाहूं भी तो ठहर नहीं सकती। यदि मैं अपने आप विष खाकर न मरती तो मुझे और ही कोई मारता। इसलिये प्राण देकर मैंने कुछ बुरा काम नहीं किया। तुमने जो व्रत ग्रहण किया है, उसे काय-वचन-मनसे सिद्ध करो, इससे तुम्हें पुण्य होगा। इसी पुण्यके प्रभावसे मुझे स्वर्ग मिलेगा। फिर हम तुम इकट्ठे हो अनन्त कालतक स्वर्गका सुख भोग करते रहेंगे।" इधर सुकुमारीने एक बार वमन किया, इससे वह कुछ सम्हल गयी। उसके पेटमें इतना विष नहीं पहुंचा था, जिससे जान निकल जाती। पर उस समय महेन्द्रका ध्यान उसकी ओर नहीं था। वे कन्याको कल्याणीकी गोदमें रख, दोनोंको गाढ़ आलिंगन कर रोने लगे। उसी समय जंगलके भीतरसे मृदु, पर मेघकी तरह गम्भीर शब्द सुनाई दिया,—

"हरे ! मुरारे ! मधुकैटभारे !
गोपाल ! गोविन्द ! मुकुन्द ! शौरे !"

उस समय कल्याणीको नस-नसमें विष प्रवेश कर रहा था, उसकी चतना कुछ-कुछ लुप्त हो रही थी। उसने बेहोशीकीही हालतमें सुना ; मानों उसी वैकुण्ठमें उसी वंशीकी सुरीली तानमें कोई गा रहा है:—

"हरे ! मुरारे ! मधुकैटभारे !
गोपाल ! गोविन्द ! मुकुन्द ! शौरे !"

कल्याणी भी उसी बेहोशीकी हालतमें अपने सुमधुर कण्ठसे

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

पुकार उठी,--"हरे ! मुरारे ! मधुकैटभारे !" उसने महेन्द्रसे कहा,—"बोलो—हरे ! मुरारे ! मधुकैटभारे ।"

जंगलसे आते हुए उस मधुर स्वर तथा कल्याणीके मुंहसे निकले हुये मधुर स्वरसे विमुग्ध हो, ईश्वरकी सहायतामें विश्वासकर, कातर-चित्त महेन्द्र भी कह उठे,—

"हरे ! मुरारे ! मधुकैटभारे !"

फिर तो चारों ओरसे यही ध्वनि उठने लगी-"हरे ! मुरारे ! मधुकैटभारे !" मानों, पेड़ोंपर बैठे पक्षी भी कहने लगे:—

"हरे ! मुरारे ! मधुकैटभारे !"

नदीके कल-कल नादसे भी मानों यही ध्वनि निकलने लगी,

"हरे ! मुरारे ! मधुकैटभारे !"

उस समय महेन्द्र अपना सारा शोक-सन्ताप भूल गये । पागलों-की तरह कल्याणीके सुर-में-सुर मिलाकर कहने लगे,—

"हरे ! मुरारे ! मधुकैटभारे !',

जंगलके भीतरसे भी मानों उन्हींकी तान-में-तान मिलाकर कोई कह रहा था:—

"हरे ! मुरारे ! मधुकैटभारे !"

क्रमशः कल्याणीका कण्ठ-स्वर धीमा पड़ने लगा । तोभी वह कह रही थी,

"हरे ! मुरारे ! मधुकैटभारे !"

धीरे-धीरे कण्ठ बन्द हो गया । कल्याणीके मुंहसे आवाज नहीं निकलती । उसकी आंखें बन्द हो गयीं, देह ठण्ढी पड़ गई । महेन्द्र समझ गये, कि कल्याणी "हरे ! मुरारे !", रटती-रटती वैकुण्ठधामको चली गयी । तब पागलोंकी तरह ऊंचे स्वरसे काननको कम्पित करते और पशु-पक्षियोंको डराते हुए महेन्द्र पुकारने लगे,—

"हरे ! मुरारे ! मधुकैटभारे !"

उसी समय न जाने किसने वहां जाकर उन्हें अपनी छातीसे लगा लिया और उनके गले-में-गला मिलाकर पुकारने लगा:—

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

"हरे ! मुरारे ! मधुकैटभारे !"

फिर तो दोनों व्यक्ति उसी अनन्तकी महिमासे, उस अनन्त अरण्यमें, उस अनन्त पथगामिनीके शरीरके सामने बैठे हुए अनन्त भगवानका नाम ले-लेकर पुकारने लगे। पशु-पक्षी चुप हैं, पृथ्वी शोभामयी हो रही है। वह स्थान और समय इस परम संगीतके लिये पूर्ण रूपसे उपयुक्त थे, सत्यानन्द महेन्द्रको गोदमें लेकर बैठ गये।

तेरहवां परिच्छेद

इधर राजधानीके हर गली-कूचेमें हलचलसी मच गयी। खबर फैल गयी कि जो सरकारी खजाना कलकत्तेको चालान किया गया था उसे संन्यासियोंने लूट लिया। संन्यासियोंको पकड़नेके लिये बहुतसे सिपाही और भाला-बरदार छोड़े गये। इन दिनों अकालके मारे उस दुर्भिक्षपीड़ित प्रदेशमें सच्चे संन्यासी बहुत ही कम रह गये थे, क्योंकि संन्यासी भीख मांगकर खानेवाले ठहरे, पर यहां जब गृहस्थोंको ही खाना नसीब नहीं होता था, तब संन्यासियोंको भीख कौन देता ? इसलिये जो लोग सच्चे संन्यासी थे, वे पेटकी मारसे काशी, प्रयाग आदि स्थानोंमें चले गये। हां, जो लोग अपनेको 'सन्तान' कहते थे, वेही कभी तो संन्यासीका वेश धारण कर लेते थे और कभी इच्छा होनेपर उसे उतार फेंकते थे। अब जब सन्यासियोंकी धर-पकड़ होने लगी, तब सबोंने संन्यासीका बाना उतार फेंका। लालच-के पुतले सरकारी नौकर, कहीं संन्यासियोंकी सूरत न देख, केवल गृहस्थोंके ही बर्त्तन-भांडे फोड़कर सन्तोष करने लगे। केवल सत्या-नन्द गेरुआ वसन किसी समय नहीं त्यागते थे।

उसी कृष्ण कल्लोलिनी क्षुद्र नदीके तीरपर रास्तेके किनारे एक पेड़के नीचे कल्याणी पड़ी है, महेंद्र और सत्यानन्द एक दूसरेको

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

आलिङ्गन किये, डवडबायी आंखोंसे ईश्वरकी गुहार कर रहे हैं, ऐसे समय नजीरुद्दीन जमादार सिपाहियोंके साथ वहां आ पहुंचा और सत्यानन्दका गला पकड़कर बोला, "यही साला संन्यासी है।"

दूसरे सिपाहीने इसी तरह महेन्द्रको भी पकड़ लिया; क्योंकि उसने सोचा, कि जब यह संन्यासीके साथ है, तब जरूर यह भी संन्यासीही होगा। तीसरा घासपर पड़ी हुई कल्याणीको भी पकड़ने चला, पर यह देखकर लौट आया कि यह तो एक औरतकी लाश है। इसी विचारसे उन्होंने लड़कीको भी छोड़ दिया। वे लोग बिना कुछ कहे-सुने चुपचाप सत्यानन्द और महेंद्रको बांधकर ले चले। कल्याणीकी लाश और नन्हीसी लड़की बिना किसी रक्षकके वहीं पेड़के तले पड़ी रह गयी।

पहले तो शोक और प्रेमसे उन्मत्त होनेके कारण महेंद्रको कुछ सुधबुध न थी। इसीलिये कहां क्या हो रहा है और क्या हो गया है, यह उनकी समझमें नहीं आया। उन्होंने सिपाहियोंको बांधनेमें बाधा नहीं डाली, पर दो-ही-चार पग चलनेपर उनकी समझमें आ गया, कि ये तो हमें बांधे लिये जा रहे हैं। कल्याणीकी लाश अभी-तक बिना जली पड़ी थी और नन्ही सी लड़की भी वहीं पड़ी रह गयी थी। सम्भव है कि उसे कोई खूंखार जानवर खा डाले। यह बात मनमें आतेही उन्होंने बड़े जोरसे दोनों हाथोंका बंधन तोड़ डाला, और पलक मारते ही एक जमादारको इस जोरसे लात मारी कि, वह धड़ामसे भूमिपर गिर पड़ा। वे एक और सिपाहीपर हमला करने जा रहे थे, कि बाकी तीन सिपाहियोंने उन्हें घेरकर काबूमें कर लिया और उनके हाथ-पैर बांध दिये। दुःखसे कातर हो, महेन्द्रने ब्रह्मचारी सत्यानन्दसे कहा,—

"आप थोड़ीसी सहायता करते तो मैं इन पांचोंको यमपुरीका रास्ता दिखा देता।" इसपर सत्यानन्दने कहा,—"मेरी इन पुरानी हड्डियोंमें जोरही कितना है? मैं जिन्हें गुहरा रहा था, उनके सिवाय मुझे और किसीका भरोसा नहीं है। जो होनहार है, उसके विरुद्ध

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

चेष्टा न करो। हम दो आदमी इन पांचोंको परास्त नहीं कर सकते। चलो देखें ये हमें कहां ले जाते हैं। भगवान सब तरहसे भलाही करेंगे।"

दोनोंने फिर अपने छुटकारेकी कोई चेष्टा नहीं की और सिपाहियोंके पीछे-पीछे जाने लगे। कुछ दूर चलनेपर सत्यानन्दने सिपाहियोंसे कहा,—"भाई, मैं सदा हरिनाम जपा करता हूं, क्या यह कोई जुर्म है ?" जमादारको सत्यानन्द भलेमानससे मालूम पड़े। उसने कहा,—"नहीं, तुम हरिनामका सुमिरन करो। हमलोग तुम्हें नहीं रोकते। तुम बूढ़े ब्रह्मचारी हो। तुम तो शायद रिहाई भी पा जाओगे; पर इस शैतानको तो फांसीका हुक्म हुए विना नहीं रहता।"

यह सुन, ब्रह्मचारी मीठे स्वरमें गाने लगे;—

"धीर समीरे तटिनी तीरे वसति वने वर नारी।
मा कुरु धनुर्द्धर गमन विलम्बन मति विधुरा सुकुमारी।"

शहरमें आनेपर दोनों व्यक्ति कोतवालके सामने हाजिर किये गये। कोतवालने राजदरबारमें इत्तिला भेजकर महेंद्र और ब्रह्मचारीको हवालातमें भेज दिया। वह कारागार बड़ाही भयानक था। जो वहां जाता वह जीता लौटकर नहीं आता था; क्योंकि कोई न्याय करनेवाला नहीं था। उस समय न तो अंग्रेजोंकी जेल थी, अंग्रेजोंका इन्साफ। आजकल तो आईन-कानूनका जमाना है—उन दिनों पूरा अन्धेर था। कानूनके जमानेसे गैरकानूनी जमानेका मुकाबिला पाठकही कर लें, हम क्या कहें !

चौदहवां परिच्छेद



रात आ पहुंची। कारागारमें पड़े हुए सत्यानन्दने महेंद्रको कहा,—"आज बड़े ही आनन्दका दिन है; क्योंकि हम कैदमें हैं, बोलो, 'हरे मुरारे !' महेन्द्रने कातर स्वरसे कहा—'हरे मुरारे !'

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY
Jangamawadi Math, Varanasi
Acc. No. 2658.41

सत्यानन्द—"वत्स! तुम उदास क्यों हो रहे हो? इस महाव्रत को ग्रहण करनेपर तो तुम्हें एक-न-एक दिन स्त्री-कन्याको अवश्य छोड़नाही पड़ता। उनसे सम्बन्ध तोड़नाही पड़ता।"

महेंद्र—"त्याग कुछ और-ही चीज है और यम-दण्ड कुछ और-ही। जिस शक्तिके बलपर मैं यह व्रत ग्रहण करनेको था, वह तो मेरी स्त्री-कन्याके ही साथ चली गयी!"

सत्या०—"शक्ति हो जायगी। मैं ही तुम्हें शक्ति दूंगा। महामन्त्रसे दीक्षित हो, महाव्रत ग्रहण कर लो!"

महेन्द्र (विरक्त होकर)—"मेरी स्त्री-कन्याको स्यार-कुत्ते नोचकर खाते होंगे। मुझसे किसी व्रतकी बात न कहिये।"

सत्या०—"इसके लिये निश्चिन्त रहो। सन्तानोंने तुम्हारी स्त्रीका संस्कार कर दिया है और तुम्हारी कन्याको भी अच्छे स्थानमें रख आये हैं।"

महेन्द्रको बड़ा अचम्भा हुआ। उन्हें इस बातपर विश्वास न हुआ। वे बोले—"यह बात आपको कैसे मालूम हुई? आप तो बराबर मेरे साथ ही रहे।"

सत्या०—"हमलोगोंने महामन्त्रकी दीक्षा ली है। हमपर देवताओंकी दया रहती है। आजही रातको तुम्हें इस बातकी खबर मिलेगी और आजही तुम इस कैदखानेसे छूट भी जाओगे।"

महेंद्र कुछ न बोले। सत्यानन्द समझ गये कि, महेंद्रको मेरी बातका विश्वास नहीं होता। सत्यानन्दने कहा—"क्या तुम्हें मेरी बातका विश्वास नहीं होता? परीक्षा कर देखो।" यह कह सत्यानन्द कैदखानेके द्वारतक चले आये। उन्होंने अंधेरेमें क्या किया, सो तो महेंद्रने नहीं देखा, पर यह समझ गये कि किसीसे बातचीत की है। उनके लौट आनेपर महेंद्रने पूछा, "क्या परीक्षा करूं?"

सत्या०—"तुम अभी इस कारागारसे छुटकारा पाओगे।"

यह बात पूरी होते-न-होते कैदखानेका दरवाजा खुल गया और एक आदमीने अन्दर आकर पूछा,—"महेंद्रसिंह किसका नाम है?"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

महेंद्रने कहा,—"मेरा नाम है।"

आगन्तुकने कहा—"तुम्हारी रिहाईका हुक्म हुआ है, तुम बाहर जा सकते हो।"

पहले महेंद्रको बड़ा विस्मय हुआ, फिर सोचा कि झूठी बात है, पर परीक्षाके लिये बाहर चले ही आये। किसीने रोकटोक नहीं की। वे राजपथतक चले आये।

इधर आगन्तुकने सत्यानन्दसे पूछा, "महाराज! आप भी क्यों नहीं निकल चलते? मैं तो आपके ही लिये आया हूं।"

सत्या०—"तुम कौन हो? क्या धीरानन्द गोस्वामी?"

धीरा०—"जी हां।"

सत्या०—"तुम पहरेदार कैसे बने?"

धीरा०—"मुझे भवानन्दने यहां भेजा है। नगरमें आकर मैंने सुना, कि आपलोग कैद हो गये हैं। यह सुनतेही मैं थोड़ी धतूरा मिली हुई भांग लिये चला आया। उसीके प्रतापसे जो खां साहब यहां पहरा दे रहे थे, उन्हें बेहोश किया। यह सब अंगा, पायजामा, पगड़ी और बर्छा उन्हीं हजरतका है।"

सत्या०—"अच्छा, तुम इसी वेशमें शहरसे निकल जाओ। मैं यों नहीं जानेका।"

धीरा०—"क्यों?"

सत्या०—"आज सन्तानोंकी परीक्षाका दिन है।"

इतनेमें महेन्द्र लौट आये। सत्यानन्दने पूछा—"लौट क्यों आये?"

महेन्द्र—"आप सचमुच बड़े ही सिद्ध महात्मा हैं। मैं आपका साथ छोड़कर नहीं जाऊँगा।"

सत्या०—"अच्छा, तो रहो। हम दोनों आज रातको दूसरी तरहसे छुटकारा पा लेंगे।"

धीरानन्द बाहर चले गये। सत्यानन्द और महेन्द्र कैदखानेमें-ही पड़े रहे।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

पन्द्रहवां परिच्छेद

ब्रह्मचारीका गाना बहुतोंने सुना था। जीवानन्दके भी कानमें वह गाना पड़ा था। पाठकोंको स्मरण होगा, कि उन्हें महेन्द्रका पीछा करते रहनेका हुक्म हुआ था। उन्हें रास्तेमें एक स्त्री मिल गयी थी, जो सात दिनसे भूखी-प्यासी रास्तेके किनारे पड़ी थी। उसीकी जान बचानेमें लग जानेके कारण जीवानन्दको घड़ी दो घड़ीका विलम्ब हो गया। उसके प्राणोंकी रक्षाकर वे उस स्त्रीको कुवाच्य कहते, इधर ही चले आ रहे थे (क्योंकि इस विलम्बका कारण वही थी) कि उन्होंने देखा कि प्रभुको मुसलमान पकड़े लिये जा रहे हैं और प्रभु गीत गाते हुए चले जा रहे हैं।

जीवानन्द महाप्रभु सत्यानन्दके सब इशारे समझते थे। इसीसे उनके मुंहसे यह गाना सुनकर कि:—

"धीर समीरे तटिनी तीरे वसति वने वर नारी।"

उन्होंने सोचा कि कहीं नदीके तीरपर कोई दूसरी औरत तो भूखी-प्यासी नहीं पड़ी हुई है। यही सोचते-विचारते जीवानन्द नदीके किनारे-किनारे चले। जीवानन्दने यह देख लिया था, कि ब्रह्मचारीजी-को मुसलमान बांधे लिये चले जा रहे हैं। उन्होंने पहले तो उन्हें छुड़ानेका विचार किया; फिर सोचा कि इस संकेतका अर्थ तो कुछ और ही है। उनकी जीवनरक्षा करनेकी अपेक्षा उनकी आज्ञाका पालन करनाही वे सदासे सिखलाते आये हैं। यह सोच जीवानन्दने उनकी आज्ञाका पालन करना उचित समझा।

यही सोचकर जीवानन्द नदीके किनारे-किनारे चलने लगे। जाते-जाते उन्होंने नदीके किनारे एक वृक्षके नीचे पहुंचकर देखा कि एक मरी हुई स्त्री और एक जीती-जागती लड़की पड़ी है। जीवानन्दने महेन्द्रकी स्त्री-कन्याको पहले कभी नहीं देखा था।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

उन्होंने सोचा, सम्भव है, यही महेंद्रकी स्त्री-कन्या हों; क्योंकि प्रभुके साथ महेन्द्र भी दिखलाई दिये थे। जो हो, मां तो मरी हुई मालूम पड़ती है, पर लड़की जीती है। पहले इसकी जान बचानी चाहिये, जिसमें बाघ-भालू इसे न खा जायँ। भवानन्दजी पास ही कहीं होंगे; इस लाशको जला देंगे। यह सोचकर जीवानन्द उस लड़कीको गोदमें लेकर चल पड़े।

लड़कीको गोदमें लिये हुए जीवानन्द उस घने जंगलके भीतर घुस गये। जंगल पारकर वे एक छोटे गांवमें पहुंचे। उस गांवका नाम भैरवीपुर था, पर लोग उसे 'भरुईपुर' कहा करते थे। उस गांवमें थोड़ेसे मामूली हैसियतके आदमी रहते थे। उसके आसपास और कोई गांव नहीं था। उसके बाद फिर जङ्गल-ही-जङ्गल था। चारों ओर जंगल था, केवल बीचमें यही एक छोटा सा गांव बसा था, पर छोटा होनेपर भी खूबसूरत था। कोमल घास उगी गोचरभूमि, हरे-हरे और कोमल पत्तेवाले आम, कटहल, जामुन और ताड़के पेड़ोंसे भरे हुए बाग-बगीचे, बीचमें नीले जलसे भरा हुआ स्वच्छ तालाब, जिसके जलमें बक, हंस और घनडुब्बी तथा किनारेपर कोयल और चकवा-चकई आदि पक्षी विहार करते हैं, कुछ दूरपर मोर ऊंचे स्वरसे बोलते दिखाई पड़ते हैं। घर-घर आंगनमें गौएं बंधी हैं। अन्दर अन्न रखनेके लिये मिट्टीकी कोठियां भी हैं। इस कालमें धान पैदा नहीं हुआ, इस-लिये खाली पड़ी हैं। किसीके छप्परमें मैनाका पींजरा टंगा है, किसीकी दीवारोंपर रंग-विरंगे चित्र लिखे हुए हैं, किसीके आंगनमें शाकभाजी उगी हुई है! अन्य स्थानोंके लोग दुर्भिक्षके मारे दुःखी दुबले-पतले हो रहे हैं, पर इस गांवके लोग कुछ सुखी दिखाई दे रहे हैं; क्योंकि जंगलोंमें मनुष्यके खाने योग्य बहुत-सी चीजें पैदा होती हैं, उन्हें लाकर इस गांवके लोग अपने प्राण और स्वास्थ्यकी रक्षा कर रहे हैं।

एक बड़े भारी आमके बगीचेके बीचमें एक छोटा-सा मकान

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

था, जिसकी चहारदीवारी मिट्टीकी थी और चारों ओर चार घर बने हुए थे। उस घरमें गाय-बकरी हैं, एक मोर है, एक मैना है और एक तोता है। पहले एक बकरा भी था, पर उसका खाना जुटना मुश्किल हो गया ; इसीसे वह छोड़ दिया गया। एक ढेंकी भी रखी हुई है और बाहर खलिहान भी बना हुआ है। आंगनमें नीबूका एक पेड़ और कई एक जूही-चमेलीकी वेलें भी लगी हैं। परन्तु इस साल वे फूली नहीं। घरके बाहर बरामदेमें एक चरखा रखा है, किन्तु घरमें कोई बड़ा आदमी नहीं है। जीवानन्द लड़की-को गोदमें लिये हुए उसी मकानके अन्दर घुस गये।

घरके अन्दर आते ही जीवानन्द सामने रखे हुए एक चर्खेको उठाकर चलाने लगे। उस नन्ही बालिकाने कभी चर्खेका शब्द नहीं सुना था। जबसे मांसे बिछुड़ी, वह रो रही थी, चर्खेका घर्र-घर्र शब्द सुन वह डर गयी तथा और जोरसे रोने लग गयी। उसका रोना सुनकर घरके अन्दरसे एक सत्रह-अठारह वर्षकी युवती बाहर निकली। उसने अपने दाहिने गालपर दाहिने हाथकी उंगली रखे, गरदन तिरछी कर कहा,—"ऐं! यह क्या! भैया! चरखा क्यों चला रहे हो? यह लड़की कहांसे ले आये हो? क्या यह तुम्हारी लड़की है? फिर व्याह किया है क्या?"

लड़कीको उस युवतीकी गोदमें देते हुए जीवानन्दने उसे एक हलकीसी चपत मारनेके लिये हाथ उठाते हुए कहा,—"पगली कहींकी! मेरे लड़की कहांसे आयी? मुझे भी क्या तूने ऐसा-वैसा समझ रखा है? घरमें दूध है कि नहीं?"

युवती,—"दूध क्यों नहीं है? पीओगे क्या?"

जीवानन्द—"हां, पीऊंगा।"

यह सुन, वह युवती जल्दी-जल्दी दूध गरम करने चली गयी। इधर जीवानंद चरखा चलाते रहे। उस युवतीकी गोदमें जातेही वह लड़की न जाने क्यों चुप हो गयी। शायद उसे फूले हुए कुसुमकी तरह सुन्दरी देखकर उसने उसे अपनी मां ही समझ लिया था। अबतक

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

तो वह चुप थी; पर चुल्हेकी आंच देहमें लगते ही रो उठी। उसका रोना सुन जीवानन्द बोले,—"अरी ओ मुंहजली निमी बन्दरी ! क्या तेरा दूध अबतक गरम नहीं हुआ ?" निमी बोली,—"हो गया।" यह कह वह एक पत्थरके बर्तनमें दूध लिये हुई जीवानन्दके पास आयी। जीवानंदने बनावटी क्रोध दिखलाते हुए कहा,—"जीमें तो आता है कि यह दूध तेरे ऊपर फेंक दूं। तू क्या समझती थी; कि दूध मैं पीऊंगा ?"

निमीने पूछा,—"तब और कौन पीयेगा ?"

जीवा०—"यही लड़की पीयेगी। देखती नहीं, इसेही पिला।"

यह सुन, निमी पलाथी मारकर बैठ गयी और लड़कीको गोद-में सुला, सितुहीसे उसे दूध पिलाने लगी। यकायक उसकी आंखोंसे कई आंसू टपक पड़े ! उसको एक लड़का होकर मर गया था, उसी-को दूध पिलानेकी वह सितुही थी। निमीने झट अपने आंसू पोंछ हंसकर जीवानन्दसे पूछा,—"भैया ! यह लड़की है किसकी ? "

जीवानन्दने कहा,—"यह जानकर तू क्या करेगी मुंहजली ?"

निमीने कहा,—"क्या इसे मुझे दे दीजियेगा ? "

जीवानन्दने पूछा,—"इसे लेकर क्या करेगी ?"

निमीने कहा,—"इसे गोदमें लेकर खिलाऊंगी, दूध पिलाऊंगी, पाल-पोसकर बड़ी करूंगी"—कहते-कहते अभागे आंसू फिर गिर पड़े। उसने फिर उन्हें पोंछ डाला और बनावटी हंसी हसने लगी।

जीवानन्दने कहा,—"तू उसे लेकर क्या करेगी ? तेरे आपही न जाने कितने बाल-बच्चे होंगे।"

निमीने कहा,—"हुआ करें, अभी तो तुम मुझे इस लड़कीको दे ही दो, इसके बाद ले जाना। "

जीवानन्दने कहा,—"अच्छा, जा, ले जा। मैं बीच-बीचमें आकर इसे देख जाया करूंगा। यह एक कायस्थकी लड़की है। अच्छा, तो अब मैं जाता हूं।"

निमीने कहा,—"यह क्या भैया ? कुछ खाओगे नहीं ? दिन

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

बहुत चढ़ आया है। तुम मेरे सिरकी कसम जो विना कुछ खाये जाओ। दो कौर खालो, फिर चले जाना।"

जीवानन्दने कहा,—"अरी पगली! मैं तेरा सिर खाऊंगा या भात? दोनों कैसे खिलायेगी? जा, सिर सलामत रहने दे, थोड़ा-सा भातही खिला दे।"

यह सुन, लड़कीको गोदमें लिये निमी रसोईघरमें चली गयी। पीढ़ा, पानी रख उसने जीवानन्दको खानेके लिये बैठाया और जुहीके फूलकी तरह स्वच्छ चावलोंका भात, खड़ी मसूरकी दाल, जंगली गूलरकी तरकारी, रोहू मछलीका शोरबा, और दूध परोस दिया। पीढ़ेपर बैठतेही जीवानन्दने कहा,—"बहन, कौन कहता है कि बड़ा भारी अकाल पड़ा है? तेरे गांवमें तो मालूम पड़ता है कि अकालकी दालही नहीं गलने पायी।"

निमीने कहा,—"अकाल तो खूब ही व्याप रहा है, भैया! पर हम दोही जने खानेवाले ठहरे, इसीलिये घरमें जो कुछ है, वही आप भी खाते हैं और औरोंको भी खिलाते हैं। तुम्हें याद होगा, हमारे गांवमें वर्षा हुई थी। तुमने कहा भी था, कि जंगलमें वर्षा बहुत होती है। इसीसे हमारे यहां कुछ-कुछ धानकी फसल हुई थी। और लोगोंने तो अपना धान बेच दिया था, पर हमने नहीं बेचा था।"

जीवानन्दने कहा,—"बहनोई महाशय कहां गये हैं?"

निमीने सिर नीचाकर धीरेसे कहा,—"दो-तीन सेर चावल लेकर न जाने कहां गये हैं। शायद किसीको देने गये हैं।"

इधर बहुत दिनोंसे जीवानन्दको ऐसा बढ़िया भोजन नसीब नहीं हुआ था। इसलिये बकवादमें बहुत समय नष्ट करना अच्छा न समझकर वे गपागप अन्नव्यञ्जनको गलेके नीचे उतारने लगे। थोड़ीही देरमें वे सारी थाली साफ कर गये। श्रीमती निमाईमणिने आज केवल अपने और स्वामीके लिये ही रसोई पकाई थी और अपना हिस्सा लाकर भाईको खानेके लिये दिया था।

थाली खाली देख वह उदासमन रसोईघरमें गयी और अपने

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

स्वामीका हिस्सा भी लाकर जीवानन्दके आगे रख दिया। जीवानन्दने बिना किसी आपत्तिके वह सारा सामान भी पेटके अन्दर डाल दिया। तब निमाईमणिने पूछा—"क्यों भैया! और कुछ खाओगे?"

जीवानन्दने कहा—"और क्या है?"

निमाईमणिने कहा—"एक पका हुआ कटहल पड़ा है।"

यह कह वह एक पका हुआ कटहल उठा लायी। बिना कुछ कहे जीवानन्द वह सारा कटहल सफ़ाचट कर गये। तब निमाईने हंसकर कहा—"भैया! अब तो कोई च ज खाने लायक नहीं रही।

भैयाने जवाब दिया,—"कोई हर्ज नहीं और किसी दिन आकर खा जाऊंगा।"

अन्तमें निमाईने जीवानन्दको हाथ-मुंह धोनेके लिये जल ला दिया। जल ढालते-ढालते बोली—"भैया, क्या तुम मेरी एक बात मानोगे?"

जीवा०—"कौनसी बात? कह।"

निमाई—"पहले मेरे सिरकी कसम खाओ।"

जीवा०—"अरी मुंहजली! कहती क्यों नहीं?"

निमाई—"बात मानोगे न?"

जीवा०—"पहले सुन तो लूं।"

निमाई—"नहीं, पहले मेरे सिरकी कसम खाओ, मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूं।"

जीवा०—"अच्छा, ले मैं तेरे सिरकी कसम खाता हूं और तू मेरे पैरों पड़ना चाहती है तो वह भी कर ले, पर बात तो सुना दे।"

निमाई पहले तो कुछ देरतक सिर नीचा किये, एक हाथसे दूसरे हाथकी अंगुलियां चटकाती रही और कभी जीवानन्दके मुंह-की ओर और कभी नीचे जमीनकी ओर देखती रही। इसके बाद बोली,—"ज़रा भाभीको बुला लूँ।"

यह सुनतेही जीवानन्द झारी उठाकर निमीको मारनेके लिए उठ खड़े हुए और बोले, "ला, मेरी लड़की फेर दे। मैं और किसी

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

दिन आकर तेरे दाल-चावल लौटा जाऊंगा। बंदरी कहींकी ! मुंहजली कहींकी ! तू सदा अण्डबण्ड बका करती है।"

निमाईने कहा, "अच्छा मैं बंदरी सही, मुंहजली सही। पर कहो तो जरा भाभीको बुला लाऊं।"

जीवानन्द,—"लो, मैं चला। यह कह वे झटपट दौड़े हुए बाहर-की ओर चले, पर निमाईने आकर दरवाजा रोक लिया और किवाड़ बन्दकर द्वारकी ओर अपनी पीठ किये हुए बोली—"पहले मुझे मार डालो, तब जाना। बिना भाभीसे भेंट किये तुम कदापि न जाने पाओगे।"

जीवा०—"क्या तू नहीं जानती कि मैंने कितने आदमियोंको मार डाला है ?"

यह सुनतेही निमीको क्रोध चढ़ आया। वह बोल उठी—"आह, क्या कहते हैं ! बड़ी कीर्त्तिका काम कर डाला है। तुमने स्त्रीको छोड़ दिया है, बहुतसे आदमियोंको मार डाला है। इसीसे क्या मैं तुमसे डर जाऊंगी ? तुम जिस बापके बेटे हो, मैं भी उसी बापकी बेटी हूं। अगर आदमियोंकी जान लेनी भी बड़ी बड़ाईकी बात हो, तो लो, मेरी भी जान लेकर नाम कमा लो।"

जीवानन्द हंस पड़े और बोले—"अच्छा, जा; किस पापिनको बुलाने जाती थी उसे बुला ला। किन्तु देख ! फिर यदि ऐसी बात कहेगी, तो तुझे कुछ कहूं या नहीं, पर उसका सिर मुंड़ा, गधेपर चढ़ाकर देशसे निकाल बाहर कर दूंगा।"

निमीने मन-ही-मन कहा—"तब तो मेरी भी जान बच जायगी।" और हंसती हुई बाहर चली गयी और पासवाली एक झोपड़ीके अन्दर घुस पड़ी। उस झोपड़ीके अन्दर एक स्त्री बैठी हुई चरखा चला रही थी। उसकी देहपरके कपड़ेमें सौ-सौ पैबंद लगे थे। उसके सिरके बाल रूखे थे। निमाईने उसके पास आकर कहा, "भाभी बस जल्दी !"

उस युवतीने कहा—"जल्दी क्या ! क्या ननदोईजीने तुम्हें मारा है ? देहमें तेलकी मालिश करनी होगी ?"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

निमी०—"कुछ ऐसीही बात है। घरमें तेल तो होगा ही।"

यह सुन, वह स्त्री तेलका वर्त्तन निकाल लायी। निमाईने झट उसमेंसे तेल अंजुलिमें ढाल लिया और उस स्त्रीके सिरमें तेल लगाकर मामूली तरहसे केश भी बांध दिया। इसके बाद उसके गालमें हलकी-सी चपत लगाकर बोली—"तुम्हारी वह ढाकेकी साड़ी कहां है?" यह सुन वह स्त्री कुछ विस्मित होकर बोली,—"तुम पागल तो नहीं हो गयी हो?"

निमीने उसकी पीठपर एक चपत जमाकर कहा—"पहले साड़ी निकाल लाओ।"

तमाशा देखनेके लिये वह स्त्री साड़ी ले आयी। हमने तमाशा देखनेकी बात इसलिये कही कि इतने दुःखमें पड़कर भी उसकी तमाशा देखनेकी प्रवृत्ति नष्ट नहीं हुई थी। एक तो नयी जवानी, दूसरे नयी उमरका वह फूले हुए कमलकासा सौन्दर्य! इतनेपर भी उस बेचारी-को तेल-फुलेल,साजसिंगार और आहार-विहारसे कोई सरोकार नहीं। उसका वह जगमगाता हुआ सौन्दर्य उसी सौ-सौ पैवंद लगे हुए कपड़ेके अंदर ढका रहता था। उसके शरीरमें बिजलीकीसी चंच-लता, आँखोंमें कटाक्ष, मुंहपर हंसी और हृदयमें धैर्य भरा हुआ था। ठीक समय खाना-पीना नहीं, तोभी शरीरमें लुनाई भरी हुई थी। सिंगार-पटार नहीं, तोभी अंग-अंगसे सुन्दरता चू पड़ती थी। जैसे मेघमें बिजली, मनमें प्रतिभा, जगत्‌के समस्त प्रकारके शब्दोंमें संगीत और मृत्युके भीतर सुख छिपा रहता है, वैसे ही उसकी रूप-राशिके भीतर न जाने क्या छिपा हुआ था। उसमें अनिर्वचनीय माधुर्य, अनिर्वचनीय प्रेम और अनिर्वचनीय भक्ति भरी हुई थी। उसने हंसते-हंसते (वह हंसी किसीने देखी नहीं) ढाकेकी साड़ी बाहर निकाली, बोली—"लो साड़ी। इसे क्या करूं?"

निमीने कहा—"इसे पहन लो।"

उसने कहा—"मैं पहनकर क्या करूंगी?"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

इसपर उसके कमनीय गलेमें बाहुलता डालकर निमाईने कहा—"भैया आये हैं। तुम्हें बुला रहे हैं।"

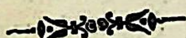
युवतीने कहा—"हमें बुलाया है तो ढाकेकी साड़ीकी क्या जरूरत है? चल, इसी तरह चलूं।"

निमाईने उसके गालमें एक चपत जमा दी। उसने निमाईके गलेमें हाथ डाल उसे झोपड़ीके बाहर कर कहा—"चलो, उन्हें यही फटी साड़ी पहने अपनी सूरत दिखा आऊं।"

लाख कहनेपर भी उस युवतीने साड़ी नहीं पहनी। लाचार निमाई राजी हो गयी और अपनी भाभीको साथ लिये अपने घरके दरवाजेतक आयी, और उसे भीतर भेज बाहरसे किवाड़ बन्दकर आप दरवाज़ेपर खड़ी हो रही।

—

सोलहवां परिच्छेद



उस स्त्रीकी अवस्था पचीस वर्षके लगभग थी, पर देखनेमें वह निमीसे अधिक वयसवाली नहीं मालूम पड़ती थी। जिस समय वह मैले-कुचैले वस्त्र पहने, उस घरके अन्दर आयी, उस समय ऐसा मालूम पड़ा, मानों उजाला हो गया। ऐसा मालूम पड़ा, मानों किसी वृक्षको पत्तोंसे ढकी हुई सभी कलियां एक साथ खिल गयीं, मानों बन्द गुलाबजलके करावेका मुंह किसीने खोल दिया, मानों किसीने बुझती हुई आगमें धूप और गुग्गुल डाल दिया! वह रमणी घरमें प्रवेशकर चारों ओर अपने स्वामीको ढूंढ़ने लगी। पहले तो उसने उन्हें नहीं देखा, पर थोड़ी देर बाद देखा कि आंगनमें आमके छोटे पेड़के सोरपर सिर रखे जीवानंद रो रहे हैं। सुंदरीने उनके पास पहुंचकर धीरे-धीरे उनका हाथ अपने हाथमें ले लिया। यह तो नहीं कहा जा सकता कि उसकी आंखोंमें जल आया

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

हो नहीं; पर उसने उसे बाहर नहीं होने दिया; क्योंकि परमात्मा जानता है, कि जो सोता उसकी आँखोंसे जारी हुआ चाहता था, वह यदि निकल पड़ता, तो जीवानंद उसमें डूब जाते। लेकिन उसने उसे बहने न दिया। जीवानन्दका हाथ अपने हाथमें लेकर उसने कहा—"हैं! रोते क्यों हो? मैं जानती हूं कि तुम मेरे ही लिए रो रहे हो; पर मेरे लिये रोनेका कोई काम नहीं है। तुमने मुझे जिस अवस्थामें रख छोड़ा है, मैं उसीमें सुखी हूं।"

जीवानन्दने सिर ऊपर उठाया, आंखें पोंछकर पूछा—"शान्ति! तुम्हारे बदनपर यह जीर्ण-शीर्ण फटा कपड़ा क्यों? तुम्हें तो खाने-पहननेका कोई दुःख नहीं है?"

शांतिने कहा—"तुम्हारा ऐश्वर्य तुम्हारे लिये है। मैं क्या जानूं कि रुपया-पैसा किस काम आता है। जब तुम घर फिर आओगे, मुझे ग्रहण करोगे।"

जीवा०—"ग्रहण करना, क्या मैं ने तुम्हें त्याग दिया है?"

शांति—"त्याग नहीं दिया है—तोभी जब तुम्हारा व्रत पूरा होगा और तुम फिर मुझे स्नेह करने लगोगे"—बात पूरी भी न होने पायी थी कि जीवानन्दने शांतिको गलेसे लगा लिया और उसके कंधेपर सिर रख बड़ी देरतक चुप रहे। फिर लम्बी सांस लेकर बोले—"हाय, मैंने क्यों मुलाकात की!"

शांति—"क्यों की! इससे तुम्हारा व्रत भंग हो गया।"

जीवा०—"हुआ करे। इसका प्रायश्चित्त भी तो है? इसकी चिंता मुझे नहीं है, पर तुम्हें देखकर तो अब मुझसे जाया नहीं जाता। मैं इसीसे निमाईसे कह रहा था कि मिलने-मिलानेका काम नहीं है; क्योंकि तुम्हें देखनेके बाद मुझसे घर नहीं छोड़ा जायगा। एक ओर धर्म, अर्थ, काम मोक्ष, जगत, संसार, व्रत, होम, याग, यज्ञ सब कुछ और दूसरी तरफ तुम अकेली रहो, तोभी मैं निश्चय नहीं कर सकता कि कौन पलड़ा भारी है। देश तो शांत है, देशको लेकर मुझे क्या करना है? देशकी एक कट्ठा भूमि पा जाऊं तो

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

तुम्हें लेकर मैं वहीं स्वर्गकी रचना कर सकता हूं। फिर मुझे देशसे क्या काम है? देशके लोग दुःखी हैं—रहें। पर जिसने तुमसी सती पाकर भी त्याग कर दी है, उससे बढ़कर दुखिया देशमें और कौन होगा? जो तुम्हारे इस कोमल शरीरपर सौ-सौ पैबंद लगे हुए कपड़े देखता है, उससे बढ़कर दरिद्र इस देशमें दूसरा कौन होगा? तुम मेरी सहधर्मिणी हो। जब मैंने तुम-सी सहायकको छोड़ दिया, तो फिर मेरे लिये सनातनधर्म क्या चीज है? मैं किस धर्मके लिये बंदूक कंधेपर लिये देश-विदेश, जंगल-जंगल भटकता जीव हत्या कर अपने ऊपर पापका बोझ लाद रहा हूं? पृथ्वीपर संतानोंका राज्य होगा या नहीं, नहीं कहा जा सकता; पर तुम तो मेरे हाथमें ही हो। तुम पृथ्वीकी अपेक्षा कहीं बड़ी हो—तुम मेरे लिये साक्षात् स्वर्ग हो। चलो, घर चलें। अब मैं लौटकर वहां न जाऊंगा।"

शान्तिके मुंहसे कुछ देरतक बात न निकली। फिर बोली,-"छिः! तुम वीर पुरुष होकर ऐसी बातें करते हो? मुझे तो इस संसारमें यही सबसे बढ़कर सुखकी बात मालूम होती है कि मैं वीर पत्नी हूं! तुम एक अधम नारीके लिये अपना वीर-धर्म त्याग करते हो? तुम मुझे प्यार करो—मुझे वह सुख नहीं चाहिये, पर तुम अपना वीर-धर्म कदापि न छोड़ो। हां, एक बात और है, इस व्रत-भंगका प्रायश्चित्त क्या है?"

जीवानन्दने कहा,—"प्रायश्चित्त है दान, उपवास और १२ ❀ काहन कौड़ी।"

यह सुन, शान्ति मुस्कराते हुए बोली—"प्रायश्चित्त क्या है सो मैं जानती हूं, पर एक अपराध करनेपर जो प्रायश्चित्त करना होता है, वही क्या सौ अपराधोंके लिये भी करना होता है?"

जीवानन्दने आश्चर्य और उदासीके साथ कहा,-"यह सब बातें किस लिये पूछ रही हो?"

❀ एक काहनमें एक रुपयेकी कौड़ियां होती हैं।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

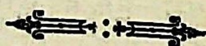
शान्ति—"मैं एक भिक्षा मांगती हूं। मुझसे मिले बिना प्रायश्चित्त न करना।"

यह सुन, जीवानन्दने हंसकर कहा,—"इस बारेमें तुम लोग निश्चिन्त रहो। मैं तुमसे मिले बिना नहीं मरूंगा। मरनेकी वैसी कुछ जल्दी भी नहीं पड़ी है। अब मैं यहां न ठहरूंगा। इस बार तुम्हें जीभर देखने नहीं पाया, पर किसी दिन यह साध अवश्य पूरी करूंगा। एक दिन हमारी मनोकामना अवश्यही पूरी होगी! अब मैं चला, पर मेरा एक अनुरोध है, उसे मान लेना। यह फटे-पुराने वस्त्र छोड़ दो और मेरे पैतृक घरमें ही जाकर रहो।"

शान्तिने पूछा—"इस समय तुम यहांसे कहां जाओगे ?"

जीवानन्द—"अभी तो मठमें जाकर ब्रह्मचारीजीका पता लगाना है। उन्हें जिस हालतमें शहरकी ओर जाते देखा है, उससे मुझे बड़ी चिन्ता हो गयी है। अगर वे मन्दिरमें न मिले तो उन्हें ढूंढ़नेके लिये शहर जाऊंगा।

सत्रहवां परिच्छेद



भवानंद मठके भीतर बैठे हरि-गुण-गान कर रहे थे। इस समय ज्ञानानन्द नामक एक तेजस्वी सन्तान उदास मुंह, उनके पास आ खड़े हुए। भवानन्दने कहा, "गुसांईजी! ऐसा उदास चेहरा क्यों बनाये हुए हो ?"

ज्ञानानन्द—"कुछ गोलमाल हुआ-सा मालूम पड़ता है। कलकी घटनाके कारण मुसलमान जहांकहीं गेरुआ कपड़ा देखते हैं, वहीं धर-पकड़ करने लगते हैं। अन्य सन्तानोंने तो गेरुआ वस्त्र उतार फेंके। केवल सत्यानन्द प्रभु गेरुआ पहने हुए शहरकी ओर गये हैं। कहीं वे मुसलमानोंके फन्देमें न पड़ जायँ।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

भवानन्द—"उन्हें पकड़ रखे, ऐसा कोई मुसलमान इस बंगाल प्रान्तमें नहीं पैदा हुआ। मैंने सुना है, कि धीरानन्द उनके पीछे पीछे गये हैं। तोभी मैं जरा शहरतक घूम आना चाहता हूं, तुम मठकी रखवाली करो।"

यह कह भवानन्दने एक सूनसान कमरेमें जा एक बड़े भारी सन्दूकमेंसे कई तरहके कपड़े बाहर निकाले। सहसा भवानन्दका रूप ही औरका और हो गया। गेरुआ कपड़ोंके स्थानमें चूड़ीदार पायजामा, अचकन, चोगा, सिरपर अम्मामा और पैरोंमें नागौरी जूते शोभा देने लगे। ललाटसे त्रिपुण्ड्रके चिह्न दूर हो गये। भौंरेकी तरह काली-काली दाढ़ी मूँछोंसे घिरा हुआ सुन्दर मुख-मण्डल अपूर्व शोभा दिखाने लगा। उस समय वे मुगल नवजवान मालूम पड़ने लगे। इस तरह मुगलका वेश बना, हथियारसे लैस होकर वे मठसे बाहर निकले। वहांसे कोस डेढ़ कोसकी दूरीपर दो नीची पहाड़ियां थीं। उन पहाड़ोंपर खूब घने जंगल थे। उन दोनों पहाड़ियोंके बीचमें एक सूनसान स्थान था। वहां बहुतसे घोड़े बंधे थे। वही मठवासियोंकी अश्वशाला थी। उन्हीं घोड़ोंमेंसे एकपर सवार हो भवानन्द नगरकी ओर चल पड़े।

जाते-जाते वे सहसा एक जगह ठिठक गये। उन्होंने देखा, कि कलनादिनी तरंगिणीके तीरपर आसमानसे गिरे हुए नक्षत्रकी भांति मेघसे बिछुड़ी हुई बिजलीकी नाईं दमकती कान्तिवाली एक स्त्री पड़ी है। उन्होंने यह भी देखा, कि उसके शरीरमें जीवनका कोई चिह्न नहीं है और पासही जहरकी डिबिया पड़ी है। भवानन्द विस्मित, क्षुब्ध और भीत हुए। जीवानन्दकीही तरह भवानन्दने भी महेन्द्रकी स्त्री और कन्याको कभी नहीं देखा था। जीवानंदने जिन कारणोंसे उनपर महेन्द्रकी स्त्री-कन्या होनेका संदेह किया था, वे कारण भवानन्दके सामने उपस्थित नहीं थे। एक तो उन्होंने ब्रह्मचारी और महेन्द्रको कैद होकर आते नहीं देखा था, दूसरे लड़की भी वहां नहीं थी। डिबिया देखकर उन्होंने अनुमान

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

किया, कि कोई स्त्री विष खाकर मर गयी है। यही सोचकर वे उस शवके पास चले आये और उसके सिरपर हाथ रखकर देरतक कुछ सोचते रहे। इसके बाद उन्होंने उसके सिर, बगल, पांजर, हाथ आदिपर हाथ रखकर देखा और अनेक प्रकारसे परीक्षा की, जो साधारणतः लोग नहीं जानते। तब उन्होंने मन-ही-मन कहा—"अब भी समय है, पर इसे बचाकर ही क्या करूंगा ?"

इसी प्रकार भवानन्दने बड़ी देरतक सोच-विचार किया। इसके बाद जङ्गलमें जाकर वे एक वृक्षके बहुतसे पत्ते तोड़ लाये। उन्होंने उन्हें हाथसे ही मलकर उनका रस निचोड़ा और उस मुर्देके ओंठमें अंगुली डाल, उसीके सहारे वह रस उसके गलेके नीचे उतारने लगे। रसके बाद उन्होंने थोड़ा-सा रस उसकी नाकमें भी टपकाया और कुछ हाथ-पैरोंमें भी मल दिया। वे बार-बार ऐसाही करने और रह रह-कर उसकी नाकके पास हाथ ले जाकर देखने लगे कि सांस चलती है या नहीं। उन्हें मालूम पड़ा, मानों उसका यत्न विफल हुआ चाहता है। इस प्रकार बहुत देरतक परीक्षा करते रहनेके बाद भवानन्दका चेहरा खिल उठा; क्योंकि उनकी अंगुलीमें धीरेसे सांस चलनेकी हवा लगी। अब तो वे और भी रस निचोड़-निचोड़कर उसे पिलाने लगे। क्रमसे जोर-जोरसे सांस चलने लगी। अब नाड़ीपर हाथ रखकर भवानंदने देखा कि नाड़ी चल रही है। अन्तमें पूर्व दिशाके प्रथम अरुणोदयकी नाईं प्रभातके खिलते हुए कमलकी तरह तथा अनुरागके प्रथम अनुभवकी भांति कल्याणीने धीरे-धीरे आखें खोल दीं। यह देख भवानन्द उस अधमरी देहको घोड़ेपर चढ़ा जल्दी नगरकी ओर चले।

अठारहवां परिच्छेद

सांझ होते-होते समस्त सन्तान-सम्प्रदायमें यह बात फैल गयी कि सत्यानन्द ब्रह्मचारी और महेन्द्रसिंह बन्दी होकर नगरके कैदखाने-

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

में बन्द हैं। यह सुनतेही एक-एक, दो-दो, दस-दस, सौ-सौ करके सन्तान-सम्प्रदायके लोग, उस मन्दिरके चारों तरफवाले जंगलमें आकर इकट्ठे होने लगे। सभी हथियारबन्द थे। सबकी आंखोंमें क्रोधकी आग जल रही थी, मुखसे दम्भ प्रकट हो रहा था और होठोंपर दृढ़ प्रतिज्ञाकी छाया थी। पहले सौ आये, पीछे हजार, फिर दो हजार हो गये। इसी तरह उनकी संख्या बढ़ती गयी। यह देख मठके द्वारपर खड़े होकर ज्ञानानन्द तलवार हाथमें लिये ऊंचे स्वरसे कहने लगे,—"हमलोगोंने बहुत दिनोंसे यह इरादा कर रखा है, कि यह नवाबी इमारत, यह यवनपुरी ढाहकर नदीमें फेंक देंगे। इन शूकरोंके खोभारमें आग लगाकर माता वसुमतीको फिर पवित्र करेंगे। भाई! आज वही दिन आ पहुंचा है। हमारे गुरुके गुरु, परम गुरु, अनन्त ज्ञानमय, सदा शुद्धाचारी, लोकहितैषी, देशहितैषी पुरुष; जिन्होंने सनातनधर्मके पुनः प्रचारके लिये अपना जीवन ही दे रखा है, जिन्हें हमलोग विष्णुका अवतार मानते हैं, जो हमारी मुक्तिके द्वार हैं, वे ही आज मुसलमानोंके कैदखानेमें पड़े हैं। क्या हमारी तलवारमें धार नहीं रह गयी है? (हाथ उठाकर) —क्या हमारी इन भुजाओंमें बल नहीं रहा? (फिर छाती ठोंककर)—क्या इस हृदयमें साहस नहीं रह गया? भाइयो! बोलो—"हरे मुरारे मधुकैटभारे!" जिन्होंने मधुकैटभका नाश किया है, जिन्होंने हिरण्यकशिपु, कंस दन्तवक्र, शिशुपाल आदि दुर्जय असुरोंको मार गिराया है, जिनके चक्रके घर्घर निर्घोषको सुनकर मृत्युको जीतनेवाले शम्भु भी डर जाते हैं, जो अजेय हैं, रणमें जय देनेवाले हैं, हमलोग उन्हींके उपासक हैं, उन्हींके बलसे हमारी भुजाओंमें अनन्त बल वर्त्तमान है। वे इच्छामय हैं, उनके इच्छा करतेही हमलोग लड़ाई जीत लेंगे। चलो; हमलोग अभी उस यवनपुरीको तहस-नहस कर डालें और धूलमें मिला दें। उस शूकरनिवासको आगसे जलाकर पानीमें बहा दें। वह पंछीका घोंसला उजाड़कर उसके सब खर-पात हवामें उड़ा दें। बोलो, "हरे मुरारे मधुकैटभारे!"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

उस समय उस जंगलमें अतिभीषण नादसे सहस्रों कण्ठ एक साथही कह उठे,—"हरे मुरारे मधुकैटभारे!" साथही हजारों तलवारें एक ही साथ झनझना उठीं। सहस्रों भालोंकी नोकें एकही साथ चमचमा उठीं। सहस्रों भुजाओंके परिचालनसे वज्रका-सा शब्द होने लगा। हजारों युद्धके नगाड़े बज उठे। जंगलके पशु डरके मारे महा कोलाहल करते हुए भाग चले। पक्षी जोर-जोरसे चित्कार करते हुए आसमानमें उड़ गये। उसी समय सैकड़ों मारू बाजे बजाते और "हरे मुरारे मधुकैटभारे"की आवाज लगाते हुए सन्तानगण कतार बांधकर जंगलसे बाहर होने लगे। धीर-गम्भीर पदविक्षेप करते और ऊंचे स्वरसे हरिनामका उच्चारण करते हुए वे लोग उसी अंधेरी रातमें नगरकी ओर बढ़े। वस्त्रोंका मर्मर शब्द, अस्त्रोंकी झनकार, सहस्रों कण्ठोंका अस्फुट निनाद और बीच-बीचमें "हरे मुरारे" का तुमुलरव होता रहा। धीर, गम्भीर, सरोष और सतेज भावसे चलती हुई वह सन्तान-सेना क्रमसे नगरमें आ पहुंची और नगरवासियोंके मनमें भय उत्पन्न करने लगी। इस आकस्मिक विपत्तिसे भयभीत हो लोग इधर-उधर भाग चले। नगर-रक्षक तो अवाक् रह गये।

सन्तानोंने सबसे पहले सरकारी जेलखानेमें जाकर उसे तोड़ डाला। वहांके पहरेदारोंको मार, सत्यानन्द और महेन्द्रको छुड़ा उन्हें कंधेपर बैठाकर नाचने-कूदने लगे। उस समय हरिनामका भजन और भी जोर-जोरसे होने लगा। सत्यानन्द और महेन्द्रको छुड़ानेके बाद वे जहांकहीं मुसलमानोंका घर देख पाते, उसमें आग लगा देते थे। यह देख सत्यानन्दने कहा,—"चलो, लौट चलो। व्यर्थ उपद्रव करनेका कोई काम नहीं है।"

संतानोंके इस उपद्रवका संवाद पाकर देशके शासकने उनके दमनके लिये सैनिकोंका एक दल भेजा, जिनके पास केवल बंदूकें ही नहीं, एक तोप भी थी। इनके आनेकी खबर पातेही संतानगण उस जंगलसे निकलकर युद्ध करनेके लिये आगे बढ़े। लेकिन तोपके आगे लाठी, बर्छी या बीस-पच्चीस बंदूकोंकी क्या बिसात थी? संतानगण, पराजित हो, भागने लगे।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative



आनन्दमठ

दूसरा खण्ड



CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

पहला परिच्छेद

बड़ी ही छोटी उमरमें शान्तिकी मां मर गयी थी। जिन अवस्थाओंमें शान्तिका चरित्र-गठन हुआ था, उनमें एक प्रधान है। उसके पिता पण्डित और अध्यापक थे। उनके घरमें और कोई स्त्री नहीं थी।

शान्तिके पिता जब पाठशालामें पढ़ाने जाते, तो शान्ति भी उन्हींके पास बैठी रहती थी। पाठशालामें बहुतसे लड़के रहते थे। जब पाठका समय न रहता, शान्ति उन लोगोंके साथ खेलती-कूदती थी, किसीके कन्धेपर चढ़ती तो किसीकी गोदमें बैठ जाती। वे लोग भी शान्तिको बहुत प्यार करते थे।

इस प्रकार लड़कपनसे ही पुरुषोंके संसर्गमें रहनेका पहला फल तो यह हुआ, कि शान्तिने स्त्रियोंकी तरह कपड़ा पहनना नहीं सीखा अथवा यों कहिये, कि सीखकर भी भूल गयी। वह ठीक पुरुषोंकी तरह लांग कसने लगी। यदि कभी कोई उसे लड़कियोंकी तरह कपड़ा पहना देता, तो वह उसे झट खोल देती और फिर मर्दानी धोती पहन लेती थी। पाठशालाके विद्यार्थी सिरके बाल नहीं बांधते, इसीलिये वह भी बालोंको खोले रहती थी। विद्यार्थी लोग उसके बालोंको लकड़ीकी कंघीसे संवार देते थे। उसके वे घूंघरवाले बाल उसकी पीठ, कन्धों, भुजाओं और गालोंपर लहराते रहते थे। छात्रगण ललाटमें चन्दन लगाकर बीचमें लाल विन्दी लगाते थे। इसलिये शान्ति भी वैसा ही करती थी। उसे कोई यज्ञोपवीत पहननेको नहीं देता था। इसलिये वह बहुत रोया करती थी। परन्तु संध्यापूजनके समय छात्रोंके पास बैठकर वह उनका अनुकरण जरूर करती थी। छात्रगण अध्यापकजीके न रहनेपर अश्लील संस्कृतकी थोड़ी-सी बघार देकर कुछ शृंगाररसकी बातें छेड़ दिया

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

करते थे। शान्ति भी तोतेकी तरह उन्हीं बातोंको कहने लगती थी; पर तोतेहीकी तरह वह भी उन बातोंका अर्थ नहीं समझती थी।

दूसरा फल यह हुआ; कि शान्ति जब कुछ बड़ी हुई, तब विद्यार्थी लोग जो कुछ पढ़ते थे; उसे पढ़ने लगती थी। व्याकरणका वह भले ही एक अक्षर न जानती हो, तोभी भट्टि, रघुवंश, कुमार, नैषध आदिके श्लोकोंको व्याख्यासहित याद करने लगी। यह सब देख-सुनकर, शान्तिके पिता भाग्यपर विश्वास कर उसे मुग्धबोध पढ़ाने लगे, शान्ति बहुत जल्दी-जल्दी पढ़ने लगी। यह देख अध्यापकजीको बड़ा विस्मय हुआ। उन्होंने व्याकरणके साथ-साथ साहित्यके भी दो-एक ग्रंथ पढ़ाये। इसके बाद ही सारा मामला उलट-पुलट गया। उसके पिताका परलोकवास हो गया।

शान्ति निराश्रय हो गयी, पाठशाला टूट गयी। छात्र अपने-अपने घर चले गये। पर उनमेंसे कुछ उसे बहुत प्यार करते थे, इसलिये उनमें शान्तिको छोड़कर जाते नहीं बना। उनमेंसे एक दया करके उसे अपने घर ले गये। यही आगे चलकर सन्तान-सम्प्रदायमें जा मिले और जीवानन्द कहलाने लगे। हम भी सदा जीवानन्दही कहा करेंगे।

उस समय जीवानन्दके माता-पिता जीवित थे। जीवानन्दने उनसे उस कन्याका सारा हाल कह सुनाया। माता-पिताने पूछा, "इस समय इस परायी लड़कीका बोझ कौन अपने सिरपर लेगा?"

जीवानन्दने कहा,—"मैं इसे ले आया हूं, मैंही इसका भार उठाऊंगा।"

मां-बापने कहा,—"अच्छा, यही सही।"

जीवानन्द उस समयतक क्वांरे थे। शान्ति भी व्याह करने योग्य हो गयी थी, अतएव जीवानन्दने उसके साथ अपना विवाह कर लिया।

विवाहके बाद सब लोग हाथ मल-मलकर पछताने लगे। सभी समझ गये कि यह काम अच्छा नहीं हुआ। शान्तिने किसी भी

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

तरह स्त्रियोंकेसे कपड़े नहीं पहने, सिरके बाल नहीं बांधे। वह घरमें रहकर पड़ोसके बालकोंके साथ खेला करती थी। जीवानन्दके घरके पासही जंगल था। शान्ति जंगलमें जा मोर, हरिण और दुर्लभ फल और फूलोंको खोजा करती। सास-ससुरने पहले तो मना किया, पीछे डांट-डपट की, इसके बाद मारा-पीटा और अन्तमें उसे घरमें बन्द करके सांकल चढ़ा दी। इस प्रकारके अत्याचारसे शान्ति ऊब उठी। एक दिन दरवाजा खुला था। वह बिना किसीसे कुछ कहे-सुने चुपचाप घरसे बाहर हो गयी।

जंगलके भीतर जा उसने चुन-चुनकर फूल तोड़े और उन्हींके रसमें कपड़े रंगकर उसने नवजवान संन्यासीका रूप बनाया। उन दिनों सारे बंगालमें दल-के-दल संन्यासी फिरा करते थे। शान्ति भीख मांगती खाती जगन्नाथजीके रास्तेमें जा पहुंची। थोड़े ही दिन बाद वहां संन्यासियोंका एक दल आ पहुंचा। शान्ति भी उसी दलमें मिल गयी।

उस समयके संन्यासी आजकलके संन्यासियोंकी तरह नहीं थे। वे सुशिक्षित, बलवान और अनेक गुणोंसे युक्त होते थे, और दल बांधकर चलते थे। वे एक प्रकारसे पक्के राजविद्रोही थे। सरकारी खजाना लूट खाना उनका काम था। वे हृष्ट-पुष्ट बालकोंको चुरा ले जाते थे और उन्हें खूब पढ़ा-लिखाकर अपने दलमें मिला लेते थे। इससे लोग उन्हें "लड़िकधरवा" कहा करते थे।

शान्ति बालक-संन्यासीके रूपमें ऐसेही एक दलमें जा मिली। पहले तो वे लोग उसके कोमल शरीरको देखकर उसे अपने दलमें मिलाना नहीं चाहते थे, पर पीछे उसकी बुद्धिकी प्रखरता, चतुरता और कार्यदक्षता देख, उन्होंने उसे बड़े आदरसे दलमें मिला लिया। शान्ति उनके साथ रहकर कसरत करती और हथियार चलाना सीखती थी, इसीसे वह धीरे-धीरे बड़ी मिहनती हो गयी। उनके साथ रहकर उसने बहुतसे देश देखे, बहुतसी लड़ाइयां देखीं। वह हथियार चलानेमें भी निपुण हो गयी।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

क्रमशः उसमें जवानीके चिह्न दिखायी देने लगे। बहुतसे संन्यासियोंको यह मालूम हो गया कि यह तो वेश बदले कोई स्त्री है। पर संन्यासी लोग आमतौरसे जितेन्द्रिय हुआ करते हैं। इसीसे किसीने उससे कुछ नहीं कहा।

संन्यासियोंमें बहुतसे पण्डित भी थे। शान्तिको संस्कृतमें व्युत्पन्न देखकर एक पण्डित संन्यासी उसे पढ़ाने लगे।

हम पहले लिख आये हैं कि आमतौरसे संन्यासी लोग जितेन्द्रिय हुआ करते हैं, पर सभी ऐसे नहीं होते। ये पण्डितजी भी वैसे नहीं थे अथवा हो सकता है, कि शांतिकी नयी जवानीके उमंगसे खिले लावण्यको देखकर मुग्ध हो गये हों और इंद्रियां उन्हें सताने लगी हों। उन्होंने अपनी शिष्याको शृंगाररसके काव्य पढ़ाने आरम्भ किये और जो व्याख्या सुनाने योग्य न भी होती उसे भी सुनाने लगे। उससे शांतिकी कुछ हानि तो नहीं हुई; भलाई हुई। अबतक शांति यह नहीं जानती थी, कि लज्जा किसे कहते हैं? अब स्त्री-स्वभाव-सुलभ लज्जा आपही आ उपस्थित हुई। पुरुषचरित्रके ऊपर निर्मल स्त्रीचरित्रकी अपूर्व आभा शांतिके गुणोंको और भी चमकाने लगी। शांतिने पढ़ना छोड़ दिया।

व्याध जिस प्रकार हरिणीके पीछे दौड़ पड़ता है, उसी प्रकार शान्तिके अध्यापक भी उसके पीछे दौड़ने लगे। शांतिने व्यायाम आदिके द्वारा पुरुषोंसे भी अधिक बल संचय कर लिया था, इसलिये वह अध्यापकजीके पास आते ही थप्पड़ों और घूँसोंसे उनकी पूजा करने लगती थी, वे थप्पड़ और घूंसे भी हलके नहीं होते थे, खूब तौल-तौलकर लगाये जाते थे। एक दिन संन्यासीजीने शान्तिको अकेलेमें पाकर जबरदस्ती उसका हाथ पकड़ लिया। शान्ति किसी तरह अपना हाथ न छुड़ा सकी, किन्तु संन्यासीके दुर्भाग्यसे वह शान्तिका बायां हाथ था, इसलिये उसने दाहिने हाथसे संन्यासीके सिरमें इस जोरका घूंसा मारा कि वे मूर्च्छित हो गिर पड़े। उसी दिन शान्ति संन्यासी-दल छोड़कर भाग गयी।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

शान्ति बड़ी निडर थी। वह अकेली ही अपने देशकी ओर भाग चली। साहस और बाहुबलके प्रभावसे वह निर्विघ्न रही। भीख मांगती और जंगली फलोंसे उदर-पोषण करती, मारपीट कर लोगोंको परास्त करती, वह ससुरालमें आ पहुंची। यहां आकर उसने देखा कि ससुर स्वर्गवासी हो गये हैं। उसकी सासने जाति-च्युत होनेके डरसे उसे अपने घरमें न रखा। शान्ति घरसे बाहर चली गयी।

जीवानन्द घरपर ही थे। वे भी शान्तिके पीछे लगे। उन्होंने बीच रास्तेमें उसे जा पकड़ा और उससे पूछा,—"तुम क्यों घरसे भाग गयी थी? इतने दिन कहां थी?"

इसके उत्तरमें शान्तिने सब कुछ सचसच सुना दिया। जीवानंद-को सच-झूठकी अच्छी पहचान थी। उन्होंने शांतिकी बातोंपर विश्वास कर लिया।

अप्सराओंकी-सी बांकी भौंहोंवाली तिरछी चितवनकी ज्योति लेकर जो 'सम्मोहन' नामका तीर बड़े यत्नसे बनाया गया है, उसे कामदेव विवाहित दम्पतिके लिये व्यर्थ ही खर्च करना नहीं चाहते। अंग्रेज़ पूर्णिमाकी रातमें भी खड़कोंपर गैसबत्ती जलाते हैं; बंगाली जिसके सिरमें तेल लगा होता है, उसीके सिरमें और तेल लगाते हैं—मनुष्योंकी बात तो दूर किनार, चंद्रदेव सूर्यदेवके बाद-ही आकाशमें उदित हुआ करते हैं, इन्द्र समुद्रमें ही वृष्टि करता है, जिस सन्दूकमें रुपये भरे होते हैं, कुबेर उसीमें और रुपये डाल देते हैं। यमराज जिसके सब किसीको चौपट कर चुके होते हैं, उसीके बाकी बचे हुए लोगोंको भी उठा ले जाते हैं। केवल कामदेव ही ऐसी निर्बुद्धिताका काम करते हुए नहीं दिखाई पड़ते। जहां गंठ-जोड़ा बँधा कि उन्होंने वहां परिश्रम करना छोड़ दिया। वहांका भार प्रजापतिको देकर वे ऐसी जगह चले जाते हैं, जहां वे किसीके हृदयका रक्तपान कर सकें। परन्तु आज शायद पुष्पधन्वाको और कोई काम नहीं था, इसीसे उन्होंने दो-पुष्पवाणोंका अपव्यय कर

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

डाला। एक तो आकर जीवानन्दके कलेजेमें चुभ गया और दूसरा शान्तिके हृदयमें। इसीने शान्तिको आज पहले पहल इस बातका बोध कराया, कि उसका हृदय स्त्रीका ही हृदय है —बड़ीही कोमल वस्तु है। नवमेघके प्रथम जल-कणोंसे सींची हुई फूलकी कलीकी तरह शान्ति एकाएक खिल गयी और आनन्दभरी आंखोंसे जीवानन्दके मुखकी ओर देखने लगी।

जीवानन्दने कहा —"मैं तुम्हें नहीं छोड़ सकता। देखो, जबतक मैं लौटकर नहीं आता तबतक तुम यहीं खड़ी रहना।"

शांतिने कहा—"तुम लौटकर आओगे तो ?"

जीवानन्दने कुछ उत्तर न दे, बिना किसी ओर देखे, उसी राहके एक तरफवाले नारियलके कुंजमें चुपकेसे शांतिके होंठ चूम लिये। आज मानों अमृतही पीनेको मिल गया, यही सोचते हुए वे घर चले आये।

जीवानन्द मांको समझा-बुझाकर उनसे बिदा मांग चले आये। भैरवीपुरमें उनकी बहन निमाईका व्याह हुआ था। बहनोईके साथ उनकी बड़ी गहरी दोस्ती थी। इसलिये वे शांतिको लिये हुए वहीं आ धमके। उनके बहनोईने उन्हें थोड़ी सी जमीन दी, जिसमें एक झोपड़ी बनाकर वे शांतिके साथ सुखसे रहने लगे। स्वामीके साथ रहते रहते शांतिके चरित्रमें जो मर्दानगी थी, वह धीरे धीरे लुप्त हो गयी। रमणीके रमणीय चरित्रका नित्य नया विकाश होने लगा। पहले कुछ दिनोंतक तो उसका जीवन एक सुख-स्वप्नकी तरह बीता, पर यकायक सुख-स्वप्न टूट गया। जीवानंद सत्यानंदके हाथमें पड़ गये और सन्तान-धर्म ग्रहण कर शांतिको छोड़कर चल दिये। इस परित्यागके बाद निमाईकी बदौलत जो प्रथम साक्षात् इन दोनों स्त्री-पुरुषका हुआ था, उसका हाल पिछले परिच्छेदमें वर्णन किया गया है।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

दूसरा परिच्छेद



जीवानन्दके चले जानेपर शांति निमाईके घरके बरामदेमें जा बैठी। निमाई भी गोदमें उस लड़कीको लिये हुए वहीं आ बैठी। इस समय शांतिकी आंखोंमें आंसू नहीं थे। वह आँखें पोंछ बनावटी हंसीसे मुस्करा रही थी। हां, कुछ-कुछ गम्भीर चिन्तायुक्त और अनमनी अवश्य हो रही थी। निमाई समझ गई, बोली—"खैर, किसी तरह मिलना तो हुआ।"

शांति कुछ न बोली, चुपचाप रही। निमाईने देखा कि शांति अपने दिलकी बात न कहेगी। उसे यह भी मालूम था, कि शांतिको मनकी बात कहना पसन्द नहीं, इसलिये उसने जान-बूझकर दूसरी चर्चा छेड़ दी, बोली,—"बहू! यह लड़की कैसी है?"

शांतिने कहा,—"यह छोकरी तुम्हें कहांसे मिली? तुम्हें लड़की कब हुई?"

निमाई—"क्या मुसीबत है! तुमको यमराज उठा क्यों नहीं ले जाते! भाभी! यह लड़की तो भैयाकी है।"

निमाईने शांतिका जी दुखानेके लिये यह बात नहीं कही थी। उसका मतलब यही था कि इस लड़कीको भैया ले आये हैं। शांति यह न समझी—उसने सोचा, कि निमाईने मेरे कलेजेमें नस्तर चुभानेके लिये यह बात कही है, इसीसे बोल उठी,—"मैंने लड़कीके बापके बारेमें नहीं पूछा था,—मांकी बात पूछी थी।"

उचित दण्ड पाकर निमाई झुंझला उठी। बोली,—"भाई! मैं क्या जानूं कि यह लड़की किसकी है। भैया इसे न जाने कहांसे उठा लाये हैं—मुझे सब हाल पूछनेका अवसर भी न मिला। आजकल देख रही हो कि घोर अकाल पड़ा हुआ है—कितने लोग अपने बाल-बच्चोंको रास्तेपर फेंककर भागे जा रहे हैं। कितने ही आदमी

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

तो हमारे ही घर अपने बच्चोंको बेचनेके लिये आये, पर हमने यही सोचकर किसीको नहीं खरीदा कि पराये बेटी-बेटेका बोझा कौन अपने सिर लेने जाय ?" यह कहते-कहते निमोकी आंखोंमें फिर आंसू भर आये। उन्हें पोंछकर वह फिर कहने लगी,—"लड़की बड़ी सुन्दर है, बड़ा बढ़िया चांदसा मुखड़ा है, इसीसे मैंने इसे भैयासे मांग लिया।"

इसके बाद शान्तिने बड़ी देरतक निमाईके साथ बातें कीं और निमाईके स्वामी जब घर आये तब वहांसे उठकर अपनी कुटियामें चली गयी। वहां पहुंच दरवाजा बन्दकर उसने चूल्हेके भीतरसे थोड़ी सी राख निकाली और बाकी राखपर अपने लिये पकाये हुए भात फेंक दिये। इसके बाद वह बड़ी देरतक खड़ी-खड़ी कुछ सोचती रही। फिर आपही आप बोल उठी,—"इतने दिनसे जो सोच रखा था, उसे आज पूरा करूंगी। जिस आशापर मैंने आज-तक वह काम नहीं किया था वह पूरी हो गयी, पर उसे पूरी हुई कहना चाहिये या नष्ट हुई ? नष्ट। यह जीवन ही सारा व्यर्थ हुआ। जिस बातका मैं संकल्प कर चुकी हूं, उसे तो पूरा करूंगी ही, जो प्रायश्चित्त एक बार किया वही सौ बार भी सही।"

यही सब सोच-विचारकर उसने चूल्हेमें भात फेंक दिया और जंगलसे फल तोड़ लायी। अन्नके बदले उसने वही फल खाये। इसके बाद जिस ढाकेकी साड़ीपर निमाई इतनी लट्टू थी, उसे बाहर निकालकर उसने उसकी किनारी फाड़ डाली और उसे पक्के गेरुए रंगमें रंग डाला। यह सब करते करते संध्या हो गयी। सन्ध्या हो जानेपर घरके किवाड़ बन्दकर शांति एक अद्भुत व्यापारमें प्रवृत्त हुई। उसने कैंची लेकर अपने घुटनेतक लटकनेवाले रूखे बाल काट डाले। जो कुछ बचे, उन्हें लपेटकर उसने जटा बना ली। रूखे बाल अजीब तरहसे जटासे बना लिये गये। इसके बाद उस गेरुए वस्त्रके दो टुकड़े कर उसने एक टुकड़ेका लंगोटा बनाकर पहना और दूसरेकी गांती बनाकर ओढ़ ली, जिससे उसका शरीर

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

ढक गया। घरमें एक छोटासा आईना रखा था। उसे आज बहुत दिनों बाद उसने बाहर निकाला और उसमें अपना रूप देखने लगी। देखते-देखते बोली—"हाय! क्या करनेको थी और मैंने क्या कर डाला?" तब आईनेको अलग फेंककर उसने कटे हुए बालोंकी दाढ़ी-मूंछें बनायीं; पर उन्हें लगा न सकी। उसने कहा—"छिः! छिः! क्या कहीं ऐसा भी होता है? अब वह समय कहां? पर हां, उस बूढ़ेको छकानेके लिये इन्हें रख छोड़ना ठीक है।" यही सोचकर उसने उन नकली दाढ़ी-मूंछोंको कपड़ेमें छिपाकर रख लिया। इसके बाद उसने घरके अन्दरसे एक बड़ीसी मृगछाला निकाल, कण्ठमें बांध, कण्ठसे जानुपर्यन्त शरीर ढक लिया। इस प्रकार नूतन संन्यासीका रूप बना लेनेपर उसने एक बार घरके चारों तरफ स्थिर भावसे देखा। दोपहर रात बीतनेपर उसने उसी संन्यासी वेशमें किवाड़ खोल घरसे बाहर निकल उसी जंगलमें प्रवेश किया। वनकी देवियोंने उस आधीरातके समय जंगलमें एक अपूर्व संगीत होता हुआ सुना।

गीत

नहीं मनोरथ घर रहनेका;
कहलाके अबला नारी।
रण-जय गावो सब जुड़ि आओ,
करो युद्धकी तैयारी।
कौन तुम्हारा? कहांसे आये?
किसके हो? क्या कहलाओ?।
चढ़ घोड़ेपर बांध अस्त्र मैं,
लड़न चली मत लौटाओ॥
हरि-हरि कह तज मोह प्राणका,
समर करूंगी अति भारी।
नहीं मनोरथ घर रहनेका०॥

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कहां चला प्रिय प्राण हमारा,
मुझे छोड़के मत जाना।
महानादसे विजय-नगाड़ा,
बजता है यह मनमाना॥
घोड़े उड़े देख जी उमड़ा,
युद्ध-कामना है भारी।
नहीं मनोरथ घर रहनेका,
कहलाके अवला नारी॥

तीसरा परिच्छेद

दूसरे दिन आनन्दमठके भीतरवाले एक सुनसान मकानमें सन्तानोंके तीनों नायक भग्नोत्साह हो, बैठ बातें कर रहे थे। जीवानन्दने सत्यानन्दसे पूछा—"महाराज! देवता हमलोगोंपर ऐसे अप्रसन्न क्यों हैं? किस अपराधसे हमलोग मुसलमानों द्वारा हराये गये?"

सत्यानन्दने कहा—"देवता अप्रसन्न नहीं हैं, लड़ाईमें तो हार-जीत हुआ ही करती है। उस दिन हम जीते थे, आज हार गये हैं। अन्तमें फिर जीत सकते हैं। मुझे पूरा भरोसा है कि जो इतने दिनोंसे हमारी रक्षा करते आये हैं, वे ही शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी वनवारी फिर हमपर दया दिखलायेंगे। उनके चरण छूकर हम लोगोंने जिस व्रतको ग्रहण किया है, उसका पालन तो हमें करना ही होगा। विमुख होनेसे हमें अनन्त नरक भोगना होगा। मुझे तो आगे मंगल ही मंगल दिखाई देता है। परन्तु जैसे दैवानुग्रह हुए बिना कोई कार्य्य नहीं सिद्ध होता वैसे ही पुरुषार्थ बिना भी कोई काम नहीं सरता। हमारे हारनेका कारण यही हुआ कि हम निहत्थे

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

थे। गोले-गोलियोंके सामने लाठी, बछ और भालेकी क्या हकीकत है! इसलिये यह कहना ही पड़ता है कि हममें पुरुषार्थ नहीं था, इसीसे हम हार गये। अब हमारा कर्त्तव्य है कि हम अपने यहां भी हथियारों और बन्दूकोंका ढेर लगा दें।"

जीवा०—"यह काम तो बड़ाही कठिन है।"

सत्या०—"जीवानन्द! क्या सचमुच बड़ाही कठिन है? सन्तान होनेपर भी तुम्हारे मुंहसे ऐसी बात क्योंकर निकली? क्या सन्तानोंके लिये भो इस दुनियांमें कोई काम बड़ाही कठिन है?"

जीवा०—"आज्ञा दीजिये, कहांसे अस्त्र संग्रह कर लाऊं?"

सत्या०—"इसके लिये मैं आजही रातको तीर्थयात्रा करने निकलूंगा। जबतक मैं न लौटूं, तबतक तुम लोग किसी बड़े भारी काममें हाथ न डालना। हां, आपसमें एकता बनाये रखना, सन्तानोंकी प्राण-रक्षाके लिये खाने-पहननेकी चीजें संग्रह करते रहना और माताकी युद्ध-जयके लिए अर्थसंग्रह करते जाना। यह भार तुम दो जनोंपर रहेगा।"

भवानन्दने कहा,—"आप तीर्थयात्राके समय यह सब सामान क्योंकर इकट्ठा कर सकेंगे? गोली-गोले और तोप-बन्दूकें खरीदकर भेजने से तो बड़ी गड़बड़ मच जायगी। और इतना सामान मिलेगा कहां? कौन इतना सब बेचनेको तैयार होगा, और कौन ला सकेगा?"

सत्या०—"खरीदकर लानेसे हमारा काम नहीं चलेगा। मैं कारीगर भेज दूंगा, उनसे यहीं बनवा लेना होगा।"

जीवा०—"यहीं क्या? इसी आनन्दमठमें?"

सत्या०—"कहीं ऐसा भी हो सकता है? मैं बहुत दिनोंसे इसकी फिक्रमें था, आज भवानन्दकी दयासे मौका हाथ लग गया है। तुम लोग कह रहे थे कि विधाता हमारे प्रतिकूल है, पर मैं तो देख रहा हूं कि वह एकदम अनुकूल है।"

भवा०—"कारखाना कहां खुलेगा?"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

सत्या०—"पदचिह्न-ग्राममें।"

भवा०—"वहां क्यों खुलेगा ?"

सत्या०—"इसी लिये तो मैंने महेंद्रसे यह व्रत ग्रहण करवाना चाहा था और उसके लिये इतना तरद्दुद उठाया है।"

जीवा०—"क्या महेन्द्रने व्रत ले लिया ?"

सत्या०—"लिया नहीं है, लेगा। आजही रातको उसकी दीक्षा होगी।"

जीवा०—"महेन्द्रके लिये क्या-क्या तरद्दुद उठाने पड़े, वह तो हमको मालूमही नहीं। उसकी स्त्री-कन्या क्या हुईं ? वे कहां रखी गयी हैं ? मैंने आज नदीके तीरपर एक कन्या पड़ी पायी थी। उसे मैं अपनी बहनको दे आया हूं। उसके पास एक सुन्दरी स्त्री भी मरी पड़ी थी। कहीं वही तो महेन्द्रकी स्त्री नहीं थी ? मुझे तो ऐसाही शक हो रहा था।"

सत्या०—"हां, वेही महेन्द्रकी स्त्री-कन्या थीं।"

भवानन्द चौंक उठे। अब वे समझ गये, कि मैंने जिस स्त्रीको ओषधिके बलसे पुनर्जीवित किया है, वह महेन्द्रकीही स्त्री कल्याणी है, किन्तु इस समय उन्होंने कोई बात कहनी आवश्यक नहीं समझी।

जीवानन्दने कहा—"महेन्द्रकी स्त्री कैसे मरी ?"

सत्या०—"जहर खाकर।"

जीवा०—"उसने जहर क्यों खाया ?"

सत्या०—"भगवानने उसे प्राण-त्याग करनेके लिये सपनेमें आज्ञा दी थी।"

जीवा०—"वह स्वप्नादेश क्या सन्तानोंके कार्योद्धारकेही निमित्त हुआ था ?"

सत्या०—"महेन्द्रसे तो मैंने ऐसा ही कुछ सुना था। अच्छा, अब सायंकाल हो चला है। मैं संध्या-पूजा करने जाता हूं। उसके बाद नूतन सन्तानोंको दीक्षित किया जायगा।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

भवा०—"क्या बहुतसे नये सन्तान दीक्षा लेनेवाले हैं? क्या महेंद्रके सिवा और कोई आदमी शिष्य होना चाहता है?"

सत्या०—"हां, एक और नया आदमी है। पहले तो मैंने उसे कभी नहीं देखा था। आजही वह मेरे पास आया है। वह बड़ाही नवजवान और सुन्दर पुरुष है। मैं उसकी चाल-ढाल और बात-चीतसे बड़ाही प्रसन्न हुआ। वह एक दम खरा सोना मालूम पड़ता है। उसे सन्तानोंका कर्त्तव्य सिखलानेका भार जीवानन्दको दिया जाता है। इसका कारण यह है कि जीवानन्द लोगोंका मन मोह लेनेमें बड़ा चतुर है। मैं चलता हूं, तुम लोगोंसे सिर्फ एक बात और कहनेको रह गयी है। दत्तचित्त होकर उसे भी सुन लो।"

दोनोंने हाथ जोड़े हुए कहा—"जो आज्ञा।"

सत्यानन्दने कहा—"यदि तुम दोनोंमें किसीसे कोई अपराध बन आया हो अथवा मेरे लौट आनेके पहले कोई नया अपराध बन पड़े, तो उसके लिये मेरे आये बिना प्रायश्चित्त न करना। मेरे आनेपर प्रायश्चित्त करना ही पड़गा।"

यह कह सत्यानन्द अपने स्थानको चले गये। भवानन्द और जीवानन्द परस्पर एक दूसरेका मुंह देखने लगे।

भवानंदने कहा—"यह बात कहीं तुम्हारेही ऊपर डालकर तो नहीं कही गयी है?"

जीवा०—"हो सकता है, क्योंकि मैं महेन्द्रकी कन्याको रख आनेके लिये बहनके घर चला गया था।"

भवा०—"इसमें भला कौनसा अपराध हुआ? वह तो कोई निषिद्ध कार्य नहीं है। कहीं अपनी स्त्रीसे भी तो नहीं मिल आये हो?"

जीवा०—"शायद गुरुजीको यही संदेह हुआ है।"

——

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

चौथा परिच्छेद

संध्या-पूजा समाप्तकर सत्यानन्दने महेन्द्रको बुलाकर कहा—"तुम्हारी स्त्री और कन्या जीवित हैं।"

महेन्द्र—"कहां हैं, महाराज ?"

सत्या०—"तुम मुझे महाराज क्यों कहते हो ?"

महेन्द्र—"सभी कहते हैं, इसीलिये मैं भी कहता हूं। मठके अधिकारी राजा कहलाते ही हैं। महाराज, मेरी कन्या कहां है ?"

सत्या०—"इसका जवाब पानेके पहले एक बातका ठीक-ठीक जवाब दो। क्या तुम सन्तानधर्म ग्रहण करना चाहते हो ?"

महेंद्र—"हां, पक्का इरादा कर चुका हूं।"

सत्या०—"तब यह न पूछो कि तुम्हारी स्त्री-कन्या कहां हैं।"

महेंद्र—"क्यों महाराज ?"

सत्या०—"जो मनुष्य यह व्रत ग्रहण करता है, उसे स्त्री, पुत्र, कन्या और सगे-सम्बन्धियोंसे नाता तोड़ देना पड़ता है। स्त्री, पुत्र, कन्या आदिका मुंह देखना भी पाप है। उसके लिये प्रायश्चित्त करना पड़ता है। जबतक सन्तानोंका मनोरथ सिद्ध नहीं होता, तबतक तुम अपनी कन्याका मुंह न देखने पाओगे। इसलिये यदि तुमने संतानधर्म ग्रहण करनेका पक्का इरादा कर लिया हो, तो फिर कन्याका हाल न पूछो। पूछकर ही क्या करोगे ? तुम उसे देखने तो पाओगेही नहीं।"

महेन्द्र—"ऐसा कठिन नियम क्यों प्रभो ?"

सत्या०—"संतानोंका काम बड़ाही कठिन है। जो सर्वत्यागी है, उसके सिवा दूसरेसे यह काम नहीं हो सकता। जिसका चित्त मायाके जालमें फंसा है, वह डोरीमें बंधे हुए पतङ्गकी तरह पृथ्वी छोड़कर स्वर्ग नहीं जा सकता।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

महेन्द्र—"महाराज! आपकी बात अच्छी तरह मेरी समझमें नहीं आती। जो स्त्री-पुत्रका मुख देखता है, वह क्या किसी गुरुतर कार्यका अधिकारी नहीं हो सकता?"

सत्या०—"पुत्र-कलत्रको देखतेही हमलोग देवताकी बात भूल जाते हैं। सन्तानधर्मका यह नियम है कि जभी प्रयोजन हो, तभी संतानगण प्राण त्याग दें। तुम यदि अपनी कन्याका मुंह देख लोगे, तो क्या उसे छोड़कर तुमसे प्राण दिये जायंगे?"

महेन्द्र—"न देखनेपरही क्या उसे भूल जाऊंगा?"

सत्यानन्द—"अगर न भूल सकोगे तो यह व्रत मत ग्रहण करो।"

महेन्द्र—"क्या सभी सन्तानोंने इसी तरह स्त्री-पुत्रकी मोह-माया त्यागकर यह व्रत ग्रहण किया है? तब तो संतानोंकी संख्या बहुतही कम होगी?"

सत्या०—"सन्तान दो तरहके हैं—एक दीक्षित दूसरे अदीक्षित। जो दीक्षित नहीं हैं, वे संन्यासी या भिखारी हैं। वे केवल युद्धके समय चले आते हैं और लूटके मालमें हिस्सा-इनाम पाकर चले जाते हैं। जो दीक्षित हैं, वे सब कुछ छोड़ बैठे हैं। वेही इस सम्प्रदायके कर्त्ता-धर्त्ता हैं। मैं तुम्हें अदीक्षित सन्तान नहीं बनाना चाहता, क्योंकि लड़ने-भिड़नेके लिये भाले-बर्छी और लाठी सोटेवाले तो बहुतसे हैं। दीक्षित हुए बिना तुम सम्प्रदायका कोई गुरुतर कार्य नहीं कर सकोगे।"

महेन्द्र—"दीक्षा कैसी? मैं दीक्षा क्यों लूं? मैं तो पहलेही मंत्र ले चुका हूं।"

सत्या०—"वह मन्त्र छोड़कर मुझसे फिर दूसरा मन्त्र लेना होगा।"

महेन्द्र—"वह मन्त्र कैसे त्याग कर सकता हूं?"

सत्यानन्द—"उसकी विधि मैं तुम्हें बतला दूंगा।"

महेन्द्र—"नया मन्त्र क्यों लेना पड़ेगा?"

सत्या०—"सन्तानलोग वैष्णव हैं।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

महेंद्र—"यह तो मेरी समझमें नहीं आता। ये संतानलोग कैसे वैष्णव हैं ? वैष्णवोंके लिये तो अहिंसाही बड़ा भारी धर्म है।"

सत्या०—"अहिंसावाले चैतन्यदेवके अनुयायी वैष्णव हैं। नास्तिक बौद्धधर्मके अनुकरणपर जो अप्राकृतिक वैष्णवधर्म उत्पन्न हुआ था, यह उसीका लक्षण है; परन्तु सच्चे वैष्णवधर्मका लक्षण दुष्टोंका दमन और धरित्रीका उद्धार है; क्योंकि विष्णुही संसारके पालनकर्त्ता हैं। उन्होंने दस बार शरीर धारणकर पृथ्वीका उद्धार किया है। केशी, हिरण्यकशिपु, मधुकैटभ, मुर, नरक आदि दैत्यों; रावणादि राक्षसों और कंस तथा शिशुपाल आदि राजाओंको उन्होंनेही युद्ध-में मार गिराया था। वेही जेता, जयदाता, पृथ्वीके उद्धारकर्त्ता और सन्तानोंके इष्ट देवता हैं। चैतन्यदेवका वैष्णवधर्म तो अधूरा है। वह सच्चा वैष्णवधर्म नहीं है। चैतन्यदेवके विष्णु प्रेममय हैं, किन्तु भगवान केवल प्रेममयही नहीं, अनन्त शक्तिमय भी हैं। चैतन्यके विष्णु केवल प्रेममय हैं, सन्तानोंके विष्णु केवल शक्तिमय हैं। हम दोनोंही वैष्णव हैं, पर आधेही वैष्णव हैं। अब बात समझमें आई कि नहीं ?"

महेंद्र—"नहीं. यह तो बिलकुल नयी बातें मालूम पड़ती हैं। कासिमबाजारमें एक बार एक पादरी मिला था। वह भी कुछ ऐसी-ही बातें करता था। कहता था कि ईश्वर प्रेममय है, तुमलोग ईसामसीहको प्यार करो। आपकी बातें भी उसीकीसी मालूम पड़ती हैं।"

सत्या०—"जैसी बातें हमारे बाप-दादे कहते चले आये हैं, वैसी-ही बातें तो मैं कह रहा हूं। तुमने यह सुना है या नहीं कि ईश्वर त्रिगुणात्मक हैं ?"

महेन्द्र—"हां सुना है। सत्त्व, रज और तम—ये तीन गुण हैं।"

सत्या०—"बहुत ठीक। इन तीनों गुणोंकी अलग-अलग उपा-सना होती है। सत्वगुणकी उपासना भक्तिद्वारा करनी चाहिये। चैतन्यका सम्प्रदाय यही करता है। रजोगुणसे उनकी शक्ति उत्पन्न होती है।

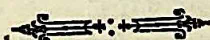
CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

इनकी उपासना युद्धद्वारा की जाती है, देवताके शत्रुओंको मारकर की जाती है। हमलोग ऐसाही करते हैं। और तमोगुणसे भगवानने शरीर धारणकर, चतुर्भुज आदि रूप इच्छानुसार धारण किये हैं। माला, चन्दन आदि उपहारोंके द्वारा इस गुणकी पूजा की जाती है। सर्वसाधारण ऐसा ही करते हैं। अब समझे या नहीं?"

महेंद्र—"समझा। तब तो सन्तानगण भी एक प्रकारके उपासक-ही हैं।"

सत्या०—"अवश्य। हमलोग राज्य नहीं चाहते, पर चूंकि ये मुसलमान भगवान्से द्वेष करते हैं, इसीलिये हम उनको निर्मूल कर डालना चाहते हैं।"

पांचवां परिच्छेद



बातचीत समाप्त कर, सत्यानन्दने महेंद्रको लेकर मठके भीतर-वाले मन्दिरमें, जहां वह शोभामयी प्रकाण्ड चतुर्भुज मूर्त्ति विराजती थी, प्रवेश किया। उस समय वहांकी शोभा बड़ी ही विचित्र थी। सोने, चांदी और रत्नोंसे जगमगाते हुए प्रदीप मन्दिरको आलोकित कर रहे थे। ढेरके ढेर फूल शोभायमान होते हुए मन्दिरमें सुगन्ध फैला रहे थे। एक आदमी वहाँ बैठा हुआ धीरे-धीरे "हरे मुरारे" कह रहा था। सत्यानन्दके भीतर घुसतेही उसने उठकर उन्हें प्रणाम किया। ब्रह्मचारीने पूछा—"तुम दीक्षित होना चाहते हो?"

उसने कहा—"मेरे ऊपर दया कीजिये।"

यह सुन, उसे और महेंद्रको सम्बोधन कर सत्यानन्दने कहा—"तुमलोगोंने यथाविधि स्नान कर लिया है न? अच्छी तरहसे संयम और उपवास किये हुए हो न?"

उत्तर—"हां"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

सत्या०—"अच्छा, तुमलोग यहीं भगवान्‌के सामने प्रतिज्ञा करो कि हम सन्तानधर्मके सब नियमोंका पालन करेंगे।"

दोनों—"करेंगे।"

सत्या०—"जबतक माताका उद्धार नहीं हो जाता, तबतक गृहस्थधर्मका परित्याग करोगे न?"

दोनों—"हां, करेंगे।"

सत्या०—"मां-बापको त्याग दोगे?"

दोनों—"हां।"

सत्या०—"भाई-बहनको?"

दोनों—"हां, उन्हें भी छोड़ देंगे।"

सत्या०—"स्त्री-पुत्रको?"

दोनों—"उन्हें भी त्याग देंगे।"

सत्या०—"सगे-सम्बन्धियों और दास-दासियोंको?"

दोनों—"उन्हें भी छोड़ देंगे।"

सत्या०—"धन,सम्पद्, भोग-विलास?"

दोनों—"आजहीसे इन सबको छोड़ देंगे।"

सत्या०—"इन्द्रियोंको वशमें रखोगे न? कभी किसी स्त्रीके साथ एक आसनपर न बैठोगे?"

दोनों—"नहीं बैठेंगे। इन्द्रियोंको वशमें रखेंगे।"

सत्या०—"भगवान्‌के सामने प्रतिज्ञा करो, कि अपने लिये या अपने सगे-सम्बन्धियोंके लिये अर्थोपार्जन न करोगे। जो कुछ पैदा करोगे, उसे वैष्णवोंके धनागारमें दोगे।"

दोनों—'हां, ऐसाही करेंगे।"

सत्या०—"सन्तानधर्मके लिये स्वयं अस्त्र हाथमें लेकर युद्ध करोगे न?"

दोनों—"हां।"

सत्या०—"रणसे कभी पीछे तो न हटोगे?"

दोनों—"कभी नहीं।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

सत्या०—"यदि तुम्हारी यह प्रतिज्ञा भङ्ग हो जाय ?"

दोनों—"तो एक जलती चितामें प्रवेश कर या विष खाकर प्राण त्याग कर देंगे ।"

सत्या०—"एक बात और है । तुम किस जातिके हो ? महेंद्र तो कायस्थ है ।"

दूसरेने कहा—"मैं तो ब्राह्मणका बालक हूं ।"

सत्या०—"अच्छी बात है । क्या तुम अपनी जाति त्याग कर सकोगे ? सब सन्तानोंकी जाति एक है । इस सदाव्रतमें ब्राह्मण-शूद्र-का कोई विचार नहीं है । बोलो, क्या कहते हो ?"

दोनों—"हम सब एकही मांकी सन्तान हैं । अतएव हमलोग जाति-पाँतिका विचार न करेंगे ।"

सत्या०—"तब आओ, मैं तुम लोगोंको दीक्षा दूँ । देखना, तुमलोगोंने जो प्रतिज्ञायें अभीकी हैं, उन्हें कभी न तोड़ना । स्वयं मुरारी इसके साक्षी रहेंगे, जिन्होंने रावण,कंस, हिरण्यकशिपु, जरासन्ध, शिशुपाल आदिको मार डाला था, जो सर्वान्तर्यामी, सर्वमय, सर्वशक्तिमान और सर्वनियन्ता हैं , जो इन्द्रके वज्र और बिल्लीके नखोंमें तुल्यरूपसे वास करते हैं, वेही प्रतिज्ञा भंग करने-वालेको मारकर घोर नरकमें डाल देंगे ।"

दोनों—"बहुत अच्छा ।"

सत्या०—"अच्छा तो अब गाओ—"वन्देमातरम् ।"

दोनोंही उस अकेले मातृमन्दिरमें मातृ-स्तुतिका गान करने लगे । इसके बाद ब्रह्मचारीने उन लोगोंको यथाविधि दीक्षा दी ।

छठा परिच्छेद



दीक्षा समाप्तकर सत्यानन्द महेंद्रको एकान्त स्थानमें ले गये । दोनोंके बैठ जानेपर सत्यानन्दने कहा,—"देखो, बेटा ! तुमने जो

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

यह महाव्रत ग्रहण किया है, इससे मैं समझता हूं कि भगवान् हम-लोगोंके प्रति अनुकूल हो रहे हैं। तुम्हारे हाथों सांझा बहुत काम निकलेगा। तुम खूब मन लगाकर मेरी बातें सुनो। मैं तुमको जीवानन्द और भवानन्दके साथ-साथ वन-वन भटकते हुए युद्ध करनेको नहीं कहता। तुम पदचिह्न ग्राममें लौट जाओ। तुम्हें घरपर रहकर ही सन्तानधर्मका पालन करना होगा!"

यह सुन, महेन्द्र बड़े ही विस्मित और दुःखित हुए, पर कुछ बोले नहीं। ब्रह्मचारी कहने लगे,—"यहां हमारा कोई आश्रय नहीं है—ऐसा कोई स्थान नहीं है, जहां यदि कोई प्रबल सेना आकर हमें घेर ले, तो हम रसद-पानी ले, दरवाजा बन्द कर, दस दिन निर्विघ्न रह सकें। हमारे पास कोई किला तो है नहीं—तुम्हारे महल-अटारी हैं, गांवपर तुम्हारा रोबदाब है। मेरी इच्छा है कि वहां एक गढ़ बनाऊं। खाई और शहर-पनाहोंके द्वारा पदचिह्न ग्रामको अच्छी तरह घेरकर, बीच-बीचमें पहरेका इन्तजाम कर देने और बांधके ऊपर तोपें बैठा देनेसे बड़ा बढ़िया किला तैयार हो जायगा। तुम अपने घर चले जाओ, धीरे-धीरे सन्तान-सम्प्रदायके दो हजार आदमी भी वहां पहुंच जायँगे। वे ही लोग यह खाई और बांध वगैरह तैयार कर देंगे। तुम वहां एक बड़ासा लोहेका मकान बनवा लेना, जिसमें सन्तानोंका खजाना रहेगा। मैं अशर्फियोंसे भरे हुए सन्दूक एक-एक कर तुम्हारे पास भेजता रहूंगा। तुम उसी धनसे धीरे-धीरे यह सब काम पूरा करा लेना। मैं जगह-जगहसे होशियार कारीगर ढूंढ़ कर वहां भेजूंगा। उनके पहुंच जानेपर तुम वहां कारखाना खोल देना, जिसमें तोप, गोला, गोली, बारूद और बन्दूकें तैयार हुआ करेंगी। मैं इसीलिये तुम्हें घर जानेको कह रहा हूं।

महेंद्रने सब स्वीकार कर लिया।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

सातवां परिच्छेद



सत्यानन्दके चरणोंमें प्रणामकर महेंद्र जब चले गये, तब वह दूसरा शिष्य जो उसी दिन दीक्षित हुआ था, वहाँ आ पहुंचा। उसके प्रणाम करनेपर सत्यानन्दने उसे आशीर्वाद देकर मृगचर्मपर बैठनेके लिये कहा। इधर-उधरकी कुछ बातें करनेके अनन्तर उन्होंने कहा—"कृष्णमें तुम्हारी गहरी भक्ति है या नहीं?"

शिष्यने कहा—"सो कैसे कहूं? मैं जिसे भक्ति समझता हूं, वह या तो दुनियांकी आंखोंमें धूल झोंकना है या अपनी आत्माके साथ धोखा करना है।"

सत्यानन्दने सन्तुष्ट होकर कहा—"ठीक कहते हो. जिससे भक्ति दिन-दिन गहरी हो, वही काम करना। मैं आशीर्वाद करता हूं कि तुम्हारा प्रयास सफल होगा; क्योंकि तुम्हारी उमर अभी बहुत थोड़ी है। अच्छा, बेटा! मैं तुम्हें क्या कहकर पुकारा करूं? मैं तो यह बात पूछना ही भूल गया था।'

नूतन सन्तानने कहा...आपकी जो इच्छा हो वही कहकर पुकारें। मैं तो वैष्णवोंका दासानुदास हूं।"

सत्यानन्द—"तुम्हारी यह नवीन अवस्था देखकर तो तुम्हें नवीनानन्द ही कहकर पुकारनेकी इच्छा होती है। बस, आजसे तुम्हारा यही नाम हुआ। पर एक बात तो बतलाओ—तुम्हारा पहला नाम क्या था? यदि कहनेमें कोई बाधा हो, तोभी कह देना। मुझसे कह दोगे, तो निश्चय जान रखो, कि कोई तीसरा यह न जानने पायेगा। सन्तानधर्मका मर्म यही है कि जो न कहने योग्य हो, वह बात भी गुरुसे कह देनी चाहिये। कह देनेसे कोई क्षति नहीं होती।"

शिष्य—"मेरा नाम शांतिराम देव शर्मा है।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

"नहीं, तेरा नाम शांतिमणि पापिष्ठा है।" यह कहकर सत्यानन्दने अपने शिष्यकी काली और डेढ़ हाथ लम्बी दाढ़ी बायें हाथसे पकड़कर खींची। बस, नक़ली दाढ़ी झटसे अलग हो गयी। सत्यानन्दने कहा—"जा बेटी! तू मेरेही साथ धोखाधड़ी करने आयी थी? यदि छकानेही चली थी, तो फिर तूने यह डेढ़ हाथ लम्बी दाढ़ी क्यों लगायी। दाढ़ी अगर ठीक बैठ भी जाती, तो यह कोमल कण्ठस्वर और यह चितवन कैसे छिपा लेती? यदि मैं ऐसा बोदा होता, तो फिर इतने बड़े काममें हाथ क्योंकर लगाता?"

लजायी हुई शान्ति दोनों हाथोंसे आंखें छिपाये और सिर झुकाये हुये कुछ देरतक बैठी रही। इसके बाद हाथ हटाकर उसने बूढ़े बाबापर एक तिरछी चितवनका वार कर कहा—"प्रभो! मैंने कुछ अपराध तो नहीं किया। क्या स्त्रियोंके हाथमें बल नहीं होता?"

सत्या०—"उतनाही, जितना गायके खुरमें जल समा सकता है।"

शान्ति—"आप क्या कभी सन्तानोंके बाहुबलकी परीक्षा भी लेते हैं?"

सत्या०—"हां, लेता हूं।" यह कहकर सत्यानन्दने एक फौलादका धनुष और कुछ थोड़ेसे लोहेके तार लाकर शान्तिके हाथमें देते हुए कहा—"इस फौलादके धनुषपर इस तारकी प्रत्यञ्चा चढ़ानी होती है। प्रत्यञ्चा दो हाथकी होती है। प्रत्यञ्चा चढ़ाते-चढ़ाते धनुष उछल पड़ता है, जिससे प्रत्यञ्चा चढ़ानेवालाही दूर जा गिरता है। इसपर जो सही-सलामत प्रत्यञ्चा चढ़ा दे, उसेही मैं बलवान् समझता हूं।"

शान्तिने उस धनुष और तारकी भलीभांति परीक्षा कर कहा—"क्या सभी सन्तान इस परीक्षामें उत्तीर्ण हो चुके हैं?"

सत्या०—"नहीं, मैंने इसके द्वारा उनके बलका अनुमानमात्र कर लिया है।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

शान्ति—"कौन-कौन इस परीक्षामें उत्तीर्ण हुए हैं ?"

सत्या०—"सिर्फ चार आदमी।"

शान्ति—"कौन-कौन ? क्या मैं यह पूछ सकती हूं ?"

सत्या०—"हां, कोई आपत्ति नहीं है ? एक तो मैंही इस परीक्षामें उत्तीर्ण हो चुका हूं।"

शान्ति—"और कौन-कौन उत्तीर्ण हुए हैं ?"

सत्या०—"जीवानन्द, भवानन्द और ज्ञानानन्द।"

यह सुन, शान्तिने धनुष और तीर लेकर झटपट धनुषका रौंदा कस दिया और ब्रह्मचारीके चरणोंके पास रख दिया।

सत्यानन्द विस्मित, भीत और स्तम्भित हो गये। थोड़ी देर बाद बोले—"यह क्या ? तुम देवी हो या मानवी ?"

शान्तिने हाथ जोड़कर कहा,—"मैं सामान्य मानवी हूं, पर हां, ब्रह्मचारिणी हूं।"

सत्या०—"सो कैसे ? क्या तुम बालविधवा हो ? नहीं, बाल-विधवाओंमें भी इतना बल नहीं होता; क्योंकि वे एकही समय भोजन करती हैं।"

शान्ति—"मैं सधवा हूं।"

सत्या०—"तो क्या तुम्हारा स्वामी लापता है ?"

शान्ति—"नहीं, उनका पता-ठिकाना है और मैं उन्हींका पता पाकर यहां आयी भी हूं।"

सहसा सत्यानन्दके चित्तमें एक बात वैसेही झलक आयी, जैसे मेघमालाको हटाकर एकाएक धूप निकल आये। उन्होंने कहा,—"अच्छा मुझे याद आ गया। जीवानन्दकी स्त्रीका नाम शान्ति था। कहीं तुम जीवानन्दकीही स्त्री तो नहीं हो ?"

नवीनानन्दने अपने मुंहको जटासे ढक लिया, मानों कमलके फूलोंपर हाथीकी सूंड़ फैल गयी। सत्यानन्द बोले—"तू यह पाप करने क्यों आयी ?"

यकायक अपनी जटाको पीठपर फेंक, शान्तिने मुंह उठाकर

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कहा—"प्रभो! पाप कैसा? पत्नीको स्वामीका अनुसरण करना क्या पाप कहलाता है? यदि सन्तानोंका धर्मशास्त्र इसे पाप वतलाता हो, तो यह सन्तानधर्म अधर्म है। मैं उनकी सहधर्मिणी हूं। वे धर्माचरणमें लगे हैं, इसलिये मैं उनके धर्ममें सहायता करने आयी हूं।"

शान्तिकी तेजभरी वाणी सुन, और उसकी बांकी गरदन, उठी हुई छाती, कांपते हुए अधर और उज्ज्वल तथा नीरपूर्ण नेत्र देख, सत्यानन्द बड़ेही प्रसन्न हुए, बोले,—"तुम साध्वी हो, इसमें सन्देह नहीं, किन्तु वेटी, पत्नी केवल गृहधर्ममेंही सहधर्मणी मानी जाती है। वीरधर्ममें रमणीकी सहायता कैसी?"

शान्ति—"कौनसे महावीर विना पत्नीके ही वीर हो गये हैं? यदि सीता न होती तो राम थोड़ेही वीर हो सकते थे? वतलाइये तो सही, अर्जुनने कितने विवाह किये थे? भीममें जितना बल था, उनके उतनी ही पत्नियाँ भी थीं। कहांतक कहूं? आपको वतलानेकी जरूरत नहीं है।"

सत्या०—"ठीक है, पर कौन वीर अपनी स्त्रीको लेकर रणभूमिमें गया है?"

शान्ति०—अर्जुन जिस समय यादवी सेनाके साथ आकाशमार्गसे युद्ध कर रहे थे, उस समय किसने उनका रथ चलाया था? द्रौपदी यदि साथ न रहती, तो पाण्डवगण कुरुक्षेत्रकी लड़ाईमें जूझने थोड़े ही जाते?"

सत्या०—"ठीक है, पर साधारण लोगोंके मन स्त्रियोंको देखकर चञ्चल हो जाते हैं, जिससे वे काममें ढिलाई करने लगते हैं इसीलिये सन्तानोंसे यह प्रतिज्ञा करायी जाती है कि वे किसी स्त्रीके साथ एक आसनपर न बैठें। जीवानन्द मेरा दाहिना हाथ है। तुम क्या मेरा दाहिना हाथही तोड़ने चली हो?"

शान्ति—"नहीं, मैं आपके दाहिने हाथका बल बढ़ाने आयी हूं। मैं ब्रह्मचारिणी हूं और प्रभुके पास ब्रह्मचारिणीही बनकर रहूंगी।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

में केवल धर्माचरण करने आयी हूं—स्वामीके दर्शन करनेके लिये नहीं। मैं विरहकी ज्वालासे जल नहीं रही हूं। स्वामीने जो धर्म स्वीकार किया है, उसमें मेरा हिस्सा क्यों न होगा; यही सोचकर मैं चली आयी हूं।"

सत्या०—"अच्छी बात है, मैं कुछ दिनोंतक परीक्षा लूंगा।"

शांतिने पूछा—"मैं आनन्दमठ रहने पाऊंगी न?"

सत्या०—"तो आज फिर कहां जाओगी?"

शांति—"इसके बाद?"

सत्या०—'माता भवानीकी तरह तुम्हारे ललाटमें भी अग्नि है। संतान-सम्प्रदायकोही क्या भस्म करोगी?"

यह कह, आशीर्वाद दे, सत्यानन्दने शांतिको विदा किया। शांतिने आपही-आप कहा—"अच्छा बुड्ढे! रह जा—मेरे ललाटमें आग लगी है न? अच्छा, तो मैं देखूंगी, कि तेरी मांके कपालमें आग लगी है या मेरे?"

सच पूछो, तो सत्यानदका यह अभिप्राय नहीं था—उन्होंने उसकी आंखोंमें जो बिजली थी, उसीकी बात कही थी। पर क्या ऐसी बात किसी बूढ़े-बड़ेको नौजवानोंसे कहनी चाहिये।

आठवां परिच्छेद



शांतिको उस दिन रातभरके लिये मठमें रहनेकी आज्ञा मिली थी, इसलिये वह रहनेके लिये घर ढूंढ़ने लगी। अनेक घर खाली पड़े थे। गोवर्द्धन नामका नौकर—वह भी एक छोटामोटा सन्तान-ही था—हाथमें चिराग लिये उसे घर दिखाता फिरता था। कोई घर शांतिको पसंद नहीं आया। हताश होकर गोवर्द्धन शांतिको

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

सत्यानन्दके पास ले चला। शान्तिने कहा—"क्यों भाई! इधरके कई घर तो तुमने दिखलाये ही नहीं?"

गोवर्द्धनने कहा,—"वे सब घर अच्छे हैं, इसमें संदेह नहीं; पर सबमें आदमी भरे हैं।"

शांति—"कैसे-कैसे लोग हैं?"

गोव०—"बड़े-बड़े सेनापतिगण।"

शांति—"बड़े-बड़े सेनापति कौन-कौन हैं?"

गोव०—"भवानन्द, जीवानन्द, धीरानन्द, ज्ञानानंद। इस आनन्दमठमें सब आनंद-ही-आनंद हैं।"

शांति—"चलो, मैं जरा उन घरोंको देख लूं।"

यह सुन, गोवर्द्धन पहले तो शांतिको धीरानंदके घरमें ले गया। उस समय धीरानन्द महाभारतका द्रोणपर्व पढ़ रहे थे। अभिमन्युने किस प्रकार सप्तरथियोंके साथ युद्ध किया था यही पढ़नेमें वे डूबे हुए थे। उन्होंने कुछ भी न कहा। शांति भी चुपचाप वहाँसे लौट आयी।

इसके बाद वह भवानन्दके घर गयी। उस समय वे ऊपरको दृष्टि किये, किसीका मुखड़ा याद कर रहे थे। किसका मुखड़ा, सो तो नहीं मालूम, पर शायद वह मुख बड़ा ही सुन्दर था। उसके काले-काले घुंघराले और सुगन्धियुक्त केश कानोंतक फैली हुई भौंहोंपर आ पड़े थे। बीचमें विराजित सुंदर और त्रिकोण ललाट-पर मृत्युकी भयङ्कर छाया पड़ रही थी। मानों वहां मृत्यु और मृत्युञ्जयका आपसमें द्वन्द्व युद्ध हो रहा था। आंखें बन्द, भौंहें स्थिर, होंठ नीले, गाल पीले, नाक ठंढी, छाती फूली हुई, और हवासे कपड़े उड़ रहे थे। इसके बाद जैसे शरतकालका मेघ-निर्मुक्त चन्द्रमा धीरे-धीरे मेघमालाको उज्ज्वल बनाता हुआ अपना सौंदर्य विकसित करता है, जैसे प्रभातसूर्य तरङ्गोंके आकारवाले मेघोंको क्रमसे सुनहला बनाता हुआ आपही जगमगा उठता है, दशों दिशाओंको आलोकित करता हुआ स्थल, जल, कीट, पतङ्ग सबको

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

प्रफुल्लित करता है, उसी तरहसे धीरे-धीरे उस मृत देहमें मानों प्राण-सञ्चार हो रहा था। अहा! कैसी शोभा है! भवानन्द बैठे-बैठे यही सब सोच रहे थे। इसलिये वे भी कुछ न बोले। कल्याणीका रूप देखकर उनका हृदय कातर हो गया था; इसीलिये शांतिके रूपपर उनकी दृष्टि न पड़ी।

शांति एक दूसरे कमरेमें चली गयी। वहां पहुंचकर उसने पूछा—"यह घर किसका है?"

गोवर्द्धनने कहा—"जीवानन्द महाराजका।"

शांति—"ये कौन हैं, भाई? यहां तो कोई नजरही नहीं आता।"

गोवर्द्धन—"मालूम होता है कि वे कहीं गये हैं। अभी आते होंगे।"

शांति—"यह घर तो सबोंसे अच्छा है।"

गोवर्द्धन—"पर इस घरमें तो आपको जगह नहीं मिल सकती।"

शांति—"क्यों?"

गोवर्द्धन—"क्योंकि यहां जीवानंद महाराज रहते हैं।"

शांति "वे किसी और घरमें जा रहेंगे।"

गोवर्द्धन—"भला ऐसा भी कभी हो सकता है? जो इस घरमें रहते हैं, वेही एक तरहसे सबके मालिक हैं। वे जो कुछ करते हैं वही होता है।"

शांति—"अच्छा, तुम जाओ, मुझे यहां जगह न मिलेगी, तो पेड़की छाया तो है?"

यह कह, गोवर्द्धनको वहांसे हटाकर शांति उस घरके अन्दर चली गयी। भीतर आ जीवानन्दके काले हरिणके चमड़ेपर आसन जमाकर बैठ गयी और दीपकको जरा तेजकर जीवानंदकी एक पुस्तक हाथमें लेकर पढ़ने लगी।

कुछही देरमें वहां जीवानंद आ पहुंचे। शांतिको मर्दानी

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

पोशाकमें देखकर भी वे झट उसे पहचान गये और बोले,—"यह क्या ? ऐं ! शांति ?"

शांतिने धीरे-धीरे उस पुस्तकको नीचे रख दिया और जीवानंद-की ओर देखते हुए कहा—"शांति किसका नाम है जी ?"

जीवानन्दको तो काठसा मार गया—उनकी बोली बन्द हो गयी। अपनेको बहुत कुछ सम्हालकर वे बोले,—"क्या तुम शान्ति नहीं हो ?"

शांतिने घृणाके साथ कहा,—"नहीं, मेरा नाम नवीनानन्द गोस्वामी है।" यह कह, वह फिर पुस्तक पढ़ने लगी।

जीवानन्द बड़े जोरसे हंस पड़े, बोले,—"यह तो गिलहरी एक-दम नया रङ्ग लायी है। अच्छा, तो कहो नवीनानन्दजी ! तुम्हारा यहां किस लिये आना हुआ ?"

शांतिने कहा,—"भले आदमियोंके बातचीत करनेका यह नियम है कि पहले पहलकी देखादेखीमें बातचीत करते समय आप या जनाब कहकर पुकारते हैं। आप देख रहे होंगे, कि मैं स्वयं भी आपके प्रति कोई अनादर-सूचक शब्द मुंहसे नहीं निकालती। फिर आप क्यों मुझे तुम-तुम कह रहे हैं ?"

"जो आज्ञा सरकारकी" कहकर जीवानन्दने गलेमें चादर लपेट, दोनों हाथ जोड़कर कहा,—"अब यह दास आपसे विनयके साथ यह निवेदन करता है, कि आप कृपा कर इसे यह बतला दें, कि आपका भरुईपुरसे शुभागमन किस निमित्त हुआ ?"

शांतिने बड़ी गम्भीरतासे कहा,—"अब आपने यह व्यर्थकी तानेजनी शुरू की। इसकी तो कोई जरूरत नहीं थी। मुझे भरुईपुरका नामतक नहीं मालूम। मैंने आज यहां आकर सन्तान-धर्मकी दीक्षा ग्रहण की है।"

जीवा०—"ऐं, यह तो सब चौपट हुआ देखता हूं। क्या यह सच है ?"

शांति—"चौपट क्यों ? आपने भी तो दीक्षा ली है ?"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

जीवा०—"तुम स्त्री जो ठहरी।"

शान्ति—"यह क्या? यह बात आपको कैसे मालूम हुई?"

जीवा०—"मेरा विश्वास था, कि मेरी ब्राह्मणी स्त्री-जातिकी है।"

शांति—"ब्राह्मणी! तो क्या आपके ब्राह्मणी भी है?"

जीवा०—"थी तो सही।"

शान्ति—"इसीसे आपको सन्देह हो रहा था, कि मैं ही आपकी ब्राह्मणी हूं?"

जीवानन्दने हाथ जोड़ और गलेमें चादर लपेट विनयपूर्वक कहा,—"हां सरकार!"

शान्ति—"यदि आपके मनमें इस प्रकार हंसीकी बातें पैदा हुआ करती हैं, तो कहिये, आपका कर्त्तव्य क्या है?"

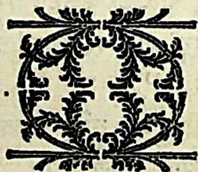
जीवा—'आपके कपड़े जबरदस्ती हटाकर आपके होंठोंका रस-पान करना ही। और क्या?"

शांति—"यह आपकी दुष्ट बुद्धि अथवा अधिक गांजा पीनेका परिचय है। आपने दीक्षाके समय शपथ की थी, कि स्त्रियोंके साथ कभी एक आसनपर नहीं बैठेंगे। यदि आपको यह विश्वास है कि मैं स्त्री हूं—इस तरह रस्सीमें सांपका भय बहुतोंको हुआ करता है—तो आपके लिये उचित यही है कि अलग आसनपर बैठिये। आपको मेरे साथ बातचीत भी नहीं करनी चाहिये।"

यह कह, शान्तिने फिर पुस्तकमें मन लगाया। परास्त होकर जीवानन्दने अलग शय्या बिछायी और उसीपर शयन किया।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative





CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY,
Jangamwadi Math, VARANASI
Acc. No. 3235
1910



आनन्दमठ



तीसरा खण्ड



CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

पहला परिच्छेद

ईश्वरकी कृपासे ११७६ का साल समाप्त हो गया। बंगालकी पूरी जनसंख्याके छः आने मनुष्योंको (जो न जाने कितने करोड़ रहे होंगे) यमपुर भेजकर वह दुष्ट संवत्सर आपही कालके गालमें चला गया। सन् ११७७ सालमें ईश्वरने दया की, पानी अच्छा बरसा, पृथ्वीने खूब अन्न उपजाये। जो लोग जीते बचे थे, उन्होंने पेटभर खानेको पाया। बहुतेरे लोग अनाहार या अल्पाहारके कारण रोगी हो गये थे। वे भरपेट ठूंस-ठूंसकर खानेसे ही मर गये। पृथ्वी तो शस्यशालिनी हुई, पर गांवके गांव खाली नजर आते थे। सूनसान घरोंमें केवल चूहे दण्ड पेलते नज़र आते या भूत-प्रेत फिरा करते थे। गांव-गांवमें सैकड़ों बीघे जमीन बिना जोते-बोये ऊसर सी पड़ी रही, जिसमें जङ्गलसा बन गया। देशभरमें जंगलोंकी भरमार हो गयी। जहां लहराते हुए हरेभरे धानके खेत दिखाई देते थे, जहाँ असंख्य गायें भैंसे चरती नज़र आती थीं, जो बाग-बगीचे गांवके युवक और युवतियोंकी प्रमोद-भूमि थे, वे सब स्थान क्रमशः घोर जंगल होने लगे। एक वर्ष दो वर्ष करते-करते तीन वर्ष बीत गये। ज़ंगलोंकी संख्या बढ़तीही चली गयी। जो स्थान मनुष्योंके सुखका स्थान था, वहां नर-मांस-भोजी बाघ आकर हरिण आदि जानवरोंका शिकार करने लगे। जहां सुन्दरियोंकी टोली महावरसे रंगे हुए पैरोंकी पैजनियोंको बजाती, हमजोलियोंके साथ हंसी-ठठोली करती, इतराती और बतराती जाती थीं, वहां रीछोंकी मांद और अड्डे बन गये हैं। जहां छोटे-छोटे बच्चे बालकालमें सन्ध्या-समय खिले हुए चमेलीके फूलकी तरह प्रफुल्लित होकर हृदयको तृप्त करनेवाली किलकारियां सुनाया करते थे, वहीं अब झुण्ड-के-झुण्ड मतवाले जंगली हाथी वृक्षोंकी डालें तोड़ते नजर आने लगे। जहां

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कभी दुर्गाजीकी पूजा हुआ करती वहां स्यारोंकी मांद हो गयी, जहां सावनमें ठाकुरजीका झूला होता था वहाँ आज उल्लुओंने अपना अड्डा जमा लिया। नाट्य-भवनमें दिनदहाड़े काले नाग मेढक खोजने लगे। बंगालमें आज अन्न उपजा है तो खानेवाले नदारद हैं, बिकनेवाली चीजें पैदा हुई हैं, पर कोई खरीदार नहीं है। किसानोंने खेती की, पर रुपया नहीं पाया। इसीलिये वे जमींदारोंको मालगुजारी न दे सके। राजाने जमींदारोंसे मालगुजारी न पाकर उनकी जमींदारियां जब्त करनी शुरू कीं, इसलिये धीरे-धीरे जमींदार दरिद्र होने लगे। वसुमतीने खूब अन्न उपजाये, पर किसीको धन नहीं मिला—सबका घर धनसे छूंछा ही नजर आने लगा। लूट-खसोटके दिन आये, चोर-डाकुओंने सिर उठाये, सज्जन लोग डरके मारे घरोंमें छिप रहे।

इधर सन्तान-सम्प्रदायवाले नित्य चन्दन और तुलसीदलसे विष्णुभगवानके पादपद्मोंकी पूजा करते और जिसके घरमें पिस्तौल या बन्दूक मिलती, उसके घरमें घुसकर उसे छीन लाते। भवानन्दने सब किसीसे कह दिया था, कि "अगर किसी घरमें एक ओर मणि-माणिक्य और हीरा-मोती हो और दूसरी ओर एक टूटी हुई बन्दूक पड़ी हो, तो सब मणि-माणिक्य और हीरा-मोती छोड़कर वह टूटी बन्दूकही ले आना।

इसके बाद वे लोग गांव-गांवमें अपने दूत भेजने लगे। वे लोग जिस किसी ग्राममें जाते, वहांके हिन्दुओंको देख-देखकर कहते,— "क्यों भाई! विष्णु-पूजा करोगे?" यही कह कहकर वे २०-२५ आदमियोंका दल बांध लेते और मुसलमानोंके गांवमें जाकर उनके घरोंमें आग लगा देते थे। मुसलमान बेचारे इधर अपनी जान बचानेमें लगते; तबतक उधर संतान-सम्प्रदायवाले उनका सर्वस्व लूट-पाटकर नये विष्णु-भक्तोंको बाँट देते थे। लूटका माल पाकर जब गांववाले बड़े आनन्दित होते, तब ये लोग उन्हें विष्णु-मन्दिरमें ला, प्रतिमाके पैर छुलाकर उन्हें सन्तानधर्ममें

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

दीक्षित कर लेते थे। लोगोंने देखा कि सन्तान होनेमें तो बड़ा लाभ है। मुसलमानी सलतनतकी अराजकता और कुशासनके कारण सब कोई मुसलमानोंसे जल उठे थे। हिन्दूधर्म लुप्त हुआ जा रहा था, इसलिये बहुतसे लोग हिन्दुत्वको स्थापनाके लिये भी चिन्तित हो रहे थे, अतएव दिन-दिन सन्तानोंकी संख्या बढ़ने लगी। एक-एक दिनमें सैकड़ों और एक-एक महीनेमें हजारों नये-नये लोग आकर सन्तान बनने और भवानंदके चरणोंमें सिर झुकाने लगे तथा दल-के-दल चारों ओर मुसलमानोंको दण्ड देनेके लिये जाने लगे। वे जहांकहीं राजकर्मचारियोंको देख पाते, वहीं उनकी मरम्मत करने लगते। कभी-कभी तो उनके प्राणही ले डालते थे। जहांकहीं सरकारी खजाना पाते उसपर छापा मारते और लूट-पाट कर घर ले आते। जहांकहीं मुसलमानोंकी वस्ती मिलती, उसमें आग लगा देते और गांव-के-गांव जलाकर धूलमें मिला देते। राजपुरुषगण इनका दमन करनेके लिये फौज रवाना करने लगे, पर इस समय सन्तानोंका दल खूब बँधा हुआ था। उनके पास हथियार भी काफी थे और वे ठीक भी हो गये थे। उनके वीर-दर्पके आगे मुसलमान सैनिकोंके पैर आगे नहीं बढ़ते थे। कदाचित् वे आगे आते तो सन्तानगण अपने अमित बल-पराक्रमसे उनपर भीषण आक्रमण करते, उनके दलको छिन्न-भिन्न कर हरि-हरिकी ध्वनि करते। यदि किसी सन्तानदलको मुसलमान सैनिक परास्त कर डालते, तो उसी समय उनके सम्प्रदायका दूसरा दल वहां आ पहुंचता और :जीतनेवालोंके सिर धड़से जुदा कर हरि-हरि कहता हुआ निकल जाता था।

इस समय परम प्रसिद्ध, भारतीय अंगरेज-कुलके प्रातःसूर्य वारन हेस्टिंगस भारतवर्षके गवर्नर जनरल थे। कलकत्तेमें बैठे-बैठे लोहेकी सींकड़ तैयारकर उन्होंने सोचा कि मैं इसी सींकड़में सप्तद्वीपा और ससागरा भूमिको बांध रखूँगा। एक दिन सिंहासन-पर बैठे हुए जगदीश्वरने भी 'तथास्तु' कह दिया था; पर अब वह

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

दिन नहीं रहे। आज तो संतानोंकी भीषण हरि-ध्वनिको सुनकर वारन हेस्टिंग्सका कलेजा भी कांप उठा।

वारन हेस्टिंग्सने पहले फौजदारी सैन्य द्वारा विद्रोहको दबानेकी चेष्टा की, किंतु उन सिपाहियोंका तो इन दिनों यह हाल हो रहा था कि वे यदि किसी बुढ़ियाके मुंहसे भी हरिनाम सुन लेते तो सिरपर पैर रखकर भाग जाते थे। इसीसे लाचार होकर वारन हेस्टिंगसने कप्तान टामस नामक एक बड़ेही चतुर सैनिककी अध्यक्षतामें कम्पनीके सिपाहियोंका एक दल विद्रोह दबानेके लिये भेजा।

कप्तान टामसने विद्रोह दमनका अत्यंत उत्तम प्रबंध किया। उन्होंने राजा और जमींदारोंसे सिपाही मांगकर कम्पनीके सुशिक्षित, सुसज्जित और अत्यंत बलिष्ठ देशी-विदेशी सैनिकोंके साथ मिला दिये। इसके बाद उस सम्मिलित सैन्यको अलग-अलग टुकड़ियोंमें बांटकर उन्होंने एक-एक टुकड़ीको सुयोग्य सैनिकोंके अधीन कर दिया। इसके बाद कौनसी टुकड़ी किस ओर भेजी जाय, इसका बंदोबस्त किया। उन्होंने सब किसीसे कह दिया,—"देखो, तुम अमुक प्रदेशमें जाकर जालकी तरह फैल जाओ। जहांकहीं कोई शत्रु नजर आये, उसे वहीं चींटीकी तरह मसल डालना।" कम्पनीके सिपाहियोंमेंसे कोई गांजेका दम लगाकर और कोई शराब पीकर बन्दूक लिये हुए संतानोंको मारने जाते, परंतु संतानगण इतने असंख्य और ऐसे अजेय थे कि कप्तान टामसके सैनिक घासकी तरह कटते गये। हरि-हरिकी ध्वनिसे कप्तान टामसके कान बहरे हो गये।

दूसरा परिच्छेद



उन दिनों कम्पनीकी अनेक रेशमकी कोठियां थीं। ऐसी ही एक कोठी शिवग्राममें भी थी। डनवर्थ साहब उस कोठीके मालिक थे। उस समय इन कोठियोंकी रक्षाका बड़ा अच्छा बंदोबस्त था।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

इसीसे डनवर्थ साहब किसी तरह अपनी जान बचा सके; पर उन्हें अपने बाल-बच्चोंको कलकत्ते भेज देना पड़ा। सबको भेजकर वे आप संतानोंके उपद्रव सह रहे थे। इसी समय कप्तान टामस साहब अपनी कुछ फौजके साथ वहां पहुंचे। इस समय संतानों-का उत्साह देखकर बहुतसे चोर-चाई तथा डोम-चमार और भुइयां नीच जातिवाले बेफिक्रीके साथ लूट-खसोट मचाने लगे थे। इन लोगोंने टामस साहबकी रसदपर भी छापा मारा। कप्तान साहबकी फ़ौजके लिये गाड़ियोंपर बहुत सा उम्दा घी, मैदा, मुर्गी और चावल आदि चीजें लदी जा रही थीं। यह देखकर डोम चमा-रोंके मुंहमें पानी भर आया। उन्होंने गाड़ीपर हमला कर दिया। परंतु कप्तान टामसके सिपाहियोंके हाथमें जो बन्दूकें थीं, उन्हींके कुन्देकी मारसे वे भाग गये। कप्तान टामसने कलकत्ते रिपोर्ट भेजी कि आज मैंने १५७ सिपाहियोंके ही सहारे १४७०० विद्रोहियोंको परास्त कर डाला है। विद्रोहियोंमेंसे २१५३ आदमी मरे, १२५३ घायल हुए और सात कैद कर लिये गये हैं। पर केवल यही अन्तिम बात रिपोर्टभरमें सच्ची थी। कप्तान टामस, अपने मनमें ऐसा समझकर, मानों उन्होंने केनहिम या रसवाककी-सी कोई बड़ी भारी लड़ाईही जीती है, घमंडसे अकड़े हुए, मूंछोंपर ताव देते हुए निर्भय इधर-उधर घूमने लगे, साथही डनवर्थ साहबको उपदेश भी देने लगे कि अब क्या डर है अब अपने बाल-बच्चोंको कलकत्तेसे यहीं ले आओ; विद्रोहका तो मैंने अन्तही कर दिया। डनवर्थ साहबने कहा,—"अच्छी बात है, आप यहां दस दिन और ठहर जाइये। देश थोड़ा और स्थिर हो जाय, तब मैं अपने स्त्री-पुत्र आदिको बुलवा लूंगा।" डनवर्थ साहबने बहुतसी मुर्गियां और भेंड़ें पाल रखी थीं। उनके यहांका पनीर भी अच्छा होता था। तरह-तरहकी जंगली चिड़ियोंका मांस उनके भोजनालयकी शोभा बढ़ाया करता था। इधर लम्बी दाढ़ीवाला बावर्ची भी मानों द्रौपदीकाही अवतार था। इसलिये कप्तान टामस बड़ी बेतकल्लुफीके साथ वहीं रहने लगे।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

इधर भवानन्द मन-ही-मन दाँत पीस रहे थे। वे यही सोच रहे थे कि कब टामस साहबका सिर काटकर द्वितीय सम्बरारिकी उपाधि धारण कर लूं। अंग्रेज लोग भारतवर्षकी भलाई करने आये हैं, उस समय संतानोंकी समझमें यह बात नहीं आती थी। समझते भी कैसे? कप्तान टामसके समान अंग्रेज भी इस बातको नहीं जानते थे। उस समय यह बात विधाताके मनमेंही छिपी हुई थी। भवानन्द सोच रहे थे, "एक दिन इन असुरोंका सवंश नाश करूंगा। सबको जमा होकर यहां चले आने दो; बस इनकी जरासी असावधानी देखतेही उनपर टूट पड़ूंगा। अभी जरा दूर-ही-दूर रहनेका काम है।" इसीलिये वे अपने दलबल समेत दूर-ही-दूर रहे। कप्तान टामस निष्कण्टक होकर द्रौपदीके गुर्गोंकी बानगी लेने लगे।

साहब बहादुरको शिकारका बड़ा शौक था, इसलिये वे कभी-कभी शिवग्रामके पासवाले जंगलमें शिकार खेलनेके लिये जाया करते थे। एक दिन टामस साहब डनवर्थ साहबके साथ घोड़ेपर सवार हो, कई एक शिकारियोंके साथ शिकार खेलने निकले। यह तो कहनाही व्यर्थ है, कि टामस साहब बड़े भारी साहसी और बलवीर्यमें अंगरेजोंमें भी अद्वितीय थे। वह घना जंगल बाघों, भैंसों और भालुओंसे भरा हुआ होनेके कारण बड़ा भयावह था। इसलिये कुछ दूर आनेपर शिकारियोंने आगे बढ़नेसे इनकार कर दिया। वे बोले,—"बस, अब आगे भीतर जानेका रास्ता नहीं है; हम लोग तो अब आगे नहीं जा सकते।" एक बार डनवर्थ साहब इसी जंगलमें एक भयानक शेरके पंजेमें पड़ते-पड़ते बच गये थे, इसलिये उन्होंने भी आगे जाना स्वीकार नहीं किया—सबकी इच्छा लौटनेकीही थी। कप्तान टामसने कहा,—"तुमलोग न जाओगे, तो लौट जाओ, पर मैं तो अब नहीं लौटता।" यह कह, कप्तान साहब उस घोर जंगलमें घुस पड़े।

सचमुच उस जंगलमें रास्ता नहीं था। घोड़ा आगे न बढ़ सका, पर साहब घोड़ेको छोड़, कन्धेपर बन्दूक लिये अकेले ही

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

आगे बढ़े। वे घुसे तो बाघकी खोजमें थे, पर खोजते-खोजते हैरान हो गये, तोभी कहीं बाघ न दिखाई दिया। उसके बदले उन्होंने देखा कि एक बड़े भारी पेड़के नीचे खिले हुए फूलोंवाली लताओं और छोटे-छोटे पौधोंके बीचमें न जाने .कौन बैठा है? वह एक नवीन संन्यासी था, जिसके रूपसे वह सारा जंगल उज्ज्वल हो रहा था। खिले हुए फूल मानों उसके स्वर्गीय शरीरके सम्पर्कसे और भी अधिक सुगन्धमय हो गये थे। कप्तान साहब भौंचक्के हो रहे—पर तुरन्तही क्रोध आ गया। वे हिन्दुस्तानी बोली विचित्र तरहसे बोलते थे। उन्होंने पूछा,—"टुम कौन हाय?"

संन्यासीने कहा—"मैं संन्यासी हूं।"

कप्तानने पूछा,—"टुम बागी है?"

संन्यासी—"यह किस जानवरका नाम है?"

कप्तान—"हम टुमको गुली मार देगा।"

संन्यासी—"मार दो।"

कप्तान मन-ही-मन विचार कर रहे थे, कि गोली मारूं या न मारूं, कि इतनेमें उस सन्यासीने बिजलीकी तरह तड़पकर साहबके हाथकी बन्दूक छीन ली। इसके बाद संन्यासीने अपना रक्षावरण-चर्म खोल कर फेंक दिया और एकही झटकेमें जटा भी हटाकर दूर कर दी। कप्तान टामसने देखा, कि एक अपूर्व सुन्दरी सामने खड़ी है। सुन्दरीने हंसते-हंसते कहा,—"साहब! मैं स्त्री हूं, मैं किसीको मारती नहीं। मैं तुमसे पूछती हूं कि हिन्दू-मुसलमानोंमें जब झगड़ा होता है, तुमलोग क्यों बीचमें कूदते हो? अपने घर चले जाओ।"

साहब—"टुम कोन हाय?"

शान्ति—"देखते तो हो कि मैं संन्यासिनी हूं, तुम जिनके साथ लड़ाई करने आये हो, उन्हींमेंसे किसी एककी पत्नी हूं।"

साहब—"टुम हमारा घारपर चलेगा?"

शान्ति—"क्या तुम्हारी रखेली होकर?"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

साहब—"औरटका मालिक रहना, लेकिन शादी नहीं होगा।"

शान्ति—"अच्छा, मैं भी तुमसे एक बात पूछती हूं, हमारे घर पर पहले एक बन्दर था, पर हालमें वह मर गया। उसका पींजरा खाली पड़ा है। क्या तुम उसके पींजरेको आबाद करने चलोगे? मैं तुम्हारी कमरमें भी सांकल बांध दूंगी। हमारे बगीचेमें खूब मीठे केले फलते हैं, उन्हें भर पेट खाया करना।"

साहब—"टुम बड़ा बहादुर औरट है। टुमारा साहस देखकर हम बहुट खुशी हुआ। टुम हमारा घारपर चलो। टुमारा खाविण्ड टो लड़ाईमें माराही जायगा, फिर टुम क्या करेगा?"

शान्ति—"अच्छा, तो हमलोग अभीसे आपसमें एक बात तै कर रखें। युद्ध तो दो-चार दिनोंमें होगा ही। यदि उस लड़ाईमें तुम जीतोगे, और मैं जीती बचूंगी, तो तुम्हारी रखेली होकर रहूंगी। पर कहीं हमारी जीत हुई, तो तुम हमारे घर आकर बन्दर बनकर पींजरेमें रहोगे और केले खाया करोगे न?"

साहब—"केला बहुत उमडा चीज होटा है। इस वखट टुमारे पास है?"

शान्ति—"ले जा अपनी बन्दूक! ऐसी जङ्गली जातिसे बातें करनी भी बेवकूफी है!"

यह कह, बन्दूक फेंककर शांति हंसती हुई चली गयी।

तीसरा परिच्छेद



शान्ति साहबको वहीं छोड़कर हरिणीकी भांति उछलती-कूदती जंगलके अन्दर न जाने कहां गायब हो गयी। थोड़ी देर बाद साहबको किसी स्त्रीके मधुरकण्ठसे निकला हुआ गीत सुनाई दिया,—

"यह यौवन जल तरंग कौन रोकि राखि हैं?
हरे मुरारे! हरे मुरारे!"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

फिर न जाने कहांसे सारंगीकी सुरीली तानमें भी यही गीत बज उठा,—

"यह यौवन–जल तरंग-कौन रोकि राखि हैं ?
हरे मुरारे ! हरे मुरारे !"

फिर उसी सुरमें-सुर मिलाकर किसी पुरुषने भी गाया,—

"यह यौवन-जल-तरंग कौन रोकि राखिहैं ?
हरे मुरारे ! हरे मुरारे !"

तीनों सुरोंने एकमें मिलकर वनकी सारी लताओंको हिला डाला। शान्ति गाती हुई चली,...

"यह यौवन जल तरंग कौन रोकि राखि हैं ?
हरे मुरारे ! हरे मुरारे !
नदिया बिच नैया जाती है, अंधड़ पानी सह लेती है।
चतुर खिवैया डांड़ चलावे, नहिं क्यों पार उतरिहौं ?
हरे मुरारे ! हरे मुरारे !
बांध टूटिगो बालू केरो, पूरन हुए मनोरथ मेरो,
गङ्गाधार ज्वार जब आया, कौन रोकि तोहे राखिहैं ?
हरे मुरारे ! हरे मुरारे !
सारंगीमें भी यही गीत बज रहा था—
गंगाधार ज्वार जब आयो, कौन रोकि तोहे राखि हैं ?
हरे मुरारे ! हरे मुरारे !"

जहां घनघोर जंगल था, बाहरसे देखनेपर कहीं कुछ नहीं दिखाई देता था, शान्ति उसी ओर चली गयी। वहां शाखा-पल्लवोंके बीच छिपा हुआ छोटासा झोपड़ा था। उसके खम्भे वगैरह डालोंके थे, छाजन पत्तोंकी, जमीन काठकी और गच मिट्टीकी थी। लताद्वारको हटाकर शान्ति उसी झोपड़ेके अन्दर घुसी। वहीं जीवानन्द बैठे हुए सारंगी बजा रहे थे।

शान्तिको देखकर जीवानन्दने पूछा,—"इतने दिन बाद गंगामें ज्वार आया है क्या ?"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

शान्तिने हंसकर उत्तर दिया,—"नदी-नालोंको डुबाकर गंगामें ज्वार आनेपर भी कहीं पानी वेगसे चलता है ?"

जीवानन्दने उदास होकर कहा,—"देखा शान्ति! एक दिन व्रत भंग हो जानेके कारण मेरे प्राण तो न्यौछावर होही चुके हैं, क्योंकि पापका प्रायश्चित्त तो करनाही होगा। अबतक तो मैं कभीका प्रायश्चित्त कर चुका होता; पर तुम्हारेही अनुरोधसे नहीं कर सका। पर अब देखता हूं कि बड़ी भारी लड़ाई शीघ्र ही छिड़ा चाहती है। उसी युद्धक्षेत्रमें मुझे उस पापका प्रायश्चित्त करना होगा। इन प्राणोंको निश्चयही त्यागना पड़ेगा। मेरे प्रायश्चित्त करनेके दिन—"

शांतिने उन्हें आगे और कुछ नहीं कहने दिया, झटपट बोल उठी,—"मैं तुम्हारी धर्मपत्नी, सहधर्मिणी और धर्मकी संगिनी हूं। तुमने बहुत बड़ा धर्मका काम अपने सिरपर उठाया है। उसीमें तुम्हारी सहायता करनेके लिये मैं घर छोड़कर यहां आयी हूं। दोनों जने एक साथ मिलकर धर्माचरण करेंगे, यही सोचकर मैं घर छोड़कर जंगलमें आ बसी हूं। मैं तुम्हारे धर्मकी वृद्धि करूंगी। धर्मपत्नी होकर तुम्हारे धर्ममें विघ्न क्यों डालूंगी ? विवाह लोक-परलोक—दोनोंके लिये किया जाता है। सोचकर देखो, मेरा-तुम्हारा विवाह तो इस लोकके लिये हुआ ही नहीं, केवल परलोकके लिये हुआ है। परलोकमें हमें दूना फल मिलेगा। फिर प्रायश्चित्तकी बात कैसी ? तुमने कौनसा पाप किया है ? तुम्हारी प्रतिज्ञा यही थी, कि किसी स्त्रीके साथ एक आसनपर न बैठोगे। अब बतलाओ, कि तुम कहां और कब मेरे साथ एक आसनपर बैठे थे। फिर प्रायश्चित्त कैसा ? हाय प्रभो! तुम मेरे गुरु हो, फिर मैं तुम्हें क्या धर्म सिखलाऊंगी। तुम वीर हो, तुम्हें मैं वीरव्रत क्या सिखलाऊंगी ?"

आनन्दसे गद्गद् हो, जीवानन्दने कहा,—"क्यों नहीं ? अभी तो तुमने मुझे सिखलाया !"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

शांति प्रफुल्लित चित्तसे कहने लगी,—"और देखो, प्रभो! हमारा विवाह इस लोकके लिये भी निष्फल कैसे हुआ? तुम मुझे प्यार करतेही हो, मैं तुम्हें जीसे चाहतीही हूं, फिर इससे बढ़-कर इस लोकमें और कौनसा फल चाहिये? बोलो, "वन्देमातरम्।"

दोनों व्यक्ति एक स्वरसे "वन्देमातरम्' गाने लगे।

चौथा परिच्छेद

एक दिन भवानन्द गोस्वामी नगरमें गये और चौड़ी सड़क छोड़कर अंधेरी गलीमें घुसे। गलीके दोनों तरफ ऊंचे-ऊंचे मकान खड़े थे। सूर्य्य भगवान् दोपहरमें भी एकाध बारही इस गलीके भीतर झांक लेते हैं, नहीं तो वहां बराबर अंधकार ही अन्धकार रहता है। उसी गलीके पासवाले एक दोतल्ले मकानमें भवानन्द ठाकुर घुस पड़े। नीचेके जिस घरमें एक अधेड़ स्त्री बैठी रसोई बना रही थी, वहीं जाकर भवानन्द महाप्रभु उपस्थित हुए। स्त्री अधेड़, मोटी-ताजी, काली, सफेद कपड़े पहने, माथेमें चन्दन लगाये, सिरपर बालोंका जूड़ा बांधे थी। हांड़ीके कोरमें भात चलानेसे कलछी ठक-ठक बोल रही थी। फर-फर करके उसके सिरके बाल हवामें उड़ रहे थे, वह आप-ही-आप न जाने क्या बड़बड़ा रही थी और उसके चेहरेके चढ़ाव-उतारके साथ-साथ उसके बालोंका लहराना कुछ और ही शोभा दे रहा था। इसी समय भवानन्द महाप्रभु उस घरमें घुस पड़े और बोले,—"पण्डिताइनजी, प्रणाम।" पण्डिताइनजी भवानन्दको देखकर जल्दी-जल्दी अपने कपड़े सम्हालने लगीं। उनकी इच्छा थी कि सिरका सुहा-वना जूड़ा खोल डालें, पर जूठा हाथ होनेके कारण वैसा न कर सकीं। एक तो उनके वे बाल स्वभावतःही मुलायम थे, तिसपर

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

उनमें पूजाके समयका मौलसरीका एक फूल भटका रह गया था। उन्होंने कितना चाहा कि उसे अंचलसे छिपा लें, पर अंचलमें वह छिप न सका, कारण वे सिर्फ पांच हाथकी साड़ी पहने हुई थीं। वह पांच हाथकी साड़ी उनकी मोटी तोंदकोही ढकनेमें प्रायः खतम हो गयी थी, तिसपर दुःसह भार-ग्रस्त हृदय-मण्डलकी भी उसे आबरू बचानी पड़ती थी। अन्ततोगत्वा कन्धेतक पहुंचते-न-पहुंचतेही साड़ीने जवाब दे दिया। कानके पास आकर चुपकेसे कहा कि बस, अब इसके आगे मुझसे नहीं जाया जायगा। लाचार लज्जा और संकोचवश गौरी ठकुराइनने अंचलको कानके पास लाकर हाथसे पकड़ रखा और आगेसे आठ हाथकी साड़ी पहननेकी मन-ही-मन प्रतिज्ञा करते हुए कहा,—"कौन ? गुसाईंजी ! आओ, आओ। मुझे प्रणाम क्यों करते हो भाई ?"

भवा०—"तुम भाभी जो ठहरी ?"

गौरी—"आदरसे जो चाहो कह लो, नहीं तो तुम ठहरे गुसाईं बाबा—साक्षात् देवता ! खैर, जब प्रणाम कियाही तो मैं भी असीस देती हूं कि जियो-जागो। हां, प्रणाम कर भी सकते हो, क्योंकि उमरमें मैं तुमसे बड़ी हूं।"

इस समय गौरीदेवीकी उमर भवानन्दसे २५ वर्ष अधिक होगी। सुचतुर भवानन्दने कहा,—"यह क्या भाभी ! तुम यह क्या कहती हो ? तुम्हें रसीली-छबीली देखकरही भाभी कहकर पुकारता हूं। नहीं तो तुम्हें याद है या नहीं, उस बार हिसाब लगाकर देखा गया था, तो तुम मुझसे छः वर्ष छोटी निकली थी ? हम वैष्णवोंमें तो जानतीही हो कि हर तरहके लोग हैं। इसीलिये मेरी इच्छा होती है कि मठके ब्रह्मचारीजीकी आज्ञा लेकर तुम्हारे साथ सगाई कर लूं। यही कहनेके लिये मैं तुम्हारे पास आया हूं।"

गौरी—"छिः ! यह भी कोई बात है ? मैं ठहरी विधवा—"

भवा०—"तो क्या विधवाकी सगाई नहीं होती ?"

गौरी—"अरे भाई ! जाओ, जो मनमें आवे, करो। तुमलोग

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

पण्डित ठहरे। हम औरतें यह क्या जानें? खैर, कब सगाई होगी?"

भवानन्दने बड़ी मुश्किलसे अपनी हंसी रोककर कहा,—"बस, एक बार उस ब्रह्मचारीसे मिलनेभरकी देर है। अच्छा, यह तो कहो वह कैसी है?"

गौरी उदास हो गयी। उसने मन-ही-मन सोचा कि मालूम होता है, सगाईकी बात यह योंही दिल्लगीके तौरपर कह रहा था! बोली,—"कैसी क्या? जैसी थी; वैसी है।"

भवा०—"तुम एक बार जाकर उसको देखो, कि कैसी है। उससे कहना कि मैं उससे मिलने आया हूं।"

यह सुन, गौरीदेवी हाथकी कलछी जमीनपर रख, हाथ धो, लम्बी-लम्बी डग भरती दोतल्लेपर जानेके लिये सीढ़ियां चढ़ने लगीं। ऊपर एक कमरेमें एक फटी चटाईपर एक अपूर्व सुन्दरी बैठी थी; पर उसके सौन्दर्यपर भीषण छाया पड़ी थी। मध्याह्न कालमें, कूल-परिप्लाविनी, प्रसन्न-सलिला, विपुल-जल-कल्लोलिनी, स्रोत-स्वतीके ऊपर जैसी घने बादलोंकी छाया पड़ जाती है, वैसी-ही छाया पड़ी हुई थी। नदीमें तरंगें उठ रही थीं, तीरपर कुसुमित वृक्ष हवाके झोंकेसे हिल रहे थे, कोई-कोई फूलोंके भारसे झुक रहे थे, अट्टालिकाओंकी श्रेणी भी अपनी शोभा दिखा रही थी, डांड़ोंकी चोटसे नदीका जल चंचल हो रहा था, दोपहरका सुहावना समय था, पर उस काली छायामें सारी शोभा क्षीण थी। उस सुन्दरीकी भी वही दशा थी। पहलेकेसे सुन्दर चिकने और चञ्चल केश, पहलेकी तरह प्रशान्त और उन्नत ललाटपर किसीकी निराली लेखनीसे अङ्कित भौंहें, पहलेकीसी बड़ी साश्रु और काली पुतलियोंवाली आंखें—सभी हैं; पर न तो उनमें पहलेकी भांति कटाक्ष है, न चञ्चलता है, पर कुछ-कुछ नम्रता है। अधरोंपर वही पहलेकीसी ललाई है, हृदय उसी तरह भावपूर्ण है, बांहें वैसी ही वनलताकी कोमलताको भी मात करनेवाली हैं, पर आज न तो वह कान्ति है, न ज्योति, न चञ्चलता और न रस; अधिक क्या, वह

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

यौवनही अब न रहा, केवल सौन्दर्य और माधुर्य रहा। उसमें और दो नयी बातें आ गयी हैं—धीरता और गम्भीरता। पहले इन्हें देखनेसे मालूम होता था कि यह मनुष्य-लोककी अनुपम सुन्दरी हैं, पर आज देखनेसे मालूम होता है कि यह देवलोककी कोई शापग्रस्ता देवी हैं। चारों ओर भोजपत्रपर लिखी हुई पोथियां फैली हुई हैं, दीवारमें खूंटीपर सुमिरिनी माला लटक रही है। और जगह-जगहपर जगन्नाथ, बलराम, सुभद्राका पट लगा है, कहीं कालियदमन, नव-नारी कुञ्जर, वस्त्रहरण, गोवर्द्धनधारण आदि ब्रजलीलाओंके चित्र अंकित हैं। चित्रोंके नीचे लिखा है,—"चित्र हैं हा विचित्र ?" भवानन्दने उसी घरमें प्रवेश किया।

भवानन्दने पूछा—"कल्याणी ! कैसी हो ? तुम्हारा शरीर तो अच्छा है न ?"

कल्याणी—"आप क्या इस सवालका पूछना बन्द न करेंगे ? मेरा शरीर अच्छा रहनेसे न आपकीहो कुछ भलाई है, न मेरी ही।"

भवा०—"जो वृक्ष रोपता है, वह उसमें नित्य जल छोड़ा करता हैं। उस वृक्षको पनपते देखकर उसे सुख होता है। तुम्हारे मुर्दे शरीरमें मैंने जान डाली थी, इसीलिये पूछता रहता हूं कि वह जान ज्यों-की-त्यों है या नहीं ?"

कल्याणी—"कहीं विषका वृक्ष भी सूखता है ?"

भवा०—"तो क्या जीवन विष है ?"

कल्याणी—"नहीं तो मैं क्यों अमृत पीकर उसका नाश करने जाती ?"

भवा०—"मैंने कई दफे सोचा, पर साहस न हुआ कि तुमसे पूछूं कि किसने तुम्हारा जीवन विषमय कर दिया।"

कल्याणी—"किसीने नहीं-यह जीवन तो आपही विषमय है। मेरा जीवन विषमय है, आपका जीवन विषमय है, सारे संसारका जीवन विषमय है।"

भवा०—"ठीक है कल्याणी ! मेरा जीवन सचमुच विषमय है।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

जिस दिनसे————————हां, तो तुम्हारा व्याकरण पढ़ना समाप्त हो गया ?"

कल्याणी—"नहीं।"

भवा०—"और कोष ?"

कल्याणी—"से पढ़नेमें तो जी नहीं लगता।"

भवा०—"पहले तो मैंने पढ़ने-लिखनेमें तुम्हारा बड़ा उत्साह देखा था, अब ऐसी अश्रद्धा क्यों हो गयी ?"

कल्याणी—"जब आपकेसे पंडित भी महापापी होते हैं तब न लिखना-पढ़नाही अच्छा है। प्रभो! मेरे स्वामीका कुछ हाल बतलाइये।"

भवा०—"तुम बराबर यह बात क्यों पूछती हो ? वे तो तुम्हारे लिये मरे हुएके बराबर हैं।"

कल्याणी—"मैं उनके लिये मर गयी हूं सही, पर वे मेरे लिये कभी नहीं मर सकते।"

भवा०—"वे तुम्हारे लिये मरे तुल्य हो जायंगे, यही सोचकर तो तुमने अपनी जान दी थी। फिर बार-बार वही बात तुम क्यों पूछती हो ?"

कल्याणी—"मरनेसेही क्या सम्बन्ध टूट जाता है ? कहिये, वे कैसे हैं ?"

भवा०—"अच्छे हैं।"

कल्याणी—"कहां हैं, पदचिह्नमें ?"

भवा०—"हां, वहीं हैं।"

कल्याणी—"क्या कर रहे हैं ?"

भवा०—"जो करते थे, वही करते हैं। किला और हथियार तैयार करा रहे हैं। उन्हींके बनाये हुए अस्त्रोंसे आजकल सहस्र-सहस्र सन्तान सज्जित हो रहे हैं। उनके प्रतापसे तोप, बन्दूक, गोला, गोली और बारूदका हमलोगोंको अभाव नहीं है। सन्तानोंमें आजकल वेही श्रेष्ठ समझे जाते हैं। वे हमलोगोंका बड़ा उपकार कर रहे हैं--दाहिने हाथ बन रहे हैं।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कल्याणी—"मैं यदि प्राण-त्याग नहीं करती, तो वे इतना थोड़े-ही कर सकते थे। जिसकी छातीमें कच्चा घड़ा बंधा होता है, वह थोड़ेही भवसागर पार हो सकता है? जिसके पैरोंमें जंजीर पड़ी होती है वह थोड़ेही दौड़ सकता है? संन्यासी, तुमने इस क्षुद्र जीवनको क्यों बचाया था?"

भवा०—"स्त्री सहधर्मिणी, पतिके धर्मोंमें सहायक होती है।"

कल्याणी—"छोटे-छोटे धर्मोंमें। बड़े-बड़े धर्मोंमें तो वह कंटक-ही प्रमाणित होती है। मैंने विषकण्टक द्वारा उनके अधर्मका कांटा निकाल फेंका था। छिः पापी, दुराचारी, ब्रह्मचारी! तुमने मुझे मरनेसे क्यों बचाया?"

भवा०—"मैंने जो प्राण तुम्हें लौटा दिये, उन्हें मेरीही थाती समझ लो और बोलो, तुम उन्हें मेरे हवाले कर सकती हो?"

कल्याणी—"अच्छा, यह तो कहिये, आपको मेरी सुकुमारीका कुछ हाल मालूम है वा नहीं?"

भवा०—"बहुत दिनोंसे कुछ नहीं मालूम। जीवानन्द बहुत दिनों-से उधर गयेही नहीं?"

कल्याणी—"तो क्या आप मुझे उसका संवाद नहीं ला दे सकते? स्वामी भलेही छूट जायं; पर जीतेजी कन्याको क्यों छोड़ूं? अगर इस समय सुकुमारीको पा जाऊं, तो यह जीवन कुछ सुखमय हो सकता है। पर आप मेरे लिये इतना तरद्दुद क्यों उठाने लगे?"

भवा०—"क्यों नहीं उठाऊंगा कल्याणी? मैं तुम्हारी लड़की ला दूंगा; पर इसके बाद?"

कल्याणी—"इसके बाद क्या?"

भवा०—"स्वामी?"

कल्याणी—"उन्हें तो मैंने जान-बूझकर छोड़ दिया है।"

भवा०—"यदि उनका व्रत सम्पूर्ण हो जाय?"

कल्याणी—"तब उन्हींकी होकर रहूंगी। वे क्या जानते हैं कि मैं मरी नहीं हूं?"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

भवा०—"नहीं।"

कल्याणी—"क्या आपसे उनकी देखादेखी नहीं होती ?"

भवा०—"होती है।"

कल्याणी—"मेरी कुछ बात नहीं चलती ?"

भवा०—"नहीं, जो स्त्री मर गयी, उससे स्वामीका नाता ही क्या रह गया ?"

कल्याणी—"आप क्या कह रहे हैं ?"

भवा०—"तुम्हारा नया जन्म हुआ है; अब तुम फिर विवाह कर सकती हो।"

कल्याणी—"मेरी कन्याको ला दो।"

भवा०—"ला दूंगा। तुम फिर विवाह कर सकती हो ?"

कल्याणी—"क्या तुम्हारे साथ ?"

भवा०—"विवाह करोगी ?"

कल्याणी—"क्या तुम्हारेही साथ ?"

भवा०—"यदि ऐसाही हो ?"

कल्याणी—"तो फिर सन्तानधर्म कहां जायगा।

भवा०—"अथाह जलमें डूब जायगा।"

कल्याणी—"और परलोक ?"

भवा०—"वह भी अथाह जलमें डूब जायगा।"

कल्याणी—"और यह महाव्रत ?"

भवा०—"यह भी।"

कल्याणी—"किस लिये तुम इन सबको अथाह जलमें डुबानेको तैयार हो ?"

भवा०—"तुम्हारेही लिये। देखो, मनुष्य, ऋषि, सिद्ध, देवता—सबका चित्त अवश रहता है। सन्तानधर्म मेरा प्राण है सही; पर आज पहले पहल मुझे कहना पड़ता है कि तुम मेरे प्राणोंसे भी बढ़कर हो। जिस दिन मैंने तुम्हें जिलाया, उसी दिनसे तुम्हारे चरणोंका क्रीतदास हो रहा हूं। मैं नहीं जानता था कि संसारमें इतनी रूपराशि

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

है। यदि मैं जानता कि किसी दिन ऐसी रूपराशि मेरी आंखोंतले आयगी, तो मैं कदापि सन्तानधर्म नहीं ग्रहण करता। यह धर्म इस आगमें पड़कर राख हो जाता है। मेरा धर्म जलकर राख हो चुका; सिर्फ प्राण रह गये हैं। आज चार वर्षोंसे ये प्राण भी चल रहे हैं। अब ये भी न बचेंगे। ओह! कैसी जलन है, कल्याणी! कैसी ज्वाला है! पर इसमें जलने योग्य ईंधन अब नहीं रह गया। प्राण निकल रहे हैं। चार सालतक सहता आया; अब नहीं सहा जाता। बोलो, तुम मेरी होगी या नहीं?"

कल्याणी—"मैंने तुम्हारेही मुंहसे सुना था कि संतानधर्मका यह नियम है कि जो इंद्रियोंपर वश नहीं रखता उसे प्राण देकर इस पापका प्रायश्चित्त करना पड़ता है। क्या यह बात ठीक है?"

भवा०—"हां, ठीक है।"

कल्याणी—"तब तो, तुम्हारे इस पापका प्रायश्चित्त मृत्युही है।"

भवा०—"हां, इसका प्रायश्चित्त मृत्युही है।"

कल्याणी—"यदि मैं तुम्हारी मनोकामना पूर्ण कर दूं, तो तुम प्राण दे डालोगे?"

भवा०—"हां, जरूर दे डालूंगा।"

कल्याणी—"और यदि नहीं पूर्ण करूं तो?"

भवा०—"यदि नहीं पूर्ण करो तोभी मुझे मरकर इस पापका प्रायश्चित्त करनाही पड़ेगा; क्योंकि मेरा चित्त इंद्रियोंका दास हो गया है।"

कल्याणी—"मैं तुम्हारी मनोकामना पूर्ण नहीं करूंगी। बोलो, तुम कब मरोगे?"

भवा०—"आगामी युद्धमें।"

कल्याणी—"बस, तो अब यहांसे चले जाओ। बोलो, मेरी कन्या भेज दोगे या नहीं?"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

भवानन्दने आंखोंमें आंसू भरकर कहा,—"ला दूंगा। क्या मेरे मर जानेपर मुझे स्मरण रखोगी ?"

कल्याणीने कहा—"रखूंगी, तुम्हें व्रतच्युत, अधर्मी समझकर याद किया करूंगी।"

भवानन्द चले गये। कल्याणी पुस्तक पढ़ने लगी।

पांचवां परिच्छेद



भवानन्द सोचते-विचारते मठकी ओर चले। जाते-ही-जाते रात हो गयी। वे अकेले थे। अकेलेही जङ्गलमें घुसे। वनमें घुसनेपर उन्होंने देखा कि कोई उनके आगे-आगे चला जा रहा है। भवानंदने पूछा,—"कौन जा रहा है ?"

आगे जानेवालेने कहा—"अगर तुम्हें पूछने आता, तो ठीकसे जवाब भी देता। यही समझ लो, कि मैं पथिक हूं ?"

भवा०—"वन्दे।"

आगे जानेवाला बोला—"मातरम्।"

भवा०—"मैं हूं, भवानंद गोस्वामी।"

आगे जानेवाला—"मैं भी धीरानन्द हूं।"

भवा०—"कहां गये थे, धीरानंद ?"

धीरा०—"आपहीकी खोजमें।"

भवा०—"क्यों ? किस लिये ?"

धीरा०—"एक बात कहनी थी।"

भवा०—"कौनसी बात ?"

धीरा०—"एकांतमें कहनेकी बात है।"

भवा०—"यहीं कहो न, यहां तो और कोई नहीं है।"

धीरा०—"आप नगरसे गये थे ?"

भवा०—"हां।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

घोरा०—"गौरीदेवीके घरपर ?"

भवा०—"तुम भी गये थे क्या ?"

घोरा०—"वहां एक बड़ीही सुन्दरी युवती रहती है।"

भवानंद कुछ आश्चर्यमें पड़ गये, साथही कुछ डर भी गये। बोले,—"यह कैसी बातें कर रहे हो ?"

धीरा०—"आपने उससे मुलाकात की थी न ?"

भवा०—"फिर क्या हुआ ?"

धीरा०—"आप उसपर अतिशय अनुरक्त हो रहे हैं।"

भवा०—(कुछ सोचकर) "धीरानंद! तुमने इतनी खोज-ढूंढ़ किस लिये की ? देखो, धीरानंद! तुम जो कुछ कह रहे हो, सब सच है। पर यह तो कहो, यह बात तुम्हारे सिवा और भी किसी-को मालूम है ?"

धीरा०—"और कोई नहीं जानता।"

भवा०—"तब यदि मैं तुम्हारी जान ले लूं, तो बदनामीसे बच जा सकता हूं।"

धीरा०—"हां।"

भवा०—"तब आओ, इसी निर्जन स्थानमें हम दोनों युद्ध करें। या तो मैं तुम्हें मारकर निष्कण्टक हो जाऊंगा या तुम मुझे मारकर मेरी सारी जलन मिटा दोगे। हथियार पास है ?"

धीरा०—"है, खाली हाथ भला कौन तुम्हारे साथ ऐसी बढ़बढ़ कर बातें करता ? यदि तुम युद्धही करना चाहते हो, तो आओ, मैं अवश्यही युद्ध करूंगा। एक संतानका दूसरे संतानसे विरोध करना अनुचित है; किन्तु आत्मरक्षाके लिये किसीसे विरोध करना बुरा नहीं है। पर मैं जो सब बातें कहनेके लिये तुम्हें ढूढ़ रहा था, उन्हें सुनकर लड़ते, तो ठीक था।"

भवा०—"हर्जही क्या है ? कह डालो।"

भवानन्दने तलवार निकालकर धीरानंदके कंधेपर रखी। धीरानंद टससे मस न हुए।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

धीरा०—"मैं यही कह रहा था कि तुम कल्याणीसे विवाह कर लो।"

भवा०—"वह कल्याणी ही है, यह भी जानते हो?"

धीरा०—"हां, तो तुम विवाह क्यों नहीं कर लेते?"

भवा०—"उसका स्वामी मौजूद है।"

धीरा०—"वैष्णवोंमें इस तरहका विवाह होता है।"

भवा०—"ऐसा मुंड़े हुए संन्यासियोंमें होता है, संतानोंमें नहीं। सन्तानोंको तो विवाह करना ही नहीं चाहिये।"

धीरा०—"क्या सन्तानधर्म छोड़ नहीं सकते? तुम्हारे तो प्राण निकले जा रहे हैं। छिः! छिः! यह क्या कर डाला? मेरा कन्धा कट गया!"

सचमुच धीरानन्दके कन्धेसे खून जारी हो रहा था।

भवा०—"तुम किस मतलबसे मुझे धर्मके विरुद्ध सलाह देने आये हो? इसमें अवश्यही तुम्हारा कोई स्वार्थ है।"

धीरा०—"वह भी कहता हूं; पर जरा तलवार हटा लो, सब कुछ कह दूंगा। इस सन्तानधर्मके मारे मैं तो हैरान हो गया। मैं तो अब इसे छोड़कर स्त्री पुत्रके साथ दिन बितानेके लिये अधीर हो रहा हूं। मैं अब इसे छोड़ूंगा। परंतु मेरा घर जाकर रहना भी मुश्किल है। सभी मुझे विद्रोही जानते हैं। जहां घर जाकर रहने लगा कि झट राजपुरुषगण आकर मेरा सिर उतार ले जायंगे। नहीं तो सन्तानगण ही मुझे विश्वासघातक समझकर मार डालेंगे। इसलिये मैं चाहता हूं कि तुम्हें भी अपने ही रास्तेपर ले चलूं।"

भवा०—"क्यों? मुझही क्यों?"

धीरा०—"यही तो असल मतलबकी बात है। सभी सन्तानगण तुम्हारी आज्ञा मानते हैं। इन दिनों सत्यानंद यहां हैं ही नहीं, तुम्हीं सबके सिरधरू हो। तुम इस सेनाको लेकर युद्ध करोगे, तो तुम्हारी जीत अवश्य होगी। युद्ध जय होनेपर तुम अपने ही नामसे राज्य-स्थापन कर लेना। सेना तुम्हारे वश है ही। तुम राजा बनो,

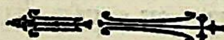
CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कल्याणी तुम्हारी पटरानी बनें, मैं तुम्हारा अनुचर बनकर स्त्री पुत्रका मुंह देखते हुए दिन बिताऊं और तुम्हें आशीर्वाद देता रहूं, यही मेरी इच्छा है। चाहे सन्तानधर्म अगाध जलमें डूब जाय, इसकी मुझे परवाह नहीं।"

यह सुन, भवानन्दने धीरानन्दके कन्धेपरसे तलवार हटा ली और बोले;—"धीरानन्द! तुम युद्ध करो। मैं तुम्हें मार डालूंगा। मैं इन्द्रियोंका दास होकर भलेही रहूँ, पर विश्वासघातक होकर नहीं रह सकता। तुम मुझे विश्वासघातक बननेकी सलाह दे रहे हो और आप भी विश्वासघातक हो रहे हो, इसलिये तुम्हें मार डालनेसे मुझे ब्रह्महत्याका पाप नहीं लगेगा। मैं तुम्हें जरूर मार डालूंगा।"

बात पूरी होते-न-होते धीरानन्द बेतहाशा भाग चला। भवानन्दने उसका पीछा नहीं किया। वे कुछ देरतक अनमनेसे रहे, पीछे उसे बहुत ढूंढ़ा; पर उसका कहीं पता न लगा।

छठा परिच्छेद



मठमें न जाकर भवानन्द घने जंगलमें चले गये। उस जंगलमें एक पुरानी इमारत भग्नावशेष अवस्थामें पड़ी थी। टूटी-फूटी ईंटोंके ढेरपर जंगली लताएं और पौधे बहुतायतसे उग गये थे। वहां असंख्य सर्प रहते थे। उस खंडहरके अन्दर कुछ साफ-सुथरी और साबित एक कोठरी थी। भवानन्द वहीं जाकर बैठ गये और सोचने लगे।

घोर अंधेरी रात है। उसपर लम्बा-चौड़ा और घना जंगल, जिसमें आदमीका पूत भी नहीं और वह वृक्ष-लताओंके मारे ऐसा बीहड़ हो रहा है; कि बेचारे जंगली पशु भी उसके अन्दर जानेका

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

रास्ता नहीं पाते। वह वन अतिविशाल जनशून्य, अंधकारमय, दुर्भेद्य और नीरव है। रह-रहकर केवल बाघका गरजना अथवा जंगली पशुओंका भूख या डरसे तड़पना और चीत्कार सुनायी पड़ जाता है। कभी-कभी किसी बड़े पक्षीके पंख फड़फड़ानेका शब्द सुनायी देता है और कभी-कभी आपसमें एक दूसरेको मारनेवाले या खा जानेवाले जानवरोंको दौड़-धूपका शब्द सुनाई देता है। उस निर्जन, अंधकारपूर्ण खँडहरमें अकेले भवानन्द बैठे हैं। उनके लिये पृथ्वी मानों रही नहीं गयी अथवा केवल उपादानमयी हो रही है। उस निविड़ अंधकारमें भवानन्द हथेलीपर सिर रखे सोच रहे हैं—वे ऐसी प्रगाढ़ चिंतामें निमग्न हो रहे हैं कि न तो उनकी देह हिलती है; न जोर-जोरसे सांस चलती है; न किसी बातका भय मालूम होता है। वे मन-ही-मन कह रहे हैं,—"जो होनेवाला है, वह तो होकर ही रहेगा। मैं भागीरथीकी जलतरंगके पास आकर भी छोटेसे हाथीके बच्चेकी तरह इन्द्रियस्रोतमें डूब मरा, इसीका बड़ा भारी दुःख रहा। एक क्षणमें यह देह मिट्टीमें मिल, जा सकती है। देहका ध्वंस होतेही इन्द्रियोंका ध्वंस हो जायेगा। फिर मैं इन्द्रियोंके वशमें क्यों गया? मेरा मरनाही ठीक है। धर्मत्यागी कहलाकर जीना! राम राम! मैं तो अब मरूंगा ही।"

इसी समय ऊपरसे उल्लू बोल उठा। भवानन्द और जोरसे कह उठे—"ओह! यह कैसा शब्द है! कानोंको ऐसा लगा, मानों यम मुझे पुकार रहा है। मैं नहीं जानता, किसने यह शब्द किया, किसने मुझे पुकारा, किसने मुझे यह उपदेश दिया, किसने मुझे मरनेको कहा। पुण्यमयी अनन्ते! तुम शब्दमयी हो; पर तुम्हारे शब्दका मर्म तो मैं समझ नहीं सकता। मुझे धर्ममें मति दो, पापसे दूर करो। हे गुरुदेव! ऐसा आशीर्वाद करो, जिसमें धर्ममें मेरी मति सर्वदा बनी रहे।"

इसी समय उस भीषण वनमें अत्यन्त मधुर, गम्भीर और मर्मभेदी मनुष्य-कंठ सुनायी पड़ा; मानों किसीने कहा—"मैं

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

आशीर्वाद करता हूं, कि तुम्हारी मति धर्ममें अविचल भावसे बनी रहे।"

भवानन्दके शरीरके रोंगटे खड़े हो गये। यह क्या? यह तो गुरुदेवकाही कंठ-स्वर है! बोले "महाराज! आप कहां हैं? आइये, आकर इस दासको दर्शन दीजिये।"

पर न तो किसीने दर्शन दिये, न उत्तर दिया। भवानन्दने बार-बार पुकारा; पर कोई न बोला। उन्होंने इधर-उधर बहुत ढूंढ़ा, पर कहीं किसीको न पाया।

रात बीती, प्रभात हुआ और प्रातःकालके सूर्य उदित होकर जंगली पेड़-पौधोंकी हरी-हरी पत्तियोंपर अपनी किरणें फैलाने लगे, तब भवानन्द वहांसे चलकर मठमें पहुंचे। उस समय उनके कानोंमें "हरे मुरारे! हरे मुरारे!" की ध्वनि सुनाई पड़ी। सुनतेही वह पहचान गये कि यह सत्यानन्दका कण्ठस्वर है। वे समझ गये, कि प्रभु लौट आये हैं।

सातवां परिच्छेद



जीवानन्दके कुटीसे बाहर चले जानेपर शांति फिर सारंगीकी सुरीली ध्वनिके साथ अपना मीठा गला मिलाकर गाने लगी—

प्रलयपयोधिजले धृतवानसि वेदं
विहितवहित्रचरित्रमखेदम्।
केशवधृत मीन-शरीर,
जय जगदीश हरे!"

गोस्वामी जयदेव विरचित राग, ताल, लययुक्त स्तोत्र; शान्तिदेवी के कण्ठसे निकलकर उस अनन्त काननकी अनन्त नीरवताको भेद-

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कर वर्षाकालकी उमड़ी हुई नदीकी मलयानिलसे चंचल की हुई तरंगोंके समान मधुर मालूम होने लगा, तब उसने फिर गाया—

"निन्दसि यज्ञविधेरहह श्रुतिजातम्;
सदय हृदय दर्शित पशुघातम्,
केशवधृत बुद्ध-शरीर,
जय जगदीश हरे !"

उसी समय बाहरसे न जाने किसने मेघ-गर्जनकी तरह बड़ेही गम्भीर स्वरसे गाया—

म्लेच्छनिवहनिधने कलयसि करवालम्।
धूमकेतुमिव किमपि करालम् ॥
केशव धृत कल्कि-शरीर,
जय जगदीश हरे"

शांतिने भक्तिभावसे शिर झुकाकर सत्यानन्दके पैरोंकी धूलि सिर चढ़ाई; बोली—"प्रभो, मेरे बड़े भाग्य जो आज आपके चरण-कमल यहांतक आये। आज्ञा कीजिये, मुझे क्या करना होगा।"

यह कह, फिर सारङ्गीका सुर मिलाकर उसने गाया,—

"तव चरणप्रणाता वयमिति भावय, कुरु कुशलं प्रणतेषु।"

सत्यानन्दने कहा,—"देवि ! तुम्हारी कुशल ही होगी ?"

शान्ति—"सो कैसे महाराज ! आपकी आज्ञा तो मेरे वैधव्यके हेतु है।"

सत्या०—"पहले मैं तुम्हें पहचानता नहीं था। बेटी ! मैं रस्सीका जोर आजमाये बिनाही उसे खींच रहा था। तुम्हारा ज्ञान मुझसे कहीं बढ़ा हुआ है। अब तुम जो उपाय अच्छा समझो; करो। जीवानन्दसे यह मत कहना कि मैं सब कुछ जान गया हूं। तुम्हारे लिये वे अपनी जान बचानेकी चेष्टा करेंगे। अबतक बचाते भी रहे हैं। बस, इसीसे मेरा काम हो जायगा।"

यह सुनतेही उन नील-उत्फुल्ल लोचनोंमें आषाढ़ मासमें चमकनेवाली बिजलीकी तरह क्रोधाग्नि पैदा हो आयी। शान्तिने

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कहा—"यह क्या महाराज ! आप यह क्या कह रहे हैं ? मैं और मेरे स्वामी एक प्राण दो शरीर हैं। अभी आपसे मेरी जो-जो बातें हुई हैं, वह सब मैं उनसे कह दूंगी। उन्हें मरना होगा तो वे मरेंगे ही; इसमें हर्ज़ही कौन-सा है ? मैं भी तो उनके साथ-ही-साथ मरूंगी। उनके लिये स्वर्गका द्वार खुला है, तो क्या मेरे लिये बन्द है ?"

ब्रह्मचारीने कहा—"मैं आजतक किसीसे हारा नहीं था। आज पहले पहल तुमसे हारा। मां ! मैं तुम्हारा पुत्र हूं। सन्तानपर दया करो, जीवानन्दको बचाओ, अपनी प्राणरक्षा करो, इसीसे मेरा कार्योद्धार हो जायगा।"

फिर बिजली चमक उठी। शान्तिने कहा—"मेरे स्वामीका धर्म मेरे हाथमें है। उन्हें दूसरा कौन धर्मसे हटा सकता है ? इस लोकमें स्त्रीके लिये पति देवता है, परन्तु परलोकमें धर्मही सबका देवता है। मेरे लिये मेरे पति बड़े हैं, उनकी अपेक्षा मेरा धर्म बड़ा है, और उससे भी मेरे स्वामीका धर्म बड़ा है। अपना धर्म मैं जिस दिन चाहूं छोड़ सकती हूं, पर अपने स्वामीका धर्म मैं कैसे छुड़ा दूंगी ? महाराज ! आपकी बात मानकर यदि मेरे स्वामी प्राण देनेको तैयार हों, तो मैं उन्हें नहीं रोकूंगी।"

यह सुन ब्रह्मचारीने लम्बी सांस लेकर कहा—"मां ! इस कठोर व्रतमें बलिदान करना पड़ता है। हम सबको इसपर बलि हो जाना पड़ेगा। मैं मरूंगा, जीवानन्द मरेंगे, भवानन्द मरेंगे, सभी मरेंगे। मां ! मुझे तो ऐसा मालूम पड़ता है कि तुम भी मरोगी। किन्तु देखो, काम करके मरना अच्छा होता है ! बिना काम किये मरना क्या अच्छा होगा ? मैं तो केवल जन्मभूमिकोही मां समझता हूं, और किसीको मैं मां नहीं कहता; क्योंकि इस सजल-सफल धरणीके सिवा हमारी और कोई माता होही नहीं सकती। उसके सिवा मैंने आज केवल तुम्हींको मां कहकर पुकारा है। मां हो तो सन्तानकी भलाई करो। ऐसा काम करो जिससे

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कार्योद्धार हो। जीवानन्दके प्राण बचाओ। अपनी भी प्राण-रक्षा करो।"

यह कह सत्यानन्द "हरे मुरारे मधुकैटभारे" गाते हुए चले गये।

आठवां परिच्छेद

धीरे-धीरे सन्तान-सम्प्रदाय वालोंमें यह संवाद फैल गया, कि सत्यानन्द लौट आये हैं और उन्होंने सन्तानोंको कुछ आदेश देनेके लिये बुलाया है। बस, सन्तानोंके दल-के-दल आकर इकट्ठे होनेलगे। चांदनी रातमें, नदीकी रेतीली भूमिके पास घने जंगलमें, जहां आम, कटहल, ताड़, इमली, पीपल, बेल, बड़, और सेमल आदिके हजारों वृक्ष लगे हुए थे, वहीं दस हजार सन्तान आकर जमा हुए। एक दूसरेके मुंहसे सत्यानन्दके आनेकी बात सुनकर ये लोग महा कोलाहल करने लगे। सत्यानन्द किस लिये और कहां गये हुए थे, यह सबको नहीं मालूम था। अफवाह थी कि वे सन्तानोंकी मंगल-कामनासे हिमालयपर तपस्या करने गये हुए हैं। आज सभी आपसमें इसकी चर्चा कर रहे हैं कि "मालूम होता है, महाराजकी तपस्या सिद्ध हो गयी। अब राज्य हमारा हो जायगा।"

उस समय बड़ा शोरगुल मचा। कोई चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगा—"मारो, मारो इन मुसलमानोंको।" कोई कहने लगा—"जय, महाराजकी जय!' कोई "वन्देमातरम्" गीत गाने लगा। कोई कहता "भाई! क्या कोई ऐसा भी दिन आयेगा, जब हम तुच्छ बङ्गाली भी रणक्षेत्रमें: प्राणत्याग करेंगे," कोई कहता—"क्या वह दिन देखना भी नसीब होगा, कि जब हम मसजिदें गिराकर उनपर राधामाधवके मन्दिर उठायेंगे?" कोई कहता—"भाई, कब वह दिन आयेगा, जब हम अपना धन आपही भोगेंगे?"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

दस हजार मनुष्योंके कण्ठसे निकला हुआ कलरव, मन्दमन्द हवाके वेगसे चलायमान वृक्षके पत्तोंके मरमर शब्द, बालुकामयी तरंगिणीका मृदु कल-कल शब्द, नीले आसमानके चन्द्र-तारे, स्वच्छ मेघोंके समूह, हरी-भरी भूमिपर हरा-भरा कानन, नदीका स्वच्छ जल, उजले रंगकी रेत, विकसित कुसुम-राशि और सबके चित्तको प्रसन्न करनेवाला बीच-बीचमें होनेवाला 'वन्देमातरम्' गान—क्या-ही मनोहर दृश्य था !

ऐसे ही समय सत्यानन्द उस सन्तान-मण्डलीके बीचमें आ खड़े हुए। उस समय उन दस हजार सन्तानोंके मस्तक वृक्षोंके बीचसे छन-छनकर आनेवाली चन्द्रकिरणोंके पड़नेसे हरी-हरी घासोंवाली जमीनकी तरह मालूम पड़ने लगे। आंखोंमें आँसूभरे, दोनों हाथ ऊपर उठाये सत्यानन्दने बड़े ऊंचे स्वरसे कहा—"शंख, चक्र, गदा, पद्मधारी, वनमाली, वैकुण्ठनाथ, केशीसंहारक, मधु-मुर-नरक-मर्दन, लोकपालक तुम्हारा मंगल करें। वेही तुम्हारी भुजाओंमें बल, मनमें भक्ति, धर्ममें मति दें। एक बार सब लोग प्रेमसे उनकी महिमाका गीत गाओ।" यह सुनतेही हजारों कण्ठोंसे उच्च-स्वरमें यह संगीत निकल पड़ा—

"जय जगदीश हरे !
प्रलय पयोधि जले धृतवानसि वेदं,
विहितवहित्र चरित्रमखेदम्,
केशव-धृत मीन-शरीर,
जय जगदीश हरे !"

फिर सबको आशीर्वाद देते हुए सत्यानन्दने कहा—"सन्तान-गण ! आज मैं तुम लोगोंसे एक जरूरी बात कहना चाहता हूं। टामस नामक एक विधर्मी दुष्टने बहुतसे सन्तानोंको मार डाला है। आज रातको तुम सब उसे सैन्य-समेत मारकर ढेर कर दो। जग-दीश्वरकी यही आज्ञा है, बोलो तुम लोग क्या कहते हो ?"

भीषण हरि-ध्वनिसे सारा जंगल गुंज उठा—"अभी मारकर

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

ढेर कर देंगे। चलिये, बतलाइये, वे सब कहां हैं! "मारो, मारो! अभी दुश्मनोंको मार गिराओ" इत्यादि शब्द दूरके पर्वतोंमें प्रतिध्वनित होने लगे।

तब सत्यानन्दने कहा—"इसके लिये हमलोगोंको थोड़ा धैर्य रखना होगा। शत्रुओंके पास तोपें हैं। जबतक अपने पास भी तोपें न हों, तबतक उनसे युद्ध नहीं किया जा सकता। विशेषतया वे सब वीर-जातिके हैं। पद-चिह्नसे १७ तोपें आ रही हैं। उनके आ जानेपर हमलोग युद्ध-यात्रा करेंगे। यह देखो सवेरा हो रहा है। चार घड़ी दिन चढ़ते-चढ़ते—अरे, यह क्या? — धांय धांय धांय।"

अकस्मात् उस जंगलमें चारों ओरसे तोप छूटनेकी आवाजें आने लगीं। तोपें अंगरेजोंकी थीं। जालमें फंसी हुई मछलियोंकी तरह कप्तान टामसने सन्तान-सम्प्रदायको उस जंगलमें घेरकर मार डालनेका विचार किया था।

नवां परिच्छेद



अँगरेजोंकी तोपें "धांय-धांय" करके गरज उठीं। वह शब्द उस विशाल काननको कंपाता हुआ गूंज उठा, नदीके किनारे-किनारे चलकर वह धांय-धांय शब्द दूरस्थ आकाश-प्रान्तसे टकरा उठा। नदीके उस पार दूरस्थ काननमें प्रवेशकर वही ध्वनि फिर 'धांय-धांय' कर उठी।

सत्यानन्दने कहा—"तुमलोग जाकर देखो, कि ये किसकी तोपें छूट रही हैं।" यह सुन कई व्यक्ति घोड़ेपर सवार हो, अनुसंधान करने चले; पर वे जंगलसे बाहर निकल कुछ ही दूर गये होंगे, कि उनपर सावनकी धाराकी तरह गोले बरसने लगे। बस, सब-के-सब घोड़े समेत वहीं ढेर हो गये।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

सत्यानन्दने दूरहीसे यह दृश्य देखा। उन्होंने कहा—"वृक्ष ऊंची डालपर चढ़कर देखना चाहिये, कि क्या बात है।"

उनके कहनेके पहलेसेही जीवानन्द वृक्षपर चढ़कर सवेरेकी सूर्य-किरणोंका आनन्द ले रहे थे। वे ऊपरहीसे चिल्लाकर बोले—"तोपें अंगरेजोंकी हैं।"

सत्यानन्दने पूछा—"सब पैदल हैं या घुड़सवार?"

जीवा०—"दोनोंही।"

सत्या०—"कितने हैं?"

जीवा०—"मैं कुछ अनुमान नहीं कर सकता। अभीतक वे लोग धीरे-धीरे जंगलकी आड़से बाहर निकलतेही जाते हैं।"

सत्या०—"गोरे भी हैं या सब देशीही सिपाही हैं?"

जीवा०—"गोरे भी हैं।"

तब सत्यानंदने जीवानंदसे कहा—"अच्छा, तुम नीचे उतरो।" जीवानन्द पेड़से नीचे उतर पड़े।

सत्यानन्दने कहा—"इस समय दसहजार संतान यहां उपस्थित हैं। अब इनकी सहायतासे तुम जो कुछ कर सको, कर दिखाओ। आजके लिये मैंने तुम्हेंही सेनापति बनाया।"

जीवानंद हथियार बांधे लपककर एक घोड़ेपर सवार हो गये। उन्होंने एक बार आंखोंके इशारेसे नवीनानंद गोस्वामीसे न जाने कौन-सी बात कही, कोई इस इशारेको न समझ सका। नवीनानंदने भी इशारेसेही उसका जवाब दिया, पर इस इशारेको भी कोई न समझ सका। केवल उन्हीं दोनों आदमियोंने अपने मन-ही-मन समझ लिया, कि यही देखादेखी शायद अन्तिम है, अब फिर इस जीवनमें देखादेखी न होगी। नवीनानंदने अपनी दाहिनी भुजा ऊपर उठाये हुए सबसे कहा—"भाइयो! बस, अब इस समय केवल 'जय जगदीश हरे' गाओ। फिर क्या था? एक साथही दस हजार संतान सुर-में-सुर मिलाये; नदी, कानन और आकाशको प्रतिध्वनित करते; तोपोंकी आवाजको डुबाते हुए, हजारों भुजायें ऊपर उठाये, गाने लगे:—

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

"जय जगदीश हरे !

म्लेच्छ निवहनिधने कलयसि करवालम् ।"

इसी समय अँगरेजोंकी तोपोंसे छूट-छूटकर गोले उस जंगलमें जमा हुए संतानोंपर पड़ने लगे। किसीका सिर उड़ गया, किसीकी बांह कट गयी, किसीका कलेजा छिद गया, लोग धरती चूमने लगे, पर तोभी किसीने गाना बंद नहीं किया। सभी 'जय जगदीश हरे' गाते रहे। गीत समाप्त होनेपर सब-के-सब एक साथही चुप हो गये। वह घनघोर जंगल, वह नदीकी रेत, वह अनन्त निर्जन स्थान एक-बारगी निस्तब्ध हो गया; केवल वही तोपोंकी अत्यंत भयानक गर्जन और दूरसे सुनायी पड़नेवाली गोरोंके हथियारोंकी झनझनाहट और पैरोंकी आहट सुनायी देती थी।

तब सत्यानंदने उस गहरे सन्नाटेको तोड़ते हुए ऊंचे स्वरमें कहा—"जगतके स्वामी हरिने तुमलोगोंपर कृपा की। बोलो, तोपें कितनी दूरपर हैं ?"

ऊपरसे किसीने कहा—"इस जंगलके बहुतही पास, एक छोटेसे जंगलके उस पार।"

सत्यानंदने पूछा—"तुम कौन हो ?"

उपरसे जवाब मिला—"मैं हूं नवीनानंद।" तब सत्यानंदने कहा—"तुमलोग दस हजार संतान हो। तुम्हारी जय आज अवश्य होगी। बस, जाओ, जाकर उसकी तोपें छीन लो।"

यह सुन; सबसे आगे घोड़ेपर सवार जीवानंदने कहा—"चलो आओ।"

बस, वे दसो हजार संतान, कोई पैदल और कोई घोड़ेपर सवार हो जीवानंदके पीछे-पीछे चले। पैदल चलनेवालोंके कंधेपर बंदूक, कमरमें तलवार और हाथमें भाला था। जंगलसे बाहर निकलतेही लगातार उनपर गोले बरसने लगे, जिससे वे छिन्न-भिन्न होने लगे। अनेक संतान तो बिना लड़े-भिड़ेही मारे गये। एकने जीवानंदसे कहा—"जीवानंद ! व्यर्थ इतने आदमियोंकी जानें लेनेसे क्या लाभ है।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

जीवानंदने घूमकर देखा कि भवानंद हैं। जीवानंदने कहा—"तुम्हीं कहो, मैं क्या करूं ?"

भवा०—"जंगलके भीतर पेड़ोंके झुरमुटमें छिपकर, हम अपनी जान भी बचा सकते हैं और बहुत देरतक युद्ध भी कर सकते हैं। नहीं तो सरपट मैदानमें बिना तोपके ये सन्तान तोपोंके सामने घड़ी-भर भी न ठहर सकेंगे।"

जीवा०—"तुम्हारा कहना बहुत ठीक है, पर प्रभुकी आज्ञा है कि तोपें छीन लो। इसलिये हमलोग तोपें छीननेके लिये अवश्य-ही आगे बढ़ेंगे।"

भवा०—"भला किसका सामर्थ्य है, जो उनसे तोपें छीन लेगा। खैर, यदि जानाही है तो तुम चुपचाप बैठो। मैंही जाता हूं।"

जीवा०—"नहीं भवानंद ! यह नहीं होनेका। आज मेरे मरने-का दिन है।"

भवा०—"नहीं, आज मेरे मरनेका दिन है।"

जीवा०—"मुझे तो प्रायश्चित्त करना है।"

भवा०—"नहीं, नहीं, तुम्हें तो पाप छू भी नहीं गया, तुम्हारा प्रायश्चित्त कैसा ? मेरा चित्त कलुषित है। मुझेही मरने दो। तुम रहो, मैं जाता हूं।"

जीवा०—"भवानंद ! तुमने क्या पाप किया है, यह तो मैं नहीं जानता, पर हां, इतना जानता हूं कि तुम्हारे जीते रहनेसे संतानोंका कार्य सिद्ध हो जायगा। मैं चलता हूं।"

भवानंद कुछ देर चुप रहे। अन्तमें बोले। "यदि मरनेका प्रयो-जन होगा तो आज मैंही मरूंगा, नहीं तो जिस दिन प्रयोजन होगा उसी दिन मरूंगा। मृत्युके लिये समय-कुसमयका विचार कैसा ?"

जीवा०—"तब आओ, चले आओ।"

इसके बाद भवानंद उसके आगे चले आये। उस समय ढेर-के-ढेर गोले पड़कर संतानोंके सैन्यका संहार कर रहे थे। इससे लोग भागने लगे, कहीं औंधे सीधे गिरने लगे, कहीं शत्रुओंके बंदूक-

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

धारी सिपाहियोंने अपने अचूक निशानेसे ढेर-के-ढेर सन्तानोंको मारकर जमीनमें गिरा दिया। इसी समय भवानन्दने कहा —"अब तो सन्तानोंको इस तरङ्गमें कूदना ही पड़ेगा। बोलो, भाइयो! कौन-कौन कूदनेको तैयार हैं? गाओ, "वन्देमातरम्।" उस समय ऊंचे कण्ठसे मेघमल्लार रागमें सारे सन्तान तोपोंकी आवाजके ताल पर "वन्देमातरम्" गान गाने लगे।

दसवां परिच्छेद



वे दसों हज़ार सन्तान वन्देमातरम् गान गाते, भाले ऊपर उठाये हुए बड़ी तेजोके साथ तोपोंके मोहड़ेकी ओर चल पड़े। लगातार गोले बरसनेसे सन्तान-सेना खंडखंड, विदीर्ण, और अत्यन्त विश्रृङ्खल हो गयी, तोभी लौटी नहीं। उसी समय कप्तान टामसकी आज्ञाके अनुसार सिपाहियोंका एक दल बन्दूकोंपर सङ्गीनें चढ़ाये सन्तानोंको दाहिनी ओरसे आकर उनपर टूट पड़ा। दोनों तरफ़से हमला हो जानेके कारण सन्तानगण एकबारगी निराश हो गये। क्षण-क्षणमें सैकड़ों सन्तान नष्ट होने लगे। तब जीवानन्दने कहा—"भवानन्द! तुम्हारीही बात ठीक थी। अब बेचारे वैष्णवोंकी हार करवाना व्यर्थ है। चलो हमलोग धीरे-धीरे लौट चलें।"

भवा०—"अब कैसे लौट चलोगे? इस समय तो जो पीछे फिरेगा वही जान गंवायेगा।"

जीवा०—"सामने और दाहिनी तरफ़से हमला हो रहा है। बाईं तरफ़ कोई नहीं है। चलो, धीरे-धीरे घूमकर बायीं तरफ़ हो जायँ और उधर-हीसे निकल भागें।"

भवा०—"भागकर कहां जाओगे? उधर नदी है। वर्षाके कारण

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

बहुत उमड़ी हुई है। अंगरेजोंके गोलेके डरसे भागकर तो सन्तान-सेना नदीमें डूब जायगी।"

जीवानन्द—"मुझे याद आता है कि उस नदीपर पुल बंधा है।"

भवा०—"यदि उस पुल-परसे यह दस हजार सन्तान-सेना नदी पार करने लगी, तो बड़ी भीड़ हो जायगी। शायद एकही तोपमें सारी सेना सहजमेंही विध्वंस कर दी जायगी।"

जीवा०—"एक काम करो। थोड़ीसी सेना तुम अपने साथ रख लो। इस युद्धमें तुमने जैसी हिम्मत और चतुराई दिखलायी है उससे मुझे मालूम हो गया, कि ऐसा कोई काम नहीं, जो तुम न कर सको। तुम उन्हीं थोड़ेसे सन्तानोंके साथ सामनेसे हमला रोको। मैं तुम्हारी सेनाकी आड़में बाकी सन्तानोंको पुल पार करा ले आऊंगा। तुम्हारे साथके सैनिक तो जरूरही मरेंगे, पर मेरे साथवाले अगर बच जायं, तो कोई ताज्जुब नहीं।"

भवा०—"अच्छा, मैं ऐसाही करता हूं।"

बस, भवानन्दने दो हजार सन्तानोंके साथ एक बार फिर 'वन्दे-मातरम्'की गगनभेदी ध्वनि करते हुए बड़े उत्साहके साथ अंगरेजों-के तोपखानेपर हमला किया। घोर युद्ध छिड़ गया, पर तोपोंके सामने वह छोटीसी सन्तान-सेना कबतक ठहरती? जैसे किसान पके हुए धानके पौधोंको काट-काटकर बिछाता चला जाता है वैसेही अंगरेजों-की गोलन्दाज सेना उन्हें मार-मारकर गिराती चली गयी।

इसी बीच जीवानन्द बाकी सन्तान-सैन्यका मुँह थोड़ा फेरकर बायीं ओरके जंगलकी ओर धीरे-धीरे चले। कप्तान टामसके एक सहकारी लेफ्टण्ट वाटसनने दूरसेही देखा, कि सन्तानोंका एक दल धीरे-धीरे भागा जा रहा है। यह देख, वे कुछ फौजी और कुछ मामूली सिपाहियोंके साथ जीवानन्दके पीछे दौड़े।

कप्तान टामसने भी यह देख लिया। यह देखकर कि सन्तानों-का प्रधान भाग भागा जा रहा है, उन्होंने कप्तान 'हे' नामक अपने

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

एक सहकारीसे कहा—"मैं जबतक दो-चार सौ सिपाहियोंको लेकर इन सामनेके छिन्न-भिन्न विद्रोहियोंको नष्ट करनेमें लगा हूं तबतक तुम तोपों और बाकी सिपाहियोंको साथ लेकर उन भागनेवालोंका पीछा करो। बायीं ओरसे लेफ्टण्ट वाटसन जाही रहा है, दाहिनी ओरसे तुम भी जा पहुंचो। देखो, आगे बढ़कर तुम्हें पुलका मुंह बन्द कर देना होगा, जिससे वे लोग तीन ओरसे घिर जायं और जालमें फंसी हुई चिड़ियोंकी तरह मारे जा सकें। वे सब बड़े तेज चलनेवाले देशी सिपाही हैं, भागनेमें बड़े होशियार होते हैं, इस-लिये तुम उन्हें सहजही न पकड़ सकोगे। घूमघुमाव रास्तेसे घुड़स-वारोंको पुलके मुहानेपर ले जाकर खड़ा कर दो, बस, फतह हो जायगी।" कप्तान 'हे' ने ऐसा ही किया।

"अति दर्पे हता लङ्का।" कप्तान टामसने सन्तानोंको अत्यन्त तुच्छ समझकर केवल दो सौ पैदल सिपाही भवानन्दसे लड़नेके लिये रखे और बाकी सबको 'हे'के साथ रवाना कर दिया। चतुर भवानन्दने देखा कि अङ्गरेजोंकी तोपें हट गयीं और प्रायः सब सैनिक भी चले गये, अब जो थोड़े-बहुत रह गये हैं उन्हें हम सहज-ही मार डालेंगे। बस, उन्होंने अपने बचे-खुचे सिपाहियोंको पुकारकर कहा, "देखो, ये जो थोड़ेसे दुश्मनके सिपाही बचे हैं, उन्हें मारकर ढेर कर दो, तो मैं जीवानन्दकी सहायताको चल पड़ूं। बोलो, एक बार प्रेमसे बोलो—''जय जगदीश, हरे!" यह सुनतेही वह थोड़ी-सी सन्तान सेना, 'जय जगदीश'का शोर मचाती हुई कप्तान टामसके ऊपर भूखे बाघकी तरह टूट पड़ी; उस आक्रमणकी उग्रता वे थोड़ेसे सिपाही और तिलङ्गे न सह सके, सब-के-सब नष्ट हो गये। भवा-नन्दने स्वयं आगे बढ़कर कप्तान टामसके सिरके बाल पकड़ लिये। कप्तान अन्ततक प्राणपणसे लड़ता रहा। भवानन्दने कहा—"कप्तान साहब! मैं तुम्हें नहीं मारूंगा, क्योंकि अङ्गरेजोंसे हमारी कोई शत्रुता नहीं है। तुम भला इन मुसलमानोंकी सहायता करनेके लिये क्यों आये हो? जाओ, मैं तुम्हें प्राणदान देता हूं, पर इस समय तो

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

तुम हमारे वन्दी होकर रहोगे। भगवान् अङ्गरेजों का भला करें, हम-लोग तुम्हारे दोस्तही हैं, दुश्मन नहीं।"

यह सुन कप्तान टामसने भवानन्दको मारनेके लिये अपनी खुली सङ्गीन उठानी चाही, पर भवानन्दने उसे ऐसा शेरकी तरह अपने पञ्जे में पकड़ रखा था कि वह सिर भी न हिला सका। भवानन्दने अपने साथियोंसे कहा—"इसे बांध लो।" बस, दो-तीन सन्तानोंने आगे बढ़कर कप्तान टामसको बांध डाला। भवानन्दने कहा—"इसे एक घोड़ेपर लाद लो और इसको साथ लिये हुए जीवानन्दकी सहायताके लिये चलो।"

तब उन अल्पसंख्यक सन्तानोंने कप्तान टामसको एक घोड़ेकी पीठपर लाद लिया और "वन्देमातरम्" गीत गाते हुए वाटसनकी खोजमें चल पड़े।

उधर जीवानन्दकी सेनाके दिल टूट रहे थे और वह भागनेका मार्ग ढूंढ़ रही थी। जीवानन्द और धीरानन्दने उन्हें समझाबुझाकर रोक रखना चाहा, पर सबको भागनेसे न रोक सके। कितनेही भाग-कर आमके बगीचोंमें जा छिपे। बाक़ी लोगोंको जीवानन्द और धीरानन्द पुलकी ओर ले गये। पर वहां पहुंचतेही हे और वाटसनने उन्हें दो तरफसे घेर लिया। अब जान कहां बचती है!

—

ग्यारहवां परिच्छेद



इसी समय टामसकी तोपें दाहिनी ओरसे आ पहुंचीं। तब तो सन्तानोंकी सेना एकबारही तितर-बितर हो गयी। किसीके बचनेकी कोई आशा न रही। सन्तानोंमेंसे जिसका जिधर सींग समाया, वह उधरही भाग निकला। जीवानन्द और धीरानन्दने उन्हें रोक रखने-के लिये बड़े-बड़े यत्न किये, पर न रोक सके। इसी समय बड़े ऊंचे स्वरसे आवाज आयी—"पुलपर चले जाओ, पुलपर चले जाओ,

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

उस पार पहुंच जाओ, नहीं तो नदीमें डूब मरोगे। अङ्गरेजी सेना-की ओर मुंह किये हुए धीरे-धीरे पुलपर पहुंच जाओ।"

जीवानन्दने चारों ओर दृष्टि दौड़ायी, तो सामने भवानन्द नजर आये। भवानन्दने कहा—"जीवानन्द सबको पुलपर ले जाओ, नहीं तो रक्षा नहीं है।"

तब धीरे-धीरे पीछेकी ओर हटती हुई सन्तान-सेना पुल पार करने चली। पर ज्योंही वे पुलपर पहुंचे, अङ्गरेजोंने मौका पाकर तोपसे पुलको उड़ा देना शुरू किया। सन्तानोंका दल नष्ट होने लगा। भवानन्द, जीवानन्द और धीरानन्द तीनों एकत्र हो गये, एक-एक तोपकी मारसे बहुतसे सन्तानोंका संहार हो रहा था। भवानंदने कहा—"जीवानन्द, धीरानंद, आओ, तलवारें घुमाते हुए हमलोग उस तोपको चलकर छीन लें।"

यह कह तीनों व्यक्ति तलवारें चमकाते हुए उस तोपके पास पहुंचे और गोलंदाज सिपाहियोंको मार-मारकर ढेर करने लगे। अन्य संतानगण भी उनकी मददको आ पहुंचे। तोप भवानंदके हाथमें चली आयी। तोप कब्जेमें कर, भवानंद उसके ऊपर चढ़ गये और ताली बजाते हुए बोले—"बोलो वन्देमातरम्।" सब-के-सब 'वंदेमातरम्' गाने लगे। भवानंदने कहा—"इस तोपको घुमाकर अब इन सबोंकी खबर लेनी चाहिये।"

यह सुनतेही संतानोंने तोपका मुंह फेर दिया। फिर तो वह तोप उच्च नाद करती हुई वैष्णवोंके कानोंमें हरिनाम गुंजाने लगी। उसकी बाढ़के सामने सिपाही ढेर होने लगे। भवानंद उस तोपको खींच-खांचकर पुलके मुंहपर ले आये और बोले—"तुम दोनों कतारबंदी करके संतान–सेनाको पुलके उस पार ले जाओ, मैं अकेला-ही इस व्यूह-द्वारकी रक्षा करूंगा। तोप चलानेके लिये मेरे पास थोड़ेसे गोलंदाज सिपाही छोड़ जाओ।"

बीस चुने हुए जवान भवानंदके पास रह गये और असंख्य संतान-सेना पुल पारकर जीवानंद और धीरानंदके आज्ञानुसार कतार

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

बांधे आगे बढ़ो। अकेले भवानंद उन बीस जवानोंकी सहायतासे, एकही तोपसे बहुत सिपाहियोंको जहन्नुमकी राह दिखलाने लगे। पर यवन-सेना भी ज्वारके समय लगातार उठती हुई तरङ्गोंके समान-ही बढ़ती गयी और भवानंदको चारों ओरसे घेरकर हैरान करने लगी। वे उन तरङ्गोंमें पड़कर डूबने लगे। पर भवानंद न तो थकने-वालेही थे, न हारनेवाले—ये बड़ेही निडर थे। वे भी तोप दाग-दागकर कितनेही सैनिकोंको नष्ट करते चले गये। यवनगण आंधीसे उठती हुई तरङ्गोंकी तरह उनपर हमला करने लगे; पर वे बीसों जवान पुलका मोहड़ा रोकेही रहे। वार-पर-वार होनेपर भी वे न हटे और यवन पुलपर न पहुंच सके। वे वीर मानों अजेय थे। उनका जीवन मानों अमर था। इस अवसरमें दल-के-दल सन्तान उसपर पहुंच गये। थोड़ी देरमें सारी सन्तानसेना पुल पार कर जाती; पर इसी समय न जाने किधरसे नयी-नयी तोपें गरज उठीं। अररर धायँकी आवाज होने लगी। दोनोंही दल थोड़ी देर हाथ रोककर देखने लगे, कि ये तोपें कहांसे दागी जा रही हैं। उन्होंने देखा, कि जंगलके भीतरसे कितनेही देशी सिपाही तोपें दागते हुए चले आ रहे हैं। जंगलसे निकलकर सत्रह बड़ी-बड़ी तोपें एक साथही 'हे' साहबके दलपर आग बरसाने लगीं। घोर शब्दसे जंगल और पहाड़ गूंज उठे। सारा दिन लड़ते-लड़ते थकी हुई यवनसेना प्राणोंके भयसे कांप उठी। उस अग्निवर्षाके आगे तिलङ्गे, मुसलमान और हिन्दुस्तानी सिपाही सभी भागने लगे। केवल दो-चार गोरे खड़े-खड़े जूझ रहे थे।

भवानन्द तमाशा देख रहे थे। उन्होंने कहा—"भाइयो! देखो, वे चोटीकाटे भागे जा रहे हैं। चलो, एकबारही उनपर टूट पड़ो।" तब चींटियोंके दलकी तरह कतार बांधे सन्तानसेना नये उत्साहसे पुलके इस पार आकर यवनोंपर आक्रमण करने लगी। वह अकस्मात् यवनोंपर टूट पड़ी। उन बेचारोंका युद्ध करनेका मौकाही न मिला। जैसे गङ्गाकी तरङ्गें पर्व्वताकार मतवाले हाथीको बहा ले जाती हैं,-

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

वैसेही सन्तानगण यवनोंको बहा ले चले। मुसलमानोंने देखा कि पीछे तो भवानन्दकी पैदल सेना है और सामने महेंद्रकी बड़ी-बड़ी तोपें गरज रही हैं।

अब तो 'हे' साहबने देखा कि सर्वनाश उपस्थित है। उनकी सारी सुध-बुध जाती रही—बल,वीर्य, साहस, कौशल, शिक्षा, अभिमान—सबका दिवाला निकल गया। सारी फौजदारी, बादशाही, अंगरेज़ी, देशी, विलायती, काली और गोरी सेना गिर-गिरकर जमीन चूमने लगी। विधर्मियोंका दल भाग चला। जीवानन्द और धीरानन्द 'मार मार' करते हुए विधर्मी सेनाके पीछे दौड़ पड़े। सन्तानोंने उनकी कुल तोपें छीन लीं। बहुतसे अङ्गरेज और देशी सिपाही मारे गये। सर्वनाश समीप आया देख कप्तान 'हे' और वाटसनने भवानन्दके पास कहला भेजा—"हम सब तुम्हारे कैदी हैं, अब हमारी जानें छोड़ दो।" जीवानन्दने भवानंदके मुंहकी ओर देखा। भवानंदने मन-ही-मन कहा—"नहीं, यह तो नहीं होगा। आज तो मैं मरनेके लिये तैयार हूं।" यही सोचकर भवानंद ऊपरका हाथ उठाये, हरि-हरि कहते हुए बोले—"मारो, मारो इन दुष्टोंको।"

अब तो एक भी प्राणी जीता न बचा। केवल २०—३० गोरे सिपाही एक जगह इकट्ठे होकर मन-ही-मन आत्मसमर्पण करनेका निश्चय कर, जानपर खेलकर लड़ रहे थे। जीवानन्दने कहा—"भवानन्द! हमारी तो जय हो चुकी, अब लड़नेका कोई काम नहीं है। इन दो-चार व्यक्तियोंको छोड़कर और कोई जीता नहीं रहा। इनको प्राणदान दे दो और घर लौट चलो।"'

भवानन्दने कहा—"एकको भी जीता छोड़कर भवानन्द नहीं लौट सकता। जीवानन्द! मैं तुम्हारी सौगन्ध खाकर कहता हूं, तुम अलग हटकर खड़े हो जाओ और तमाशा देखो। मैं अकेलाही इन अंगरेजोंको मार गिराता हूं।"

कप्तान टामस घोड़ेकी पीठपर बंधा था। भवानन्दने हुक्म

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

दिया—"उसे मेरे सामने ले आओ। पहले उसीकी जान लूंगा, फिर मैं तो मरूंगाही।"

कप्तान टामस बंगला अच्छी तरह समझता था। उसने यह बात सुन ललकारकर उन अंगरेज सिपाहियोंसे कहा—"भाई अँगरेजो! मैं तो मरताही हूं, पर तुमलोग इंगलैण्डके प्राचीन यशकी रक्षा करना। मैं तुम्हें ईसामसीहकी सौगन्ध देकर कहता हूं कि पहले मुझे मारकर तब इन विद्रोहियोंको मारना।"

इसी समय धांयसे पिस्तौल छूटी। एक आइरिशने कप्तान टामसको लक्ष्यकर यह गोली छोड़ी थी। गोली कप्तान टामसके सिर लगी। उसके प्राण निकल गये। भवानन्दने जोरसे चिल्लाकर कहा—"मेरा ब्रह्मास्त्र व्यर्थ चला गया। अब कौन ऐसा अर्जुन, भीम, नकुल या सहदेव है, जो इस समय मेरी रक्षा कर सके? यह देखो, चुटीले शेरकी तरह सब गोरे मेरे ऊपर टूट रहे हैं। मैं तो मरनेके लिये आयाही हूं। अब बतलाओ, कौन-कौन सन्तान मेरे साथ मरना चाहते हैं।"

सबसे पहले धीरानन्द आगे आये, इसके बाद जीवानन्द। साथही दस, फिर पन्द्रह, फिर बीस और अन्तमें पचास सन्तान आकर वहीं इकट्ठे हो गये। भवानन्दने धीरानंदको देखकर कहा—"तुम भी क्या हमारेही साथ मरने आये हो?"

धीरा०—"क्यों मरनेमें भी किसीका इजारा है?" यह कहते हुए धीरानंदने एक अंगरेजको घायल किया।"

भवा०—"नहीं, नहीं, मेरे कहनेका मतलब यह है कि तुम तो स्त्री-पुत्रका मुंह देखते हुए सुखसे दिन बिताना चाहते थे।"

धीरा०—"कलवाली बातका इशारा कर रहे हो? क्या अब भी तुम्हारी समझमें कुछ न आया?" यह कहते-कहते धीरानन्दने उस घायल गोरेको मार गिराया।

भवा०—"नहीं—"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

बात पूरी भी न होने पायी थी, कि एक गोरेने भवानंदका दाहिना हाथ काट डाला।

धीरा०—"मेरी क्या मजाल, जो मैं तुम्हारे जैसे पवित्रात्मासे वैसी बातें कहता ? मैं तो उस समय सत्यानंदका जासूस बनकर गया हुआ था।"

भवा०—"यह क्या ? क्या महाराज मेरे ऊपर सन्देह करते हैं ?"

उस समय भवानंद एकही हाथसे लड़ रहे थे। धीरानंदने उनकी रक्षा करते हुए कहा—"कल्याणीके साथ तुम्हारी जो-जो बातें हुई थीं, वे सब महाराजने अपने कानों सुन ली थीं।"

भवा०—"सो कैसे ?"

धीरा०—"वे स्वयं वहां गये थे। देखो, सावधान हो जाओ।" इसी समय एक गोरेने भवानंदपर हमला किया, जिसका जवाब उन्होंने हमलेसे दिया।

धीरानंद कहते गये—"वे कल्याणीको गीता पढ़ा रहे थे, उसी समय तुम वहां पहुंचे। देखो, सावधान !" भवानंदकी बायीं भुजा भी कटकर गिर पड़ी।

भवा०—"अच्छा, उनको मेरे मरनेका हाल सुनाते हुए कह देना कि मैं अविश्वासी नहीं हूं।"

आंखोंमें आंसू भरकर धीरानंद युद्ध करते-करते बोले—"सो तो वेही समझें। कल उन्होंने जो आशीर्वाद किया था उसे याद करो। उन्होंने मुझसे कह रखा था कि आज भवानंद मरेगा, तुम उसके पासही रहना और मरते समय कह देना कि मेरे आशीर्वादसे उसे मरनेके बाद वैकुंठवास होगा।"

भवानंदने कहा—"संतानोंकी जय हो ! भाई ! मरते समय एक बार 'वंदेमातरम्' गान तो मुझे सुना दो।"

उसी समय धीरानंदके आज्ञानुसार सभी :युद्धोन्मत्त संतान लल-कारके साथ 'वंदेमातरम्' गाने लगे। इससे उनकी भुजाओंमें दुगुना

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

बल आ गया। उस भयङ्कर मुहूर्त्तमेंही बाकी बच हुए गोरे भी मारे गये। सारी युद्धभूमिपर सन्नाटा छा गया।

उसी मुहूर्तमें भवानंदने भी मुंहसे 'वन्देमातरम्' गाते और मन ही मन विष्णुभगवानके चरण-कमलोंका ध्यान करते हुए परलोककी यात्रा की।

हाय रे रमणी-रूप लावण्य! इस संसारमें सबसे बढ़कर तुम्हेंही धिक्कार है!

बारहवां परिच्छेद

लड़ाई जीतनेके बाद सारे विजयी वीर, अजय नदीके किनारे चारों ओरसे सत्यानंदको घेरे हुए, तरह-तरहकी खुशियां मनाने लगे केवल सत्यानंदको ही सुख नहीं था। वे भवानंदके लिये दुःखी हो रहे थे।

अबतक तो वैष्णवोंके पास लड़ाईके अधिक बाजे नहीं थे, पर इससमय न जाने कहांसे हजारों ढोल, दमामे, शहनाई, भेरी, तुरही सिंघे आदि बाजे आ पहुँचे। जय सूचक वाद्योंकी ध्वनिसे सभी जङ्गल, नदियां और पहाड़ गूंज उठे। इस प्रकार बड़ी देरतक संतानोंने तरह-तरहसे खुशियां मनायीं। इसके बाद सत्यानंदने कहा —"आज जगदीश्वरने बड़ी कृपा की जो संतानधर्मकी जय हुई, परन्तु अभी एक काम बाकी रह गया है। जो हमारे साथ खुशियां न मना सके और हमें यह खुशीका दिन दिखलानेके लिये जानों-पर खेल गये, उन्हें भूल जानेसे काम नहीं चलेगा। जिन्होंने रण-क्षेत्रमें प्राण गँवाये हैं, चलो, अब हम उन लोगोंका शव-संस्कार करें। विशेषकर, जिस महात्माने हमें इस लड़ाईमें जिताकर अपने प्राण दे दिये हैं, उस भवानन्दका संस्कार खूब धूमधामसे करें।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

यह सुनते ही सन्तानोंका दल 'वन्देमातरम्' कहता हुआ मरे हुए वीरोंका संस्कार करने चला। सब लोग हरिनाम लेते हुए बहुत सी चन्दनकी लकड़ियां बटोर लाये और भवानन्दकी चिता रच उसीपर उन्हें सुला, आग लगाकर चारों ओरसे चिताको घेरे हुए, 'हरे मुरारे' गाने लगे। ये लोग विष्णुभक्त थे—वैष्णवसम्प्रदाय—भक्त न थे, इसीलिये इनमें दाह कर्म होता था।

उसके बाद जङ्गलमें केवल सत्यानन्द, जीवानन्द, महेन्द्र, नवीनानन्द और धीरानन्द ही रह गये। पांचों व्यक्ति एकान्तमें बैठे सलाह करने लगे।

सत्यानंदने कहा—"इतने दिनोंतक हम-लोग जिस व्रतके लिये अपना सब कर्म-धर्म और सुख-आराम छोड़ बैठे थे। वह पूरा हो गया। अब यहां यवन-सेनाका नाम-निशान भी न रहा, जो बाकी बचे हैं वे एक क्षण भी हमारे सामने न ठहर सकेंगे। अब तुम लोगोंकी क्या राय है?"

जीवानंदने कहा—"अब यहांसे चलकर हमें राजधानीपर अधिकार जमाना चाहिये?"

सत्या०—"मेरी भी यही राय है।"

धीरा०—"पर आपके सिपाही कहां हैं?"

जीवा०—"क्यों? यहीं तो हैं।"

धीरा०—"कहां हैं? कोई नज़र भी आता है?"

जीवा०—"सब लोग जहां-तहां विश्राम कर रहे हैं। डङ्का बजाते ही सब इकट्ठे हो जायेंगे।"

धीरा०—"एकका भी पता नहीं लगेगा।"

सत्या०—"क्यों?"

धीरा०—"सब लूटपाट करने चले गये हैं। इस समय गांवोंकी रक्षाका कोई प्रबन्ध नहीं है। मुसलमानोंके गांवों और रेशमकी कोठियोंको लूटपाटकर सबके सब घर चले जायेंगे। इस समय आप किसीको नहीं पायेंगे। मैं खोज ढूंढ़कर बैठा हूं।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

सत्यानन्द उदास होकर बोले—"जो हो, अब तो यह सारा प्रदेश हमारी मुट्ठीमें आ गया। अब यहां और कोई ऐसा नहीं जो हमारे विरुद्ध उठ खड़ा हो, इसलिये तुम लोग वीरभूमिमें सन्तान-राज्यका झंडा खड़ा करो, प्रजासे कर वसूल करो और नगरपर अधिकार करनेके लिये सेनाका संग्रह करते रहो। हिंदुओंका राज्य हुआ है, यह सुनते ही बहुतसे सैनिक हमारे झंडेके नीचे चले आयेंगे।"

तब जीवानन्द आदि सब लोगोंने सत्यानन्दको प्रणामकर कहा—"हम सब आपको प्रणाम करते हैं। महाराजाधिराज! यदि आपकी आज्ञा हो, तो कहिये, हम लोग इसी जंगलमें आपका सिंहासन स्थापित करें।"

सत्यानन्दने जीवनमें आज पहिली ही बार क्रोध प्रकाश किया था। बोले—"क्या तुम लोग मुझे भी ढोंगी साधु समझते हो? हमलोग राजा नहीं—संन्यासी हैं। इस समय देशके राजा स्वयं भगवान् वैकुण्ठनाथ हैं। नगरपर अधिकार हो जानेपर तुमलोग जिसे चाहना उसे राजमुकुट पहना देना, पर यह निश्चय समझ रखो, कि मैं इस ब्रह्मचर्य्याश्रमको छोड़कर और किसी आश्रमको नहीं स्वीकार कर सकता। जाओ, अपना-अपना काम देखो।"

यह सुन, वे चारों आदमी ब्रह्मचारीको प्रणाम कर उठ खड़े हुए। तब औरोंकी नजर बचाकर सत्यानन्दने महेन्द्रको ठहरनेका इशारा किया। अन्य तीनों व्यक्ति तो चले गये, महेन्द्र रह गये। तब सत्यानन्दने महेन्द्रसे कहा—"तुम सबने विष्णु-मण्डपमें शपथ करके सन्तानधर्म ग्रहण किया था। भवानन्द और जीवानन्द दोनोंने ही अपनी प्रतिज्ञा भंगकर डाली। भवानन्दने तो अपने कहे मुताबिक अपने पापका प्रायश्चित्त कर डाला, अब मुझे डर है, कि कहीं जीवानन्द भी प्रायश्चित्त करनेके लिये अपने प्राण न दे डाले, पर मुझे एक ही बातका भरोसा है, जिससे वह अभी नहीं मर सकता। वह बात एकदम गुप्त है। अकेले तुमने ही अपनी प्रतिज्ञा पूरी तरह निबाही है। अब तो सन्तानोंका काम हो गया। प्रतिज्ञा तो

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

उसी दिन तकके लिये थी, जबतक सन्तानोंका काम न हो जाता। अब कार्योद्धार हो गया है, इसलिये मैं चाहता हूं कि तुम फिरसे गृहस्थ बन जाओ।"

महेन्द्रकी आंखोंसे लगातार आंसू चलने लगे। वे बोले—"महाराज! अब मैं किसको लेकर फिरसे गृहस्थ बनूँ? स्त्रीने प्राण दे ही दिये, कन्याका कुछ पता ही नहीं, कि किधर गयी। अब मैं उसे कहांसे ढूंढ़ लाऊं? आपने कहा था, कि वह जीती है, इसीसे इतना भी जानता हूं। और कुछ मुझे नहीं मालूम।"

तब सत्यानन्दने नवीनानन्दको बुलाकर महेन्द्रसे कहा—"देखो, इनका नाम नवीनानंद गोस्वामी है। ये बड़े ही पवित्रात्मा हैं और मेरे प्रिय शिष्य हैं। ये ही तुम्हें तुम्हारी कन्याका पता बता देंगे।" यह कह सत्यानंदने शांतिको इशारेसे कुछ कहा। उस इशारेको समझकर शांति वहांसे जाने लगी। यह देख महेंद्रने कहा—"अब तुमसे कहां देखा देखी होगी?"

शांतिने कहा—"मेरे आश्रममें चलिये।" यह कह, शांति आगे-आगे चली। महेंद्र भी ब्रह्मचारीके पैर छू, बिदा मांग शांतिके पीछे-पीछे चलकर उसके आश्रममें पहुंचे। उस समय रात बहुत बीत गयी थी, तोभी शांति सोने न जाकर नगरकी ओर चल पड़ी।

सबके चले जानेपर ब्रह्मचारी भूमिमें माथा टेके हुए मन-ही-मन जगदीश्वरका ध्यान करने लगे। क्रमसे सवेरा होनेको आ गया। इसी समय न जाने किसने आकर उनका सिर छूकर कहा—"मैं आ गया!"

ब्रह्मचारी उठ खड़े हुए और चकपकाये हुए बड़ी घबराहटके साथ बोले—"आप आ गये? क्यों? किस लिये?"

आनेवालेने कहा,—"दिन पूरे हो गये।"

ब्रह्मचारीने कहा,—"प्रभो, आज तो क्षमा कीजिये। आगामी माघी पूर्णिमाके दिन मैं आपकी आज्ञाका पालन करूंगा।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative



CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative



आनन्दमठ



चौथा खण्ड



CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative



CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

पहला परिच्छेद

उस रातको वह प्रदेश हरिध्वनिसे भर गया। सन्तानोंके दल-के-दल जहां-तहां ऊंचे स्वरसे 'वन्देमातरम्' या 'जगदीश हरे !' गाते हुए घूमते दिखाई देने लगे। कोई शत्रुसेनाका अस्त्र, कोई वस्त्र छीनने लगा। कोई मरे हुए शत्रुओंकी लाशोंको पैरसे ठुकराते और तरह-तरहके उपद्रव मचाते थे। कोई गांवकी तरफ़ और कोई नगरकी तरफ़ चले जाते और राही या गृहस्थको पकड़कर कहते—"बोलो वन्देमातरम् ! नहीं कहोगे, तो हम तुम्हें अभी मारकर फेंक देंगे।" कोई हलवाईकी दूकान लूटकर खा रहा है तो कोई ग्वालेके घर जा सींकेसे दहीकी मटकी उतार दहीमें मुंह लगा रहा है। कोई कहता—"अरे, व्रजके ग्वाले तो आ गये ; पर ग्वालिनें कहां हैं ? उसी एक रातभरमें गांव-गांवमें नगर-नगरमें घोर कोलाहल मच गया। सबोंने कहा,—"मुसलमान हार गये, हिन्दुओंका राज्य पुनः हो गया। अब क्या है ? अब सब लोग प्रेमसे एकबार श्रीरामचन्द्रकी जय बोलो।" अब तो गांववाले मुसलमानोंको देखते ही मारनेको दौड़ने लगे। कोई-कोई तो उसी रातको मुसलमानोंकी बस्तीमें घुस उनके घरोंमें आग लगाकर उनकी चीजें लूटने-खसोटने लगे। बहुतसे मुसलमान मारे गये, बहुतोंने दाढ़ी मुड़वा, देहमें रामरज पोत, रामका नाम लेना शुरू कर दिया। पूछनेपर वे झट कह उठते, कि भाई ! मैं तो हिन्दू हूं।

दलके दल डरे हुए मुसलमान नगरकी ओर भाग चले। चारों ओर राज्यके नौकर दौड़-धूप करने लगे। बचे-बचाये सिपाही सुसज्जित होकर नगरकी रक्षाके लिये आ इकट्ठे हुए। राजधानीके किलेको घाटियों और खाइयोंके दरवाजोंपर हथियारबन्द सिपाही बड़ी सावधानीसे पहरा देने लगे। सब लोग रात-रातभर जागे

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

रहते और प्रत्येक क्षण आगन्तुक विपत्तिकी सम्भावनासे कांपते रहते। हिन्दू लोग कहने लगे—"आयें, संन्यासी बाबा लोग आयें तो सही—मां दुर्गा करें, वह दिन शीघ्र देखना नसीब हो।" मुसलमान कहने लगे—"या खुदा! इतने दिनों बाद क्या आज कुरानशरीफ झूठा हो गया? हम पांच वक्त नमाज़ पढ़ते हैं, तोभी इन माथेमें चन्दन लगानेवाले हिन्दुओंको न हरा सके। दुनियामें किसी बातका भरोसा नहीं है।"

इसी तरह किसीने रोते हुए और किसीने हंसते हुए वह रात बड़ी घबराहटके साथ बितायी।

यह सब बातें कल्याणीके कानोंमें भी पड़ीं; क्योंकि यह बातें तो इस समयतक औरत, मर्द, बच्चे सबके कानोंतक पहुंच चुकी थीं। कल्याणीने मन-ही-मन कहा—"जय जगदीश्वर! आज तुम्हारा कार्य सम्पूर्ण हो गया। अब आजही मैं अपने स्वामीको देखने जाऊंगी। हे मधुसूदन! आज तुम मेरे सहायक बनो।"

अधिक रात बीतनेपर कल्याणी शय्या छोड़कर उठी और चुपचाप खिड़की खोलकर देखने लगी। जब उसने कहीं किसीको न देखा, तब चुपकेसे धीरे धीरे गौरी देवीके मकानके बाहर आयी, उसने मन-ही-मन इष्टदेवताको यादकर कहा,—"प्रभो! ऐसा करना, जिसमें पदचिह्न पहुंचकर मैं उन्हें देख सकूं।"

कल्याणी नगरके द्वारके पास आ पहुंची। वहां पहरेवालेने पूछा—"कौन जा रहा है?" कल्याणीने डरते-डरते कहा—"मैं स्त्री हूं।" पहरेवालेने कहा—"जानेका हुक्म नहीं है।" बात दफ़ादारके कानमें पड़ी; उसने कहा—"बाहर जानेकी मनाई नहीं है, भीतर जानेकी रोक है।" यह सुन, पहरेवालेने कल्याणीसे कहा,—"जाओ माई! चले जाओ, बाहर जानेकी मनाई नहीं है। पर आजकी रात बड़ी आफ़तकी है। न मालूम माता! रास्तेमें क्या हो जाय। कौन जाने, कहीं तुम्हें डाकुओंके हाथमें पड़ जाना पड़े या गड्ढेमें गिरकर प्राण गंवाने पड़ें। आजकी रात तो माईजी! तुम कहीं न जाओ।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कल्याणीने कहा,—"बाबा ! मैं भिखारिन हूं। मेरे पास फूटी कौड़ी भी नहीं है। डाकू मुझसे कुछ न बोलेंगे।"

पहरेवालेने कहा—"मां ! अभी तुम्हारी नयी उमर है। भरी जवानी है। दुनियामें इससे बढ़कर धन-दौलत कुछ भी नहीं है। इसके डाकू तो हम भी हो जा सकते हैं।" कल्याणीने देखा कि यह तो बड़ी विपद् आयी ! इससे बिना कुछ कहे-सुने, चुपचाप वहांसे दबे पांवों खिसक पड़ी। पहरेवालेने देखा, कि उसकी माईजीने तो उसकी दिल्लगीका मतलबही नहीं समझा। इससे उसके दिलको बड़ी चोट पहुंची। दुःख भुलानेके लिये उसने गांजेका दम लगाया और राग झिंझोटी खम्माचमें सोरी मियांका टप्पा गाना शुरू किया। कल्याणी चली गयी।

उस रातको रास्तेमें दल-के-दल पथिक नज़र आ रहे थे। कोई 'मारो मारो' कह रहा था, कोई 'भागो भागो' के नारे बुलन्द कर रहा था। कोई रो रहा था, कोई हंस रहा था। जो जिसे देख पाता, वह उसीको पकड़ने दौड़ता था। कल्याणी बड़े चक्करमें पड़ी। एक तो राह नहीं मालूम, दूसरे, किसीसे कुछ पूछने लायक भी नहीं; क्योंकि सभी लड़नेको ही तैयार नज़र आते थे। वह लुक-छिपकर अंधेरेमें रास्ता चलने लगी; पर हज़ार छिप-छिपकर चलनेपर भी वह एक अत्यंत उद्धत विद्रोही-दलके हाथमें पड़ ही गयी। वे खूब शोर-गुल मचाते हुए उसे पकड़नेको लपके। कल्याणी दम साधे हुए भाग चली और जङ्गलके भीतर घुस गयी। वहांतक एक दो डाकुओंने उसका पीछा किया। एकने उसका आंचल पकड़कर कहा—"अब कहो, प्यारी !" इसी समय अकस्मात् किसीने पीछेसे आकर उस दुष्टको एक लाठी मारी। वह मार खाकर पीछे हट गया। इस व्यक्तिका वेश संन्यासियोंका-सा था। छाती काले मृगकी खालसे छिपी हुई थी—उम्र अभी बिलकुलही थोड़ी थी। उसने कहा,—"देखो, डरो मत। मेरे साथ-साथ आओ। तुम कहां जाओगी ?"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कल्याणी—"मुझे पदचिह्न जाना है।"

आगन्तुक अचरजमें आकर चौंक पड़ा; बोला,—"क्या कहा? पदचिह्न?" यह कह, उसने कल्याणीके दोनों कंधोंपर हाथ रखकर अंधेरेमें उनका चेहरा देखना शुरू किया।

अकस्मात् पुरुषका स्पर्श होनेसे कल्याणीकी देहके रोंगटे खड़े हो गये। वह डर गयी, शर्मा गयी, अचरजमें पड़ गयी और रोने लगी। वह ऐसी डर गयी, कि उससे भागते भी न बन पड़ा। आगन्तुकने जब अच्छी तरहसे उसे देख-भाल लिया तब कहा,—"हरे मुरारे! अब मैंने तुम्हें पहचाना। तुम वही मुंहजली कल्याणी हो न?"

कल्याणीने डरते-डरते पूछा—"आप कौन हैं?"

आगन्तुकने कहा,—"मैं तुम्हारा दासानुदास हूं। सुन्दरी! मुझपर प्रसन्न हो जाओ।"

बड़ी तेजीके साथ वहांसे हटकर कल्याणीने तनककर कहा,—"क्या इस तरह मेरा अपमान करनेके लिये ही आपने मेरी रक्षा की थी? मैं देख रही हूं, कि आप ब्रह्मचारियोंका-सा वेश बनाये हुए हैं। क्या ब्रह्मचारियोंकी यही करनी है? आज मैं निस्सहाय हो रही हूं, नहीं तो आपके मुंहपर लात मारती।"

ब्रह्मचारीने कहा—"अरी मन्द मुसकानवाली! मैं न जाने कबसे तुम्हारे इस सुंदर शरीरको स्पर्श करनेके लिये तड़प रहा था।" यह कह, ब्रह्मचारीने लपककर कल्याणीको पकड़ लिया और उसे अपने कलेजेसे लगा लिया। अब तो कल्याणी खिलखिलाकर हंस पड़ी और झटपट बोल उठी,—"अरी वाह री मेरी क़िस्मत! बहन! तुमने पहलेही क्यों नहीं कह दिया कि तुम्हारा भी मेरा ही जैसा हाल है?"

शान्तिने कहा—"क्यों, बहन! क्या महेन्द्रको खोजने चली हो?"

कल्याणीने कहा—"तुम कौन हो? देखती हूं कि तुम्हें तो सब कुछ मालूम है?"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

शान्तिने कहा,—"मैं ब्रह्मचारी हूं, सन्तान-सेनाका अधिनायक हूं, बड़ा भारी वीर पुरुष हूं। मुझे सब कुछ मालूम है। आज रास्तेमें सिपाही और सन्तान दोनों ही ऊधम मचाये हुये हैं। आज तो तुम पदचिन्ह नहीं जा सकोगी।"

कल्याणी रोने लगी। शान्तिने आंखें नचाकर कहा—"डरनेकी क्या बात है ? हम लोग नयनवाण चलाकर ही शत्रु-वध किया करती हैं। चलो, अभी पदचिन्ह चलें।"

कल्याणीने ऐसी बुद्धिमती स्त्रीकी सहायता पाकर समझा, मानो हाथों स्वर्ग मिल गया। वह बोल उठी—"चलो, तुम मुझे जहां ले चलोगी, वहीं चलूंगी।"

तब शान्ति कल्याणीको साथ लिये हुये जंगली रास्तेसे जाने लगी।

दूसरा परिच्छेद



जिस समय शान्ति अपने आश्रमसे निकलकर उस गहरी रातके समय नगरकी ओर रवाना हुई थी, उस समय जीवानन्द आश्रममें ही मौजूद थे। शान्तिने जीवानन्दसे कहा,—"मैं नगरकी ओर जाती हूं और शीघ्र ही महेन्द्रकी स्त्रीको लेकर आती हूं। तुम महेन्द्रसे कह रखना कि उसकी स्त्री जीती है।"

जीवानन्दने भवानन्दसे कल्याणीके जी उठनेकी बात सुन रखी थी। सब स्थानोंमें घूमने-फिरनेवाली शान्तिसे उन्हें इस बातका पता भी मालूम हो गया था कि वह इन दिनों कहां रहती है। जीवानन्दने धीरे-धीरे सब बातें महेन्द्रको बतला दीं।

पहले तो महेन्द्रको विश्वास ही न हुआ, पर अन्तमें वे इस आनन्दसे अभिभूत हो; मुग्ध हो रहे।

उस रातके बीतते बीतते शांतिकी बदौलत महेन्द्रकी कल्याणीसे

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

भेंट हुई। उस सुनसान जंगलमें सालके पेड़ोंकी घनी श्रेणीके भीतर अन्धेरेमें छिपे हुए पशु-पक्षियोंके सोकर उठनेके पहले ही उन दोनोंमें देखादेखी हुई। उनके इस मिलनेके साक्षी केवल नीले आकाशमें सोहनेवाले, क्षीण-प्रकाश नक्षत्र और चुपचाप कतार बांधे खड़े रहनेवाले सालके पेड़ ही थे। दूरसे कभीकभी पत्थरकी शिलाओंसे टकरानेवाली, मधुर कल-कल नाद करनेवाली, नदीका हर-हर शब्द और कभी-कभी पूर्व दिशामें उषाके मुकुटकी ज्योति जगमगाती हुई देखकर प्रसन्न होनेवाली एक कोयलकी कूक सुनायी पड़ जाती थी।

एक पहर दिन चढ़ आया। जहाँ शान्ति थी, वहीं जीवानन्द भी आ पहुंचे। कल्याणीने शान्तिसे कहा—"हम लोग आपके हाथों विना मोल विक गये हैं! अब हमारी कन्याका पता बताकर आप इस उपकारको पूरा कर दें।"

शान्तिने जीवानन्दके चेहरेकी ओर देखते हुये कहा—"मैं तो अब सोती हूं। आठ पहरसे मैं बैठीतक नहीं हूं। दो रात जागकर ही बितायी है। मैं पुरुष हूं—"

कल्याणीने धीरेसे मुस्कुरा दिया। जीवानन्दने महेन्द्रकी ओर देखते हुये कहा—"अच्छा, इसका भार मेरे ऊपर रहा। आप लोग पदचिन्ह चले जायँ, वहीं आप अपनी कन्याको पा जायंगे।"

यह कह जीवानन्द, निमाईके घरसे कन्याको ले आनेके लिये भरुईपुर चले गये, पर वहां पहुंचनेपर उन्होंने देखा कि यह काम कुछ आसान नहीं है।

पहले तो निमाई यह बात सुनते ही चकपका गयी और इधर-उधर देखने लगी। इसके बाद उसकी नाक-भौं चढ़ गयी और वह रो पड़ीं। फिर बोली—"मैं तो लड़की नहीं दूंगी।"

निमाईने अपने गोल-गोल हाथोंकी कलाईसे जब आंखोंके आंसू पोंछ डाले तब जीवानन्दने कहा—"बहन! रोती क्यों हो? कुछ दूर भी तो नहीं है? जब तुम्हारे जी में आये, जाकर देख आया करना।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

निमाईने होंठ फुलाकर कहा—"अच्छा, तुम लोगोंकी लड़की है, ले जाना चाहते हो, तो ले जाओ। मुझे क्या है?" यह कहती हुई वह भीतरसे सुकुमारीको ले आयी और उसे क्रोधके साथ जीवानंदके पास पटककर आप पैर पसारकर रोने बैठी। लाचार, जीवानन्द उस बारेमें कुछ भी न कहकर इधर-उधरकी बातें करने लगे। पर निमाई-का क्रोध किसी तरह कम न हुआ। वह उठकर सुकुमारीके कपड़ोंकी गठरी, गहनोंका सन्दूक, बाल बांधनेके फीते खिलौने आदि ला लाकर जीवानन्दके आगे फेंकने लगी। सुकुमारी आप ही उन सब चीजोंको सहेजने लगी। वह निमाईसे पूछने लगी—"माँ! मुझे कहाँ जाना होगा?"

अब तो निमाईसे न रहा गया। वह सुकुमारीको गोदमें लिये रोती हुई चली गयी।

तीसरा परिच्छेद



पदचिन्हके नये दुर्गमें आज महेन्द्र, कल्याणी, जीवानन्द, शांति, निमाई, निमाईके स्वामी और सुकुमारी जमा हैं। सब सुखमें पगे हुए हैं। शांति भी नवीनानन्दका रूप धारण किये हुये आयी है। वह जिस रातको कल्याणीको अपनी कुटियामें ले आयी थी, उसी रातको उसने कल्याणीको इस बातकी ताकीद कर दी थी कि अपने स्वामी-से यह कभी न कहना कि नवीनानन्द स्त्री है। एक दिन कल्याणीने उसे घरके भीतर बुलाया। नवीनानन्द भीतर आये। उन्होंने नौकरों-की रोकथाम नहीं सुनी।

शांतिने कल्याणीके पास आकर पूछा—"तुमने मुझे किसलिये बुलाया है?"

कल्याणी—"इस तरह कबतक मर्दाना वेश बनाये रहोगी? न

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

मिलना-जुलना होता है, न बातचीत होती है। तुम्हें मेरे स्वामीके सामने अपना यह परदा हटाना पड़ेगा।"

नवीनानन्द बड़े फेरमें पड़ गये, बहुत देरतक चुप रहे, अन्तमें बोले,—"कल्याणी! इसमें अनेक विघ्न हैं।"

बस, दोनोंमें इसी विषयपर बातें होने लगीं। इधर जिन नौकरों-नें नवीनानन्दको भीतर जानेसे रोका था, उन्होंने महेंद्रके पास जाकर खबर दी कि नवीनानंद जबरदस्ती घरके अंदर घुस गये हैं, उन्होंने कोई रोक टोक नहीं मानी। यह सुनकर महेंद्र बहुत विस्मित हुए और घरके अंदर गये। उन्होंने कल्याणीके सोनेके कमरेमें जाकर देखा कि नवीनानंद घरमें एक ओर खड़े हैं और कल्याणी उनकी देहपर हाथ रखे उनके बघछालेकी गांठ खोल रही है। महेंद्र बड़े विस्मित, साथ ही क्रोधित भी हुए।

नवीनानंदने उन्हें देख, हंसकर कहा—"क्यों गुसाईंजी! एक संतानपर दूसरे संतानका अविश्वास कैसा ?"

महेंद्रने कहा—"क्या भवानंदजी विश्वासपात्र थे ?"

नवीनानंदने आंखें तरेरकर कहा—"तो कल्याणी भवानंदके शरीरपर हाथ रखकर उनके बघछालेको गांठ भी नहीं खोलने गयी थी!" कहते कहते शांतिने कल्याणीके हाथमें चुटकी भरी—उसे बघछाला नहीं खोलने दिया।

महेंद्र—"इससे क्या हुआ ?"

नवीना०—"आप मेरे ऊपर भले ही अविश्वास कर सकते हैं; पर कल्याणीपर क्योंकर अविश्वास कर सकते हैं ?"

अब तो महेन्द्र बड़े चक्करमें पड़े, बोले—"क्यों ? मैंने इनपर कब अविश्वास किया ?"

नवीना०—"नहीं किया, तो फिर मेरे पीछे पीछे यहांतक क्यों चले आये ?"

महेन्द्र—"मुझे कल्याणीसे एक बात करनी थी, इसीलिये चला आया।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

नवीना०—"अच्छा, तो अभी जाइये। अभी इनसे कुछ बातें कर लेने दीजिये। आपका तो यहीं घर-द्वार है, जब चाहेंगे चले आयेंगे। मैं तो आज बड़ी-बड़ी मुश्किलोंसे आने पाया हूं।"

महेन्द्र तो पूरे बुद्धू बन गये। वे कुछ भी न समझ सके कि यह मामला क्या है? ऐसी बातें तो किसी अपराधीके मुंहसे नहीं निकल सकतीं। कल्याणीके भी रंग-ढंग निराले ही थे। वह भी अपराधिनीकी तरह न भागी, न डरी, न शर्मायी—बल्कि धीरे-धीरे मुस्कुरा रही थी और वह कल्याणी जो उस दिन वृक्षतले बैठी हुई हंसते-हंसते विष खा गयी थी—वह भला कभी अविश्वासिनी हो सकती है? महेन्द्र मन-ही-मन यही सब सोच ही रहे थे कि इसी समय शान्तिने महेन्द्रको यों बुद्धू बनते देख, धीरेसे हंसकर कल्याणीपर एक तिरछी चितवनका वार किया। सहसा अंधेरा मानो दूर हो गया। महेन्द्रने देखा कि यह चितवन तो मर्दकी नहीं, स्त्रीकी है! बड़ा साहस कर महेन्द्रने नवीनानन्दकी दाढ़ी पकड़के खींच ली। नकली दाढ़ी-मूछ एक ही झटकेमें नीचे गिर पड़ी। इसी समय अवसर पाकर कल्याणीने उसके बघछालेकी गांठ खोल डाली। बघछाला भी नीचे गिर पड़ा। यों परदा खुलते देख, शान्ति सिर झुकाये खड़ी रह गयी।

तब महेन्द्रने शान्तिसे पूछा—"तुम कौन हो?"

शान्ति—"श्रीमान् नवीनानन्द गोस्वामी।"

महेन्द्र—"यह सब धप्पेबाजी है। तुम स्त्री हो।"

शान्ति—"अच्छा, स्त्री ही सही।"

महेन्द्र—"अच्छा, यह तो कहो, तुम स्त्री होकर हरदम जीवानन्दजीके साथ क्यों रहती हो?"

शान्ति—"मान लीजिये, कि मैंने यह बात आपसे नहीं कही।"

महेन्द्र—"क्या जीवानन्द यह जानते हैं कि तुम स्त्री हो?"

शान्ति—"हाँ, जानते हैं।"

यह सुनकर विशुद्धात्मा महेन्द्र बड़े ही दुःखित हुए। अब तो

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कल्याणीसे न रहा गया। वह झट बोल उठी, "ये जीवानन्द महाराजकी धर्मपत्नी, श्रीमती शान्तिदेवी हैं।"

क्षण भरके लिये महेन्द्रके चेहरेपर प्रसन्नता छा गयी। फिर उसपर अंधेरा छा गया। कल्याणी इसका मतलब समझ गयी, बोली—"यह पूर्ण ब्रह्मचारिणी है।"

चौथा परिच्छेद

उत्तरी बंगाल मुसलमानोंके हाथसे निकल गया। पर कोई मुसलमान इस बातको नहीं मानता। वे यही कहकर अपने मनको बहलाया करते हैं कि यह सब-कुछ लुटेरोंकी बदमाशी है। हम अभी उन्हें सर किये डालते हैं। इस तरह कितने दिनोंतक चलता, सो कहा नहीं जा सकता; परन्तु इस समय भगवान्‌की दयासे वारन हेस्टिंग्ज़ कलकत्तेमें बड़े लाट होकर आये। वे यों ही मनको बहलाकर रखनेवाले जीव नहीं थे; क्योंकि यदि उनमें यही गुण होता तो आज भारतमें वृटिश राज्यका कहीं पता न चलता। संतानोंके शासनके लिये मेजर एडवार्डिस नामके दूसरे सेनापति नयी सेना लिये हुए फौरन आ पहुंचे।

एडवार्डिसने देखा कि यह तो युरोपियनोंकी लड़ाई नहीं है। शत्रुओंके पास न सेना है, न नगर है, न राजधानी है, न किला है पर कुछ न होनेपर भी सब कुछ उन्हींके अधीन है। जिस दिन जहाँ-पर वृटिश सेनाका पड़ाव होता है उसी दिनभरके लिये वहाँ वृटिश सेनाका अधिकार हो जाता है। सिर्फ उसी दिनभरके लिये। जब अंगरेजी सेना वहांसे चली जाती है, तब फिर हर जगह वंदेमातरम्" का गान होने लगता है। साहबको इस बातकी थाह नहीं लगने पाती कि ये किधरसे टिड्डियोंके दलकी तरह रात-ही-भरमें पैदा हो

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

जाते हैं और जो गाँव अङ्गरेजों के दखलमें आता है, उसे जला जाते अथवा थोड़ीसी अङ्गरेजी फौज होनेसे उसे तत्काल नष्ट कर डालते हैं। अनुसंधान करते करते साहबको मालूम हुआ कि इन लोगों ने पदचिन्हमें किला बनाया है और वहीं खजाना और सिलहखाना बना रखा है। अतएव उन्होंने निश्चय किया कि उसी किलेको हाथमें कर लेना चाहिये।

उन्हों ने जासूसों से इस बातकी जोह लेनी शुरू की कि पद-चिन्हमें कितने संतान रहते हैं। उन्हें जो खबर मिली, उससे उन्हों ने किलेपर हमला करना अच्छा नहीं समझा। उन्हों ने मन-ही-मन एक बड़ी विचित्र चाल सोची।

माघकी पूर्णिमा आ पहुंची थी। उनके पड़ावसे थोड़ी दूरपर नदीके किनारे एक मेला लगता था। इस बार मेला जोरों पर था। यों तो हर बार ही यहां एक लाख आदमी जमा हो जाया करते थे। अबकी तो वैष्णव राजा हुए थे। उन लोगों ने इस बारके मेलेको और भी भड़कीला बनानेका विचार किया था। इसीसे अनुमान था कि जितने संतान हैं, सभी पूर्णिमाके दिन मेलेमें आ पहुंचेंगे। मेजर एडवार्डिसने सोचा कि सम्भव है, पदचिन्हके रक्षकगण भी मेलेमें ही चले आयें। अतएव हम उसी दिन पदचिह्न-पर अधिकार कर लेंगे।

इसी अभिप्रायसे मेजरने इस बातकी तमाम शोहरत कर दी कि वे मेलेके दिन वहांके लोगों पर हमला करेंगे! सब वैष्णव उस दिन यहीं आकर जमा हों गे, इसलिये एक ही दिनमें, एक ही स्थानमें, वे सबका काम तमाम कर देना चाहते हैं। यह खबर गाँव-गाँवमें फैल गयी। फिर तो जो संतान जहाँ था, वह उसी क्षण वहाँसे हथियार लिये हुए मेलेकी रक्षा करनेके लिये दौड़ पड़ा। सभी संतान माघी पूर्णिमाके दिन नदीके तीरपर मेलेमें आ इकट्ठे हुए। मेजर-साहबका सोचना बिलकुल ठीक निकला। अङ्गरेजोंके सौभाग्यसे महेंद्र भी इस फंदेमें आ पड़े। वे थोड़ेसे ही सैनिकों को पदचिह्नमें

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

रखकर, अधिकांश सैनिकोंको लिये हुए मेलेमें चले आये। इन सब बातोंके पहले ही जीवानंद और शांति पदचिह्नसे बाहर चले गये थे। उस समय युद्धकी कोई बात ही नहीं हुई, क्योंकि उन लोगोंकी तबियत ही लड़ाई-भिड़ाईसे फिरी हुई थी। माघी पूर्णिमाके पुण्य दिवसके अच्छे मुहूर्त्तमें, पवित्र जलमें प्राण विसर्जन कर प्रतिज्ञा-भङ्गरूपी महापापका प्रायश्चित्त करनेका ही उनका विचार था। रास्तेमें जाते-जाते उन्होंने सुना कि मेलेमें जमा हुए संतानोंके साथ अङ्गरेजी सेनासे युद्ध होगा। यह सुनकर जीवानंदने कहा—"तब चलो, झटपट वहीं चलें। युद्धमें ही प्राण दे देंगे।"

वे जल्दी-जल्दी पैर बढ़ाते हुए चले। एक जगह रास्ता एक टीलेके ऊपरसे गया था। टीलेपर चढ़कर उस वीर दम्पतिने देखा कि उसके नीचे थोड़ी ही दूरपर अंगरेजोंकी सेनाका पड़ाव है। शांतिने कहा—"मरनेकी बात तो अभी रहने दो—बोलो, "वंदे मातरम्।"

पांचवां परिच्छेद



फिर दोनोंने चुपचाप न जाने क्या सलाह की। इसके बाद जीवानन्द एक जङ्गलमें छिप गये और शांति एक दूसरे जङ्गलमें जाकर अद्भुत काण्ड रचनेकी तैयारी करने लगी।

शांति मरने जा रही थी, पर उसने सोच लिया था कि मैं मरते समय स्त्रीका ही वेश बनाये रखूंगी। महेन्द्रने उससे कहा था कि पुरुषका वेश बनाना धोखेबाजी है। इस लिये धोखेका रूप बनाकर मरना अच्छा नहीं। यही सोचकर वह अपनी पिटारी और सिन्दूर की डिबिया साथ लिये आयी थी। उन्हींमें उसके शृंगारकी सब चीजें रहती थीं। अबकी नवीनानन्द वही पिटारी और डिबिया खोलकर अपना वेश बदलने लगे।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

उस समयकी रीतिके अनुसार शांतिने अपने लहराते हुए बालोंके गुच्छे इधर-उधर लटकते छोड़ दिये और उन्हींके भीतर मुंहको छिपाये, माथेमें चन्दन और कत्थेकी सुन्दर बिन्दी लगाये, हाथमें एक सारंगी लिये, खासो वैष्णवी बनी हुई, अंगरेजी सेनाके पड़ावपर आ पहुंचो। उसे देखतेही कड़ी-कड़ी मूछोंवाले सिपाही उसपर लट्टू हो गये। किसीने टप्पा, किसीने गजल, किसीने राधाके सम्बन्धके गीत और किसीने कृष्णावतारके भजन गानेके लिये फरमाइश कर डाली और मनमाने गीत सुन, किसीने चावल, किसीने दाल,किसीने मिठाई, किसीने पैसे दिये और किसीने चवन्नीतक दे डाली। वैष्णवी जब वहांका सारा हाल अपनी आँखों देखकर लौटने लगी, तब सिपाहियोंने उससे पूछा—"अब फिर कब आवोगी ?" वैष्णवीने कहा—"कुछ कह नहीं सकती, क्योंकि मेरा मकान बहुत दूर है।" सिपाहियोंने पूछा—"कितनी दूर है ?" वैष्णवीने कहा—"मेरा घर पदचिन्ह गांवमें है।" इधर उसी दिन मेजर-साहब पदचिन्हका हाल चाल इधर-उधरसे मालूम कर रहे थे। एक सिपाहीको यह बात मालूम थी। वह वैष्णवीको लिए हुये कप्तान-साहबके पास चला गया। साहब उसे मेजर साहबके पास ले गया। मेजर साहबके पास पहुंचकर वैष्णवीने मधुर मुस्कान छोड़ते हुए, एक तिरछी चितवनका वार साहबके कलेजेपर कर उन्हें पागल बनाते हुए, खंजरी बजाकर गाना शुरु किया,—

"म्लेच्छनिवह निधने कलयसि करवालम्।"

साहबने पूछा—"क्यों बीबो ! टुमारा घार कहांपर हाय ?"

वैष्णवीनें कहा—"मैं बीबी नहीं, वैष्णवी हूं। मेरा घर पदचिन्ह ग्राममें है।"

साहब—"हुआं एक गार हाय ?"

वैष्णवी—"घर ? घर तो वहां बहुतसे हैं।"

साहब—"गर नहीं, गार, गार—"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

वैष्णवी—"अच्छा साहब ! मैं तुम्हारे मतलबकी बात समझ गयी। तुम गढ़की बात पूछते हो ?"

साहब—"हाँय, हाँय, गार, गार, गार, हाँय ?"

शांति—"गढ़ क्यों नहीं है ? बड़ा भारी किला है।"

साहब—"किटना आदमी हाय ?"

शांति—"वहां कितने आदमी रहते हैं" यह पूछते हो ? चालीस पचास हजार होंगे।"

साहब—"नोन्सेन्स, एक केल्लामें दो-चार हजार रहने सकटा है। हुआंपर आबी हाय, इया निकाल गिया ?"

शांति—"अब वे कहां निकलकर जायंगे ?"

साहब "मेलामें। टुम कब आया हुआंसे ?"

शांति—"कल आई हूं साहब !"

साहब—"वह लोग आज निकाल गिया होगा।"

शांति मन-ही-मन सोच रही थी—"साहब ! यदि मैंने तेरे बापका श्राद्ध नहीं कर डाला तो फिर मेरा वैष्णवी बनना ही व्यर्थ है। मैं देखूंगी कि तेरा सिर सियार कितनी देरमें खाते हैं।"

ऊपरसे बोली—"हां, यह तो हो सकता है कि वे आज बाहर हुए हों। मैं क्या जानूं ? मैं गरीब भिखमंगिन ठहरी, गीत गा-गाकर भीख मांगती-फिरती हूं, मुझे इन बातोंका क्या पता ? बकते-बकते तो गला सूख गया। लाओ पैसा दो। ले-देकर चल दूं। और यदि अच्छी रकम इनाममें देना कुबूल करो तो तुम्हें परसों आकर वहांका राई-रत्ती हाल बतला जाऊंगी।

साहबने झट्से एक रुपया निकाल शांतिकी ओर फेंककर कहा—"परसो नहीं बीबी !"

शांतिने कहा—"अरे जा वे मुए ! बीबी क्यों कहता है ? वैष्णवी कह वैष्णवी।"

एडवार्डिस—"परसों नहीं, हमको आज रातको खबार मिलनी चाहिये।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

शांति—"अवे जा अभागे! सिरके नीचे बन्दूक रख, शराब पी, कानमें तेल डाल, सो रह। आज मैं दस कोस जाऊं, दस कोस आऊं और इनको रात तक खबर ला दूं। चल हट, हरामी कहींका।"

साहब—"हरामी किसको बोलटा है?"

शांति—"जो बड़ा वीर, भारी जनैल होता है।"

एड०—"ओह! हम क्लाइवका माफिक भारी जनैल होने सकता है। लेकिन आज हमको खबर मिलना चाहिये। हम टुमको एक साव रुपिया बकसीस देगा।

शांति—"सो दो, चाहे हजार दो, इन टांगोंसे तो बीस कोस चलना दुश्वार है।"

एड०—"घोरापर चारकर जावो।"

शांति—"यदि घोड़े पर ही चढ़ने आता, तो मैं तुम्हारे खीमेमें भीख मांगने आती?"

एड०—"एक आदमी तुमको गोदमें ले जायगा।"

शांति—"तुम मुझे गोदमें बैठाकर ले जायगा; क्या मुझे लज्जा नहीं लगती?"

साहब—"किया मुसकिल? हम तुमको पांच साव रुपिया डेगा।"

शांति—"अच्छा, कौन जायगा? क्या तू ही जायगा?"

यह सुन, साहबने खड़े हुए लिण्डले नामक एक नौजवान सिपाहीको ओर अंगुलीसे इशारा कर कहा—"क्यों लिण्डले! तुम जावोगे?"

लिण्डलेने शांतिका रूप-यौवन देखकर कहा—"बड़ी खुशीसे।"

एक खूब बढ़िया अरबी घोड़ा कसकर तैयार किया गया। लिंडले तैयार होकर चला गया। जब वह शान्तिका हाथ पकड़कर उसे घोड़ेपर चढ़ाने गया, तब शांतिने कहा, "छिः छिः इतने आदमियोंके

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

सामने ? क्या मेरे लाज-शर्म नहीं ? चलो, आगे बढ़ो, इस छावनीके बाहर चलो।"

लिण्डले घोड़े पर सवार हो,धीरे-धीरे घोड़े को बढ़ा ले चला। शांति पीछे चली। इसी तरह आगे-पीछे चलते हुए वे लोग पड़ाव के बाहर हो गये।

शिविरके बाहर आ, सुनसान मैदान देखकर शांति लिण्डलेके पैरपर पर रखकर एक ही उछालमें घोड़े पर चढ़ गयी। लिण्डलेने मुस्कराते हुए कहा, "टुम तो पक्का घुड़सवार हाय।" शान्तिने कहा—"हमलोग ऐसे पक्के घुड़सवार हैं कि तुम लोगोंके साथ घोड़ा चढ़ते हम लोगोंको शर्म मालूम होती है। छिः रिकाबपर पांव रखकर घोड़ा चढ़ना भी कोई घुड़सवारी है ?"

यह सुन लिण्डलेने अपनी हेंकड़ी भरनेके लिये झटपट रिकाबसे पांव निकाल लिये। यह देखतेही शांतिने उस बेवकूफ अंगरेजके बच्चेके गलेमें हाथ डालकर उसे घोड़ेसे नीचे गिरा दिया। शांति अच्छी तरह घोड़े पर आसन जमा,उसे एंड लगाती हुई,तीरकी तरह दौड़ा ले चली। चार वर्षतक सन्तानों के साथ रहकर शांतिने घुड़-सवारी करना अच्छी तरह सीख लिया था। अगर घुड़सवारी नहीं जानती होती तो जीवानन्दके साथ थोड़े ही रह सकती थी ! :लिण्डले का पैर टूट गया। वह जहांका-तहां पड़ा रह गया। शान्ति हवासे बातें करती हुई घोड़ेको दौड़ाती चली गयी।

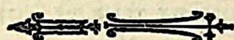
जिस वनमें जीवानंद छिपे हुए थे, वहीं पहुंचकर शांतिने जीवानंदको सब समाचार सुनाया। जीवानंदने कहा—"अच्छा, तो मैं अभी जाकर महेंद्रको होशियार किये देता हूं। तुम मेलेमें जाकर सत्यानंदको खबर दो। बस, घोड़ा दौड़ाये चली जाओ, जिसमें प्रभुको तुरन्त समाचार मिल जाय।"

अब तो दोनों व्यक्ति दो तरफको रवाना हो गये। कहना व्यर्थ है कि शांतिने फिर नवीनानन्दका रूप बना लिया।

———

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

छठा परिच्छेद



एडवार्डिस पक्का अंगरेज था। नाके-नाकेपर उसने अपने आदमी मुकर्रर कर दिये थे। शीघ्र ही उसके पास खबर पहुंची कि उस वैष्णवीने लिण्डलेको घोड़ेसे नीचे गिरा दिया और आप घोड़ा दौड़ाये हुए न जाने किधर भाग गयी। सुनते ही वह बोल उठा—अरे वह तो पूरी शैतानकी खाला निकली! अभी खीमे उठाओ।"

अब तो चारों तरफ डेरे तम्बुओंके खूंटोंपर हथौड़ेकी चोट पड़ने लगी। मेघ-रचित अमरावतीकी तरह वह वस्त्र-नगरी बातकी बातमें आंखोंकी ओट हो गयी। सारा सामान गाड़ियोंपर लादा गया। कुछ मनुष्य घोड़ोंपर और कुछ पैदल चल पड़े। हिन्दू, मुसलमान, मदरासी और गोरे सिपाही कन्धेपर बन्दूक रखे, जूते मचमचाते हुए कूच करने लगे। तोप खींचनेवाली गाड़ियां घर घराती हुई जाने लगीं।

इधर महेन्द्र सन्तान-सेना लिये हुए धीरे-धीरे मेलेकी तरफ बढ़े आ रहे थे। उसी दिन तीसरे पहर उन्होंने दिन ढलते देख, एक जगह डेरा डालनेका विचार किया। उस समय उन्होंने डेरा डालना ही उचित समझा। वैष्णवोंके पास डेरे-तम्बू तो होते नहीं। पेड़ोंके नीचे टाट या कथरी बिछाकर सो रहते हैं। कभी थोड़ासा हरिचरणामृत पीकर ही रात बिता देते हैं। यदि थोड़ी-बहुत क्षुधा बाकी रहती है तो वह स्वप्नमें वैष्णवीके अधरामृत पान करनेसे ही मिट जाती है। पास ही एक जगह ठहरनेयोग्य स्थान था। एक बड़ा भारी बागीचा था, जिसमें आम, कटहल, बबूल और इमलीके बहुतसे पेड़ लगे हुए थे। महेन्द्रने आज्ञा दी—"यहीं डेरा डालो।" उसके पास ही एक टीला था, जो बड़ा ऊबड़-खाबड़ था। महेन्द्रने

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

एक बार सोचा कि उसी टीलेपर डेरा डाला जाय। इसीसे उन्होंने उस जगहको देख आनेका विचार किया।

यही विचारकर वे घोड़ेपर सवार हो, धीरे-धीरे उस टीलेपर चढ़ने लगे। वे कुछ ही दूर गये होंगे कि एक युवा वैष्णव सेनाके बीचमें आकर बोला—"चलो, चलो, टीलेपर चढ़ चलो।" आसपासके लोग अचरजमें आकर पूछ बैठे—"क्यों, क्यों, मामला क्या है ?"

वह योद्धा एक मिट्टीके ढेरपर खड़ा होकर बोला—"चलो, इस चांदनी रातमें उस पर्वत-शिखरपर चढ़कर नूतन वसन्तके नूतन पुष्पोंकी सुगन्धका आनन्द लेते हुए आज हम लोग शत्रुओंसे युद्ध करें।" सन्तानोंने देखा कि ये तो सेनापति जीवानंद हैं, तब 'हरे मुरारे'का उच्च निनाद करते हुए सभी संतानगण, भालेको जमीनमें टेककर उसीसे अड़कर खड़े हो रहे और तदनंतर जीवानंदके पीछे-पीछे बड़ी तेजीके साथ उस टीलेपर चढ़ने लगे। एकने सजा-सजाया घोड़ा लाकर जीवानंदको दिया। दूर-ही-से यह सब हाल देखकर महेंद्र भौंचकसे हो रहे। उनकी समझमें न आया कि ये लोग बिना बुलाये क्यों चले आ रहे हैं ?

यही सोच, महेंद्रने घोड़ेका रुख फेर दिया और चाबुककी मारसे घोड़ेकी पीठका खून निकालते हुये पर्वतसे नीचे उतरने लगे। संतान-सेनाके आगे-आगे चलनेवाले जीवानंदको देखकर महेंद्रने पूछा- "आज यह कैसा आनंद है ?"

जीवानंदने हंसकर कहा—"आज तो बड़ा ही आनन्द है। टीलेके उसी पार एडवार्डिस-साहब हैं। जो पहले ऊपर चढ़ जायगा उसीकी जीत होगी।"

यह कह, जीवानंदने संतान-सेनाकी ओर फिरकर कहा,—"तुम लोग मुझे पहचानते हो या नहीं ? मैं हूं जीवानंद गोस्वामी। मैंने हजारोंके प्राण ले डाले हैं।"

घोर कोलाहलसे कानन और प्रांतरको प्रतिध्वनित करते हुए

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

सब-के-सब एक साथ कह उठे—"हां, हम लोग आपको पहचानते हैं, आपी ही जवानंद गोस्वामी हैं।"

जीवा०—"बोलो, हरे मुरारे।"

वह कानन प्रांतर एक बार सहस्त्र-सहस्त्र कण्ठोंकी ध्वनिसे गूञ्ज उठा। सब-के-सब एक साथ "हरे मुरारे!" कह उठे।

जीवा०—"टीलेके उसी पार शत्रु मौजूद हैं। आज ही इस स्तूप-शिखरपर खड़े होकर हम लोग इस नीलाम्बरी यामिनीके रहते-रहते युद्ध करेंगे। जल्दी आओ; जो पहले शिखरपर चढ़ेगा, वही जीतेगा। बोलो! वंदेमातरम्।"

इसके बाद ही काननप्रांतर प्रतिध्वनित करता हुआ 'वंदेमातरम्' का गाना गूञ्ज उठा। धीरे-धीरे संतान-सेना पर्वत शिखरपर चढ़ने लगी। पर उन लोगोंने एकाएक सभीत होकर देखा कि महेंद्रसिंह बड़ी जल्दी-जल्दी नीचे उतरते हुए तुरही बजा रहे हैं। देखते-ही-देखते टीले के शिखर-प्रदेशमें तोपें लिये हुये अंगरेजोंकी गोलंदाज पलटन आ पहुंची। ऐसा मालूम होने लगा, मानों वह नीले आसमानपर चढ़ी जा रही है। वैष्णवी सेना ऊंचे स्वरसे गा उठी—

"तुम्हीं विद्या, तुम्हीं भक्ति,
तुमही हो मां, सारी शक्ति।
त्वं हि प्राणाः शरीरे!"

पर अङ्गरेजोंकी तोपोंकी अररधायंमें वह गीतध्वनि मानों डूब गयी। सैकड़ों सन्तान हताहत हो, हथियार-बन्दूक लिये जमीनपर ढेर हो गये। फिर अरर-धायंकी आवाज दधीचिकी हड्डियोंको मात करती; समुद्रकी तरङ्गोंको तुच्छ करती, इन्द्रके वज्रोंकी याद दिलाने लगी। जैसे किसानके हंसियेके सामने पके हुए धानके पौधोंके ढेर लग जाते हैं, वैसे ही सन्तान-सेना खण्ड-खण्ड होकर धराशायी होने लगी। जीवानन्द और महेंद्रके सारे यत्न व्यर्थ होने लगे। पहाड़से नीचे गिरनेवाले पत्थरके ढोकोंकी तरह सन्तान-सेना टीलेसे नीचे उतरने लगी। कौन किधर भागा जा रहा है, कोई ठिकाना नहीं।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

इसी समय सबका एक ही साथ संहार करनेके लिये "हुर्रे, हुर्रे"का हल्ला मचाती हुई गोरी पलटन नीचे उतर पड़ी। पर्वतसे निकली हुई विशाल नदीके झरनेकी तरह न रुकनेवाली अजेय वृटिश सेना बड़े झपाटेके साथ संगीन ऊपर उठाये, उस भागती हुई सन्तान-सेनाका पीछा करने लगी। जीवानन्द सिर्फ एक बार महेंद्रसे मिल सके—बोले "आओ, हम लोग यहीं प्राण दे दें।"

महेंद्रने कहा—"मरनेसे ही यदि युद्धमें जय मिलती होती तो मैं जरूर प्राण दे देता; पर व्यर्थ प्राण गंवाना तो वीरोंका काम नहीं है।"

जीवा०—"अच्छा, मैं वृथा ही प्राण दूंगा। लड़ाईमें ही मरूंगा।"

तब पीछे मुड़कर जीवानन्दने बड़े जोरसे ललकार कर कहा—"कौन हरिनाम लेते हुए मरना चाहता है? जो चाहता हो, वह मेरा साथ दे।"

बहुतेरे आगे बढ़ आये। जीवानन्दने कहा—"ऐसे नहीं, ईश्वरको साक्षीकर शपथ करो कि देहमें प्राण रहते पीछे पैर न देंगे।"

जो आगे बढ़े थे, वे पीछे हट गये। जीवानन्दने कहा—"कोई नहीं आता? अच्छा तो मैं अकेलाही चलता हूं।"

जीवानन्दने घोड़ेपर सवार हो, बहुत दूर पीछेकी ओर खड़े महेन्द्रको पुकार कर कहा—"भाई नवीनानन्दसे कहना कि मैं तो अब सदाके लिये संसारसे विदा होता हूं। उनसे परलोकमें ही मिलना होगा।

यह कह, वह वीर पुरुष गोलियोंकी बौछारकी कुछ भी परवाह न कर घोड़ेको आगे बढ़ा और बांये हाथमें भाला, दाहिनेमें बन्दूक लिये, मुंहमें 'हरे मुरारे' कहते हुए आगे बढ़ा। युद्धकी कोई सम्भावना नहीं—उतने बड़े साहसका कोई फल नहीं—तो भी 'हरे मुरारे' 'हरे मुरारे' कहते हुए जीवानन्द शत्रुओंके व्यूहमें घुस पड़े!

महेन्द्रने भागते हुए सन्तानोंको पुकारकर कहा—"देखो, एक

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

वार तुम लोगोंको लौटकर जीवानन्द गुसाईंको देखना चाहिये। तुम लोगाके पहुंच जानेसे वह प्राण न देंगे।" लौटकर कितने ही सन्तानोंने जीवानन्दकी अमानुषो कीर्त्ति देखी। पहले तो वे बड़े ही विस्मित हुए। इसके बाद कह उठे—"क्या जीवानन्द ही मरना जानता है ? हम लोग नहीं जानते ? चलो, हम सब ही जीवानन्दके साथ-साथ वैकुण्ठको चले चलें।"

यह बात सुन, कितने ही सन्तान आगे बढ़े। उनकी देखादेखी और भी कुछ लोग आगे आये। उन्हें आगे बढ़ते देख, कुछ और लोग आगे बढ़ते नजर आये। बड़ा शोर-गुल मच गया, उस समय तक जीवानन्द शत्रुके व्यूहमें घुस चुके थे। सन्तान-सेना फिर उन्हें न देख सकी।

इधर समस्त रणक्षेत्रके सन्तानोंने देखा कि फिर बहुतसे सन्तान लौटे आ रहे हैं। सबने सोचा कि शायद सन्तानोंकी जीत हो गयी उन्होंने शत्रुको मार भगाया। यह देख, सारी सन्तान सेना 'मार-मार'की आवाज करती हुई अंगरेजी फौजका पीछा करने लगी।

इधर अंगरेजी सेनामें भी बड़ा भारी गोलमाल मचा हुआ था। सिपाहियोंने युद्धकी चिंता छोड़, भागना शुरु कर दिया था और गोरे संगीन उठाये अपने अपने डेरोंकी ओर दौड़े चले जा रहे थे। इधर-उधर नजर दौड़ाकर महेंद्रने देखा कि टीलेके ऊपर बहुत सी संतान-सेना दिखाई दे रही है। उन्होंने और भी देखा कि वे नीचे उतर कर अंगरेजी फौजपर बड़ी बहादुरीके साथ हमला कर रहे हैं। उस समय उन्होंने संतानोंको पुकार कर कहा—"सन्तानगण! देखो शिखरपर प्रभु सत्यानंद गोस्वामीकी ध्वजा फहराती हुई दिखाई दे रही है। आज स्वयं मुरारि; मधुकैटभारि, कंशकेशि नाशकारी, रणमें अवतीर्ण हुए हैं —आज लाखों सन्तान उस टीलेपर जमा हैं। बोलो —हरे मुरारे! हरे मुरारे! मुसलमानोंको जहां पाओ, मार गिराओ। आज एक लाख सन्तान टीलेपर आकर जमा हैं।"

उस समय 'हरे मुरारे' की भीषण ध्वनिसे सारा कानन प्रांतर

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

मथित होने लगा। सभी संतान 'मा भैः मा भैः,का रव करते, ललित-तालपर अस्त्रोंको झनकारते हुए सब जीवोंको विमोहित करने लगे। शाही पल्टन पत्थरसे टकराई हुई निर्झरिणीकी तरह ठोकर खाकर भौंचकसी हो रही, डर गयी और तितर-बितर होने लगी। इसी समय पच्चीस संतानोंकी सेना लिये हुए सत्यानन्द ब्रह्मचारी शिखरसे समुद्र पातकी तरह उनके ऊपर आ पड़े। बड़ी घनघोर लड़ाई हुई।

जैसे दो बड़े-बड़े पत्थरोंके बीच पड़कर छोटी-सी मक्खी पिस जाती है, वैसे ही दोनों संतान-सेनाओंके बीच पड़कर राजकीय सेना मसल डाली गयी।

एक भी प्राणी जीता न बचा, जो वारन हेस्टिंगजके पास संवाद लेकर जाय।

सातवां परिच्छेद

आज पूनो है। वह भीषण रणक्षेत्र इस समय सुनसान हो रहा है। वह घोड़ोंकी उछल-कूद, बंदूकोंकी'कड़कड़ाहट, तोपोंकी गड़-गड़ाहट न रही जो नीचेसे ऊपरतक धुंआ-ही-धूंआ नजर आता था, वह कैफियत जारी रही। इस समय न तो कोई 'हुर्रे' कहता है, न हरिध्वनि कर रहा है। केवल स्यार कुत्ते और गीध शोर मचाए हुए हैं। इससे भी भीषण वह घायलोंका रह रहकर कराहना है। किसीका हाथ कट गया है, किसीका सिर कट गया है, किसीका पैर ही टूट गया है। कोई बाप-बाप चिल्ला रहा है, कोई पानी मांग रहा है, कोई मौतकी घड़ियां गिन रहा है। बंगाली, हिंदुस्तानी अङ्गरेज मुसलमान सब साथही पड़े हुए हैं। जिंदों और मुर्दोंकी आदमियों और घोड़ोंकी आपसमें खूब रेलापेली मची हुई है। उस माघकी पूर्णिमाकी उजियाली रातमें वह रणभूमि बड़ी

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

भयङ्कर मालूम पड़ रही थी। किसीको उधर जानेकी हिम्मत नहीं पड़ती थी

औरोंकी भलेही हिम्मत न पड़ती हो; पर आधी रातके समय एक स्त्री उस अगम्य रणक्षेत्रमें आकर इधर-उधर घूम रही थी। हाथ में एक मसाल लिये वह उन मुर्दोंके ढेरमें न जाने किसे ढ़ढ़ रही थी। वह प्रत्येक शवके पास पहुंचकर मशालकी रोशनीसे चेहरा देखकर आगे बढ़ जाती थी। वह जहां कहीं किसी लाशको घोड़ेके नीचे पड़ी पाती, वहीं मशालको नीचे रखकर घोड़ेकी लाशको दोनों हाथोंसे हटाती और उस लाशको देखने लगती। देखने पर जब उसे यह मालूम हो जाता कि यह लाश तो उसकी नहीं है, जिसे मैं ढूढ़ रही हूं, तब वह वहांसे चल देती थी। इस तरह घूमती-फिरती हुई वह सारा मैदान ढूंढ़ आयी पर जिसे वह खोजती थी, उसे उसने कहीं नहीं पाया। तब लाचार हो, मसाल फेंक, उस मुर्दों के ढेरसे भरे और खूनसे रंगे हुए युद्ध-क्षेत्रमें लोट लोटकर राने लगी। वह थी शांति। वह जीवानन्दकी लाश ढूंढ़ रही थी।

शांति जमीनमें पड़ी लोट लोटकर रोने लगी। इसी समय एक अत्यन्त मधुर और करुणा भरी ध्वनि उसके कानमें पड़ी। उसने सुना, मानों कोई कह रहा है—"बेटी रोओ मत।" शांतिने आंखें उठाकर चन्द्रमाके प्रकाशमें देखा कि सामनेही एक अपूर्व दर्शनीय जटाजूटधारी महापुरुष खड़े हैं। उनका डीलडौल बड़ा लम्बा-चौड़ा है।

शांति उठकर खड़ी हो गयी। आने वाले महात्माने कहा—"देखो बेटी! रोओ मत। तुम मेरे साथ साथ आओ। मैं जीवानन्दकी लाश ढूंढ़ लाता हूं।

यह कह, वे महापुरुष शांतिको रणक्षेत्रके बीचोंबीच ले गये। वहीं एक-पर-एक असंख्य लाशोंके ढेर लगे हुए थे। शांति उन्हें हटा नहीं सकती थी। उन्हीं महा बलवान पुरुषने एक एक करके उन लाशोंको हटाते हुए एक लाश बाहर निकाली। शांति झट पहचान

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

गयी कि यह लाश जीवानन्दकी है। उनके सारे शरीरमें घाव लगे हुए थे, जिनसे सर्वाङ्ग लहूमें लथपथ हो रहा था। शांति साधारण स्त्रियोंकी तरह फूट-फूटकर रोने लगी।

महात्माने फिर कहा—"रोओ मत! जीवानन्द मरा नहीं है। तुम चित्त स्थिर कर जरा इस लाशकी परीक्षा करके देखो। पहले नाड़ी देखो।"

शान्तिने उस लाशकी नाड़ी पकड़कर देखी। नाड़ीमें—एकदम गति नहीं थी। उन्हीं महापुरुषने कहा—"छातीपर हाथ रखकर देखो।"

शान्तिने कलेजेपर हाथ रखकर देखा कि धड़कन एकदम नहीं है। सारी देह ठण्ढी हो रही है।

उस पुरुषने फिर कहा—"नाकके पास हाथ ले जाकर देखो, सांस चलती है या नहीं?"

शान्तिने देखा, सांस बिलकुल बंद है।

उस पुरुषने कहा—"अच्छा, अबकी बार मुंहमें उंगली डालकर देखो, कुछ गरमी मालूम होती है या नहीं?"

शान्तिने उंगली मुंहमें डालकर देखा और कहा—"मेरी समझमें तो कुछ भी नहीं आता।" शांतिके मनमें आशा पैदा हो रही थी।

महापुरुषने बायें हाथसे जीवानन्दकी लाश छुई। बोले—"तुम बहुत डर गयी हो, हिम्मत हार गयी हो, इसीसे तुम्हें नहीं मालूम पड़ता। एक बार फिर देखो। मुझे तो अबतक शरीरमें कुछ गरमी मालूम पड़ती है।"

शान्तिने अबकी फिर नाड़ी देखी, कुछ-कुछ चलती जान पड़ी। अचरजमें आकर उसने कलेजेपर भी हाथ रखकर देखा—वह भी कुछ-कुछ धड़कता हुआ मालूम पड़ा। नाकके पास उंगली ले जाते ही सांस चलनेकी आहट मिली। मुखके भीतर भी गरमी मालूम पड़ी।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

शान्तिने पूछा—"क्या अबतक इस शरीरमें प्राण थे ? अथवा आपने नयी जान डाल दी है ?"

वे बोले—"बेटी ! कहीं ऐसा भी होता है ! क्या तुम उसे ढोकर तालाबके पास ले चल सकती हो ? मैं चिकित्सक हूं। वहीं उसका चिकित्सा करूंगा।"

शान्तिने झटपट जीवानन्दको गोदमें उठा लिया और तालावकी ओर ले चली। महापुरुषने कहा—"तुम उसे तालाबके पास ले जाकर जहां जहां खून लगा है सब अच्छी तरहसे धो डालो।"

शान्तिने जीवानंदको तालाबके पास ले जाकर खूनके सब दाग धोये। तबतक वे महापुरुष जंगली लता-पत्रोंका प्रलेप बनाये हुए आ पहुंचे। उन्होंने तमाम जख्मोंके ऊपर वही लेप लगा दिया और बार बार जीवानन्दके शरीरपर हाथ फेरना शुरू किया। थोड़ी ही देरमें जीवानंद चटपट उठ बैठे। उठते ही उन्होंने शांतिकी ओर देखते हुए कहा—"युद्धमें किसकी जय हुई !"

शांतिने कहा—"तुम्हारी। इन महात्माको प्रणाम करो।" उसी क्षण सबने देखा, वहां तो किसीका पता भी नहीं है। अब वे प्रणाम किसको करें ?

इधर पास ही जीतकी खुशीमें फूली हुई सन्तान-सेना बड़ा उधम उत्पात मचाये हुए थी। पर शांति और जीवानन्द वहांसे हिले तक नहीं, चुपचाप उस पूर्णिमाकी चांदनीमें चमकती हुई पुष्करिणीके घाटपर बैठे रहे। औषधके प्रभावसे जीवानन्दका शरीर तुरत भला चंगा हो गया। उन्होंने कहा—शांति ! उस वैद्यकी औषधिका कैसा चमत्कार है। मेरे शरीरमें इस समय न तो कहीं कुछ पीड़ा है, न किसी तरहकी थकावट मालूम होती है। अब चलो, कहां चलोगी वह देखो सन्तान-सेनाके जय जयकारका शब्द सुनायी दे रहा है।

शांतिने कहा—अब वहां नहीं—माताका कार्योद्धार हो चुका। देश सन्तानोंका हो गया। हम लोग कुछ राज्य हिस्सा बांटना नहीं चाहते—अब वहां किस लि चलें

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

जीवा०—"जो राज्य औरोंसे छीना है उसको अपने बाहुबलसे रक्षा करेंगे।

शांति—"रक्षा करनेके लिये महेंद्र काफी है। स्वयं महाप्रभु सत्यानन्द मौजूद हैं। तुमने सन्तानधर्मके लिहाजेसे अपने पापका प्रायश्चित्त करनेके लिये देह-त्याग कर दिया था। अब फिरसे पाये हुए इस शरीरपर सन्तानोंका कोई दावा नहीं है। सन्तानोंके लेखे तो हम मर चुके। अब हमें देखने पर सन्तानगण कह सकते हैं कि तुम युद्धके प्रथम प्रायश्चित करनेके डरसे छिप गये थे और अब जीत होनेकी खबर पाकर राज्यमें हिस्सा बांटने आये हो।"

जीवा०—"यह क्या शांति? लोग बुराई करेंगे, इसी डरसे क्या मैं अपना काम छोड़ दूंगा? मेरा काम माताकी सेवा करना है। कोई कुछ भी क्यों न कहे, पर मैं मातृसेवा न छोड़ूंगा।"

शांति—"अब तुम ऐसा करनेके अधिकारी नहीं रहे, क्योंकि तुमने मातृसेवाके लिये अपनी जान दे दी थी। यदि फिर माताकी सेवा करने पाये, तो प्रायश्चित्त ही कौन सा हुआ। मातृसेवासे वंचित होना ही इस प्रायश्चित्तका मुख्य अंग है नहीं तो केवल जान दे डालनाही क्या कोई बड़ा भारी काम है?"

जीवा०—"शान्ति! असली तत्वतक तुम्हीं पहुँचती हो। मैं अपने प्रायश्चित्तको अधूरा न रखूंगा। मेरा सुख सन्तानधर्मका पालन करना ही है, उसी सुखसे मैं अपनेको वंचित करूंगा। पर कहां जाऊं! मातृसेवा त्यागकर घर जा सुख भोगना तो अपनेसे नहीं बन पड़ेगा।"

शान्ति—"मैं भी तो घर जानेकी बात नहीं कह रही हूं। हम लोग अब गृहस्थ नहीं रहे। दोनों जने इसी तरह सन्यासी रहेंगे। सदा ब्रह्मचर्यका पालन करते रहेंगे। चलो हम लोग इधर-उधर तीर्थों में घूमफिरकर दिन बितायें।"

जीवा०—"उसके बाद?"

शान्ति—"उसके बाद हिमालयपर कुटी बना दोनों जने देवता

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

की आराधना करेंगे और यही वर मांगेंगे कि हमारी माताका मंगल हो।"

इसके बाद दोनों जने हाथमें हाथ मिलाये उस आधीरातके समय, उस निखरी हुई चांदनीमें न जाने किधर गायब हो गये।

हाय, मां! क्या वे फिर न आयेंगे! क्या तू जीवानन्द सा पुत्र और शांति-सी कन्या फिर नहीं उत्पन्न करेगी!

आठवां परिच्छेद

सत्यानन्द महाराज बिना किसीसे कुछ कहे-सुने चुपचाप रण-क्षेत्रसे आनन्दमठमें चले आये। वे वहां गम्भीर रात्रिमें विष्णु-मण्डपमें बैठे ध्यानमें डूबे हुए थे। इसी समय वही चिकित्सक वहां आ पहुंचे। देखकर सत्यानन्द उठ खड़े हुए और उन्होंने उन्हें प्रणाम किया।

चिकित्सकने कहा—"सत्यानन्द! आज माघकी पूर्णिमा है।"

सत्या०—"चलिये, मैं तैयार हूं; पर महात्माजी! कृपाकर मेरा एक सन्देह दूर कर दीजिए। इधर ज्योंही युद्धमें जय हुई, सनातनधर्म निष्कण्टक हुआ, त्यों ही मुझे लौट चलनेको आज्ञा क्यों दी जा रही है?"

आनेवालेने कहा—"तुम्हारा कार्य सिद्ध हो गया। मुसलमानों का राज्य चौपट हो गया। अब तुम्हारा यहां कोई काम नहीं है। व्यर्थमें प्राणियोंकी हत्या करनेसे क्या काम है?"

सत्या०—"मुसलमानी राज्य चौपट हुआ सही; पर हिन्दुओंका राज्य तो नहीं स्थापित हुआ? इस समय कलकत्तेमें अंगरेजोंका जोर बढ़ता जा रहा है।"

महात्मा—"अभी हिन्दू-राज्यकी स्थापना नहीं हो सकती तुम्हारे यहां रहनेसे व्यर्थ ही नरहत्या होगी, इसलिये चलो।"

CC-0. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

यह सुनकर सत्यानन्दको बड़ी मर्मवेदना हुई। वे बोले—"प्रभो! यदि हिन्दुओंका राज्य न होगा, तो फिर किसका होगा? क्या फिर मुसलमान ही राजा होंगे?"

महात्मा—"नहीं, अब अङ्गरेजोंका ही राज्य स्थापित होगा।"

सत्यानन्दकी दोनों आंखोंसे आंसू बहने लगे। वे ऊपर रखी हुई मातृ स्वरूपिणी मातृभूमिकी प्रतिमाकी ओर फिरकर, हाथ जोड़, रुंधे हुए कण्ठसे कहने लगे—"हाय! मां! मुझसे तुम्हारा उद्धार करते न बन पड़ा। तुम फिर म्लेछोंके ही हाथमें जा पड़ोगी। सन्तानोंका अपराध मत समझना। माता! आज रणक्षेत्रमें ही मेरी मृत्यु क्यों न हो गयी?"

महात्माने कहा—"सत्यानन्द! कातर मत हो। तुमने बुद्धि-भ्रममें पड़कर दस्यु-वृत्तिद्वारा धन संग्रहकर लड़ाई जीती है। पापका फल कभी पवित्र नहीं होता। इसलिये तुम लोगोंसे इस देशका उद्धार न हो सकेगा। और जो कुछ होनेवाला है, वह अच्छा ही है। अंगरेजोंका राज्य हुए बिना सनातनधर्मका पुनरुद्धार नहीं हो सकता। महापुरुष लोग जिस तरह सब बातोंको समझा करते हैं, मैं उसी तरह तुम्हें बतलाता हूं, सुनो। तैंतीस करोड़ देवताओंकी पूजा करना सनातनधर्म नहीं है। वह तो एक निकृष्ट लौकिक धर्म है। इसीके मारे सच्चा सनातनधर्म—जिसे म्लेच्छगण हिन्दूधर्म कहते हैं—लुप्त हो रहा है। हिन्दूधर्म ज्ञानात्मक है, क्रियात्मक नहीं वह ज्ञान दो प्रकारका होता है—बाहरी और भीतरी। भीतरी ज्ञान ही सनातनधर्मका प्रधान अङ्ग है, किन्तु जबतक बाहरी ज्ञान नहीं प्राप्त हो जाता, तबतक भीतरी ज्ञान उत्पन्न होनेकी सम्भावना ही नहीं रहती। बिना स्थूलको जाने, सूक्ष्म नहीं जाना जाता। इस समय इस देशका बाहरी ज्ञान बहुत दिनोंसे लुप्त हो रहा है। इसी लिये सनातनधर्मका भी लोप हो रहा है! सनातनधर्मका पुनरुद्धार करनेके लिये, पहले बाहरी ज्ञानका प्रचार करना आवश्यक है। इस समय इस देशमें वह ज्ञान नहीं है। यह ज्ञान सिखलानेवाले लोग

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

भी नहीं हैं। हम लोग लोकशिक्षामें निरे अधकच्चरे हैं। इसलिये और और देशोंसे यह बाहरी ज्ञान लाना पड़ेगा। अंगरेज इस बाहरी ज्ञानमें बड़े प्रवीण हैं। वे लोकशिक्षामें पूरे पण्डित हैं। इसीसे हमें अंगरेजोंको राजा मानना पड़ेगा। इस देशके लोग अंगरेजी शिक्षाद्वारा बाहरी तत्त्वोंका ज्ञान प्राप्तकर अन्तस्तत्वोंको समझनेके योग्य बनेंगे। उस समय सनातनधर्मका प्रचार करनेमें कोई विघ्नवाधा न रह जायगी। उस समय सच्चा धर्म आप-से-आप जगमगा उठेगा। जबतक ऐसा नहीं होता, जबतक हिन्दू फिरसे ज्ञान-वान, गुणवान और बलवान नहीं हो जाते, तबतक अङ्गरेजोंका राज्य अटल-अचल बना रहेगा। अङ्गरेजोंके राज्यमें प्रजा सुखी होगी, सब लोग बेखटके अपने अपने धर्मको राहपर चलने पायेंगे। अत-एव, हे बुद्धिमान! तुम अङ्गरेजोंके साथ युद्ध करनेसे हाथ खींच लो और मेरे साथ चलो।"

सत्यानन्दने कहा—"महात्मन्! यदि आप लोगोंको अङ्गरेजों-को ही यहांका राजा बनाना था, यदि इस समय अंगरेजी राज्य स्थापित होनेमें ही इस देशकी भलाई थी, तो फिर आपने मुझे इस हिंसापूर्ण युद्ध-कार्यमें क्यों लगा रखा था?"

महात्माने कहा—"अङ्गरेज इस समय बनिये होकर टीके हुए हैं। केवल माल बेचने और टके पैदा करनेमें लगे हुए हैं। राज्य-शासनका झंझट सिरपर लेना नहीं चाहते। अब इस सन्तान विद्रोहके कारण वे लोग मजबूत होकर राज्यशासन अपने हाथमें लेंगे, क्योंकि बिना राज्यशासनका प्रबन्ध ठीक हुए धनसंग्रह नहीं होने पाता। अंगरेजोंका राज्य स्थापित करनेहीके लिये यह सन्तान विद्रोह हुआ है। अब आओ, ज्ञानलाभ करनेपर तुम आपही सब बातें समझ जाओगे।"

सत्यानन्द—"मुझे ज्ञानलाभकी लालसा नहीं। ज्ञानसे मुझे कोई मतलब नहीं है। मैंने जो व्रत ग्रहण किया है, उसीका पालन करूंगा। आशीर्वाद करें कि मेरी मातृभक्ति अचल हो।"

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

महात्मा—"व्रत तो सफल हो गया। तुमने माताका मंगल साधन कर डाला। अंगरेजी राज्य स्थापित करनेमें मदद पहुंचा ही दी। अब युद्ध-विग्रहकी बात छोड़ो। लोगोंको खेतीबारी करने दो, जिससे लोगोंके भाग्यके दरवाजे खुल जायं।"

सत्यानन्दकी आंखोंसे चिनगारियां निकलने लगीं। उन्होंने कहा—"मैं तो शत्रुओंके रुधिरसे सींच-सींचकर माताको शस्य-शालिनी बनाऊंगा।"

महात्मा—"शत्रु कौन हैं? शत्रु अब रहे कहां? अंगरेज मित्र राजा है। अंगरेजोंके साथ युद्ध करने योग्य शक्ति भी नहीं है।"

सत्यानन्द—"न सही, मैं यहीं, इसी मातृप्रतिमाके सम्मुख प्राण-त्याग करूंगा।"

महापुरुष—"योंही अज्ञानमें पड़कर? चलो, चलकर ज्ञानलाभ करो। हिमालयके शिखरपर मातृमन्दिर है, वहींसे मैं तुम्हें माताकी मूर्त्तिका दर्शन कराऊंगा।"

यह कह, महापुरुषने सत्यानन्दका हाथ पकड़ लिया। अहा! कैसी अपूर्व शोभा थी। उस गम्भीर विष्णुमन्दिरमें, विराट् चतुर्भुजी मूर्त्तिके सामने, धुंधले प्रकाशमें वे दोनों महा प्रतिभापूर्ण पुरुष एक दूसरेका हाथ पकड़े खड़े हैं। किसने किसे पकड़ रखा है। मानों ज्ञानने आकर भक्तिको पकड़ लिया है, धर्मने आकर कर्मका हाथ थाम लिया है, विसर्जनने आकर प्रतिष्ठाको पकड़ रखा है; कल्याणीने शान्तिको आ पकड़ा है। यह सत्यानन्द शान्ति हैं और वह महापुरुष कल्याणी हैं! सत्यानन्द प्रतिष्ठा है; महापुरुष कल्याणी है। विसर्जन आकर प्रतिष्ठाको ले गया।

* इति शुभम् *

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

परिशिष्ट क



संन्यासी-विद्रोहका इतिहास

(ग्लेगके 'स्मरण लेख'में प्रकाशित वारन हेस्टिंगजके पत्रोंसे उद्धृत ।)

वारन हेस्टिंगजने सर जार्ज कोलब्रुकके पास २ री फरवरी १७७३ के पत्रमें निम्नलिखित बातें लिखी थीं :—

"आपको संन्यासियों अर्थात् रमते फकीरोंके उपद्रवका वृत्तान्त मालूम ही होगा । ये लोग हर साल इसी समय हजार दस हजारका दल बांधकर जगन्नाथजीकी यात्रापर जाते हुए; इस प्रांतमें उपद्रव मचाते हैं । कप्तान टामस नामक एक वीर सैनिक अफसर इन लुटेरोंके फेरमें पड़कर मारा गया । उसने थोड़े से देशी सिपाहियोंको लेकर ३००० लुटेरोंका रंगपुरके समीप सामना किया था । टामसके सिपाही बड़ी बहादुरीके साथ लड़े और अपनी योग्यतासे अधिक प्रशंसाके पात्र बने । उत्तरी जिलोंमें इनके उपद्रवोंका मालगुजारीपर बुरा प्रभाव पड़ा है। सिपाहियोंके नूतन संगठनसे, जो कि कोर्ट आफ डाइरेक्टर्सके आदेशानुसार किया गया है और उनपर जिस ढंगसे प्रान्तकी रक्षाका भार अर्पण किया जा रहा है, उससे आशा की जाती है कि भविष्यमें इनके उपद्रवोंसे यहांकी रक्षा भलीभांति हो सकेगी ।"

(ग्लेगके स्मरण लेख, भाग १२८२)

* * *

इसके बाद ९ वीं मार्चको जोशिस डिउप्रके पास हेस्टिंगज-साहबने जो पत्र लिखा था उसमें उन्होंने इस सम्बन्धमें लिखा था :—

"मेरे प्रान्तमें इस वर्ष खासा युद्ध छिड़ गया है। संन्यासि-

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

योंके एक गिरोहने परगना सिपाहियोंके दो दलोंको हरा दिया है और उनके दो सेनानायकोंको मार डाला है। एक तो कप्तान टामस थे जिसे आप जानते होंगे। ब्रिगेड सिपाहियोंके दल इस समय उनका पीछा कर रहे हैं। वे लड़ न सकेंगे, क्योंकि न तो उनके पास डेरे-खीमे हैं, जिससे जगह-ब-जगह पड़ाव डाल सकें, न उनके पास सैनिकोंके योग्य कपड़े-लत्ते हैं, इसलिये उनका भागना निश्चित है। तो भी मुझे आशा है कि वे कुछ कर दिखायेंगे, क्योंकि बीच बीचमें नदियां पड़ती हैं, जिनके पार उतरना संन्यासियोंके लिये मुश्किल हो जायगा। अगर हमारे सैनिक ठिकानेसे उनका पीछा करते चले गये।"

"इन लोगोंका इतिहास बड़ा विचित्र है। ये तिब्बतकी पहाड़ियोंके दक्खिन, काबुलसे चीनतक फैली हुई विस्तृत भूमिमें रहते हैं। प्रायः नंगे रहते हैं और न तो इनकी कोई निश्चित बस्ती है, न घर-द्वार है, न जोरू-बच्चे हैं। ये एक जगहसे दूसरी जगह घूमते रहते हैं और जहां कहीं हट्टे-कट्टे बालक देख पाते हैं, वहींसे उन्हें उड़ा लाते हैं। इसीसे ये लोग हिन्दुस्थानमें सबसे बढ़कर वीर और मुस्तैद मनुष्य हैं। इनमें कितने ही सौदागर भी हैं। ये सब रमते योगी हैं और सब लोग इनका बड़ा सम्मान करते हैं। इसी कारण हमलोगोंको सर्वसाधारणसे न तो इनके बारेमें कुछ पता मालूम होता है; न इन्हें दबानेमें सहायता मिलती है—यद्यपि इसके विषयमें बड़े कड़े-कड़े हुक्मनामे जारी किये गये। ये लोग कभी-कभी इस प्रान्तमें ऐसे घुस पड़ते हैं, मानो आसमानसे टपक पड़े हों। ये बड़े हट्टे-कट्टे साहसी और अतुल उत्साहवाले होते हैं। हिन्दुस्थानके ये 'जिपसी'* अर्थात् संन्यासी ऐसे ही अद्भुत हैं।"

* 'जिपसी' युरोपके कञ्जरोंको कहते हैं, जिनके न तो घर-द्वार होता है, न कहीं जगह। इधर-उधर घूमना और लूटपाटकर खाना ही इनका काम है।—अनुवादक।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

"मैंने परगना सिपाहियोंको हटाकर सीमाके नाके-नाके ब्रिगेड सिपाहियोंके थाने कायम कर दिये हैं जो प्रान्तकी रक्षा करते हैं। हर तीसरे महीने ये बदले जाते हैं इससे आशा है कि आगे चलकर उपद्रव न होने पायेगा, प्रान्त सुरक्षित रहेगा चूंकि हम लोगोंने इनके हाथसे मालगुजारी वसूल करनेका काम छीन लिया है, इसलिये हमारे आदमियोंके अत्याचारोंसे भी लोग बच जायेंगे।"

* * *

फिर ३१ मार्च १७७५ को वारन हेस्टिंग्जने इन लोगोंके बारेमें निम्नपत्र लिखा था:—

"हालमें यहांपर संन्यासी कहलानेवाले कुछ थोड़ेसे उपद्रव-कारियोंके मारे बड़ा हैरान होना पड़ा है। इन लोगोंने बड़े-बड़े दल बांधकर सारे प्रान्तको तबाह कर दिया है। इन लोगोंके उपद्रव और हम लोगोंकी रोकनेकी चेष्टाका हाल आपको हम लोगोंके पत्रों और सलाहोंसे मालूम हो गया होगा। उन्हें देखनेसे आपको मालूम हो जायगा कि गवर्नमेण्टका कोई अपराध नहीं है। इस समय हमारी पांच पलटनें उनका पीछा कर रही हैं। मुझे आशा है कि वे अपनी करनीका पूरा-पूरा फल पा जायंगे, क्योंकि सिवा इस बातके कि वे भागनेमें बड़े तेज हैं, और किसी बातमें वे हमारे आदमियोंसे चढ़े-बढ़े नहीं हैं। इन उपद्रवोंका विस्तृत विवरण आपको रोचक न होगा, क्योंकि उनमें कोई महत्व नहीं है।"

(ग्लेगके स्मरण-लेख भाग १ पृ० २६७)

उसी तारीखमें हेस्टिंग्ज साहबने सर जार्ज कोलब्रुकके नाम निम्नलिखित पत्र लिखा था:—

"पिछले पत्रमें मैंने लिखा था कि जहांतक मालूम पड़ता है, संन्यासियोंने कम्पनीके अधिकारभुक्त प्रदेशोंको खाली कर दिया है। यही खबर मुझे उस समय मिली थी और जैसी अवस्था थी, उससे मुझे यह बात ठीक भी मालूम पड़ी। पर मालूम होता है कि या तो वे ब्रह्मपुत्र-नदको पार न कर सके या अपना इरादा बदल दिया।

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

वे २-२ या ३-३ हजारके दलमें विभक्त होकर एकाएक रंगपुर और दिनाजपुरके भिन्न-भिन्न स्थानोंमें दिखाई दिये। देशवासियोंको कड़ी-कड़ी धमकियां दी गयी हैं कि अगर वे संन्यासियोंके आनेकी सूचना तत्काल न दे दिया करेंगे, तो उनकी बड़ी सख्त सजा की जायेगी। तो भी लोगोंपर इन संन्यासियोंका जादू ऐसा चढ़ा हुआ है कि कोई सूचनातक नहीं देता। अतः जबतक वे बस्तियोंमें घुस नहीं आते हम लोगोंको उनका कुछ पता नहीं लगता। मानों ये लोग इन देशवासियोंकी मूर्खताका दण्ड देनेके लिये आसमानसे उतर आये हैं। हालमें इनका एक दल कप्तान एडवर्डिसके सैन्य दलसे भिड़ गया था। इस लड़ाईमें कप्तान एडवार्डिस एक नालेको पार करते समय मारे गये और उनके सिपाही भाग खड़े हुए। इस दलमें हमारे सबसे रद्दी परगना-सिपाही भरे हुए थे, जिन्होंने बुरी तरह पीठ दिखाई। इस जीतसे संन्यासियोंकी हिम्मत बढ़ गयी और उन्होंने उक्त जिलोंमें हर जगह ऊधम मचाना शुरू कर दिया। कप्तान स्टुअर्टने १९वीं नम्बर पलटनके साथ उनका पीछा किया, पर कोई नतीजा न निकला। जबतक वे एक जगह पहुंचते संन्यासी उसे ध्वंस कर चंपत हो जाते थे। मैंने बरहमपुरसे एक दूसरी पलटन कप्तान स्टुअर्टसे मिलकर काम करनेके लिये भेज दी। उन्हें स्वतन्त्र युद्ध करनेकी पूरी स्वतंत्रता दे दी थी ताकि उन्हें मुकाबिला करनेका अच्छा अवसर मिले। साथ ही मैंने दानापुरकी एक पलटनको तिहुत होते हुए पूर्नियांकी उत्तरी सीमा होकर उसी राहसे होकर जानेका हुक्म दे दिया है जिधरसे संन्यासी बहुधा जाया करते हैं ताकि यदि वे उस राहसे गये तो घेर लिये जायंगे। इस पलटनको यह भी हुक्म दिया गया था कि अवसर आ जानेपर संन्यासियोंको दबाकर वे लोग बिहारकी तरफ बढ़ें और यहां कप्तान जोन्ससे मिलकर शांति-स्थापनाकी चेष्टा करें।

"संन्यासियोंके बहुतसे दल पूर्निया जिलेमें घुस पड़े और गांवोंमें आग लगाकर लोगोंका मालमता लूटने और बरबाद करने लगे। तब

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

वहांके कलक्टरने कप्तान ब्रुकके पास समाचार भेजा और सहायता मांगी। कप्तान ब्रुक हालहीमें राजमहलके पास पानीती आये थे। उनके पास एक ताजादम पैदल सेना थी। कप्तानने खबर पाते ही नदी पारकर संन्यासियोंके विरुद्ध काररवाई करनी शुरू की। उस समय संन्यासी कोसानदी पारकर भाग जानेकी चेष्टा कर रहे थे। इसी समय कप्तानके साथ उनके एक दलकी मुठभेड़ हो गयी, पर बिना किसी क्षतिके वे सब नदी पार कर गये जिससे ये लोग उनका कुछ भी बिगाड़ न सके। यह साफ मालम पड़ता है कि संन्यासी यथाशीघ्र कम्पनीके अधिकार-भुक्त प्रदेशसे भाग जाना चाहते हैं। पर मुझे विश्वास है कि उनके कुछ गिरोहोंके साथ हमारी किसी न किसी सेनाका मुकाबिला अवश्य ही हो जायगा और वह उनकी उद्दण्डताका उन्हें पूरा पूरा दण्ड दे सकेगी।

यद्यपि यह असम्भव है, तथापि इन संन्यासियोंके उपद्रवोंके कारण मालगुजारीमें कमी पड़नेकी सम्भावना मालूम होती है; क्योंकि कहींके लोग तो सचमुच इनसे सताये गये हैं और कहींके लोग झूठमूठ यह बहाना निकालेंगे कि वे लोग भी संन्यासियों द्वारा लूटे-खसोटे गये हैं। इसी विचारसे बोर्ड आफ़ रेवेन्यूने यह प्रस्ताव किया है कि मालगुजारीमें कमी पड़नेका कोई कारण नहीं सुना जायगा और त्रुटि करनेवालोंको दण्ड दिया जायगा। इस तरहसे वे लोग कम्पनीको हानिसे बचानेकी पूरी चेष्टा कर रहे हैं। जहां-तहां सीमापर पलटनें रख दी जायंगी, ताकि फिर संन्यासी न घुसने पायें या और तरहके लुटेरे डाकुओंका उपद्रव न होने पाये। यह सावधानी गत बारके संन्यासी विद्रोहको देखकर ही काममें लायी गयी है। जहांतक मेरा ख्याल है, थोड़ीसी ही सेनासे यह काम हो जायगा और मुझे आशा है कि आगेसे संन्यासी भी यहां उपद्रव न करने पायेंगे।"

* * * *

२० मार्च १७७१को हेस्टिंगजने लारेन्सके नाम निम्नलिखित पत्र लिखा थाः—

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

"गत वर्ष संन्यासियोंने जैसा उपद्रव किया था, वैसा ही इस वर्षके प्रारम्भमें भी हुआ। पर चूंकि हम लोग पहले हीसे उनका सामना करनेके लिये तैयार थे और उन्होंने पहले ही धक्केमें खूब मुंहकी खायी, इसीसे हम लोगोंने उन्हें एकदम देशसे बाहर कर दिया है। हम लोगोंने कुछ घुड़सवार उनके पीछे लगा दिये हैं, जिससे वे बहुत डर गये हैं, क्योंकि पैदल सिपाहियांसे तो वे दौड़नेमें जीत जाते थे पर घोड़ोंकी बराबरी नहीं कर सकते। मेरा इरादा उन्हें उत्तर पूर्व प्रदेशसे भगा देनेका है, जहां उन लोगोंने अड्डा कायम कर रखा है। मैं उन ज़मींदारोंकी भी पूरी मरम्मत कर देना चाहता हूं, जो उन्हें शरण और सहायता दे रहे हैं।"

परिशिष्ट ख

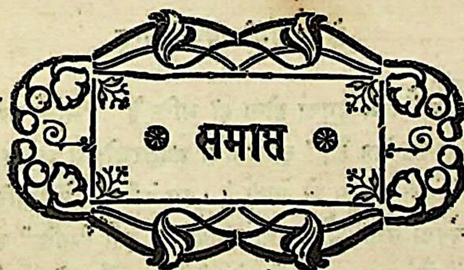
संन्यासी-विद्रोहका इतिहास

(हण्टर रचित "बंगालके ग्रामोंका इतिहास"से उद्धृत)

"कौंसिलने १७७३में लिखा था—'डाकुओंका एक दल संन्यासी या फ़क़ीरका वेश बनाये, इन मुल्कोंको तबाह करता फिरता है। ये तीर्थयात्रीके रूपमें रहते हैं और बंगालके प्रधान भागको लूटते-खसोटते हैं। ये जहां जाते वहां भीख मांगकर खाते, चोरी करते, डाका डालते या जैसा मौका देखते, वैसा कर बैठते हैं। अकालके बाद कई वर्षों तक इनके दलमें वे किसान भी मिलते चले गये, जिन्हें न तो बीजके लिये अन्न मिल सका, न जमीन जोतनेके लिये हल-फावड़े मिले। १७७२के जाड़ोंमें इन लोगोंका प्रायः ५० हजारका दल दक्षिण बंगालके हरे-भरे प्रदेशोंमें लूट-पाट मचाता और घरोंको जलाता रहा। कलक्टरोंने सेनासे काम लिया; कुछ सफलता भी मिली, पर अन्तमें हमारे सिपाहियोंकी बुरी तरह हार हुई और उनका अध्यक्ष कप्तान टामस समस्त सैनिकोंके साथ खेत रहा। जाड़ोंके अन्तमें कौंसिलने

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

कोर्ट आफ डाइरेक्टर्सके पास लिखा कि एक चतुर सेनाध्यक्षके अधीन भेजी हुई सेनाने सफलताके साथ उनका मुकाबिला किया है। पर एक ही महीनेके बाद यह मालूम हुआ कि यह सूचना भी ठीक नहीं थी। सन् १७७२की १३वीं मार्चको वारन हेस्टिंग्जको यह बात स्वीकार करनी पड़ी कि कप्तान टामसके बाद जो सेनाध्यक्ष भेजा गया था उसकी भी वही गति हुई और यद्यपि जमीन्दारोंके दिये हुये जवानोंके साथ-साथ चार पल्टनें उनके मुकाबिले खड़ी थीं तथापि संन्यासियोंकी कुछ हानि नहीं हुई। मालगुजारीकी वसूली न हो सकी। देशवासी भी उन्हीं डाकुओंके तरफ़दार हो रहे और गांवों-परसे हुकूमत उठ-सी गयी। इस तरहकी घटनायें यहां हर साल होती रहती हैं और इसे ही लोग बंगालका शान्तिमय जीवन बतलाते हैं!"



SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
A SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY
Jangamawadi Math, Varanasi
Acc. No. 2658

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

संसारका

३—संसारका सर्वश्रेष्ठ पुरुष

संग्रहकर्त्ता तथा अनुवादक, "साहित्य" सम्पादक पण्डित छविनाथ पाण्डेय बी० ए०, एल० एल० बी० । इस पुस्तकमें प्रायः सभी विदेशी समाचारपत्रों और पुरुषोंके मतका संग्रह है जो उन्होंने महात्माजीके बारेमें दिये हैं । इस पुस्तकको पढ़नेसे आपको विदित हो जायगा कि केवल भारतवासी ही नहीं, बल्कि सारा संसार इस बातको स्वीकार करता है कि महात्मा गांधी एक अवतार हैं और महात्मा ईसामसीहसे किसी भी तरह तुलनामें कम नहीं हैं। एक अमरीकन पादरीने तो यहांतक कहा है कि यदि मैं अवतारोंमें विश्वास रखता तो मैं निःसङ्कोच कहता कि "महात्मा गांधी ईसामसीहके दूसरे अवतार हैं" । पुस्तकमें महात्माजीके विविध अवस्थाके अनेक चित्र भी दिये गये हैं । पुस्तक पढ़नेयोग्य है ।

मूल्य १४० पृष्ठकी पुस्तकका केवल ॥/

४—भक्ति

ले० स्वामी विवेकानन्द

"भगवानमें परम प्रेमका होना ही भक्ति है" "भक्ति कर्म, ज्ञान और योगसे भी अधिक श्रेष्ठ है।" उपरोक्त दो अवतरणोंहीसे इस पुस्तककी उपयोगिता और श्रेष्ठता मालूम हो जाती है । इस कलिकालमें "भक्ति" ही परमपदतक पहुंचनेका सरल और साध्य उपाय है । इसी "भक्ति" को स्वामीजीने अपने प्राच्य और पाश्चात्य ज्ञानसे बड़े ही सरल और रोचक ढंगसे लिखा है । इन्हीं लेखों और व्याख्यानोंको पढ़कर अमरीका और युरोपके विद्वानोंका ध्यान भारतके अध्यात्म-विषयकी ओर आकर्षित हुआ और आज पश्चिमीय देशोंमें भी हिन्दू-धर्म और भारतीय वेदान्तकी तरफ लोगोंका ध्यान हुआ है।

११२ पृष्ठकी पुस्तकका दाम केवल ।=)

Jangam..

1910

Acc. No. ....

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

CC-O. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative

बंकिम बाबूके तीन रत्न

शिक्षाप्रद ऐतिहासिक, सरस, हृदयद्रावक

उपन्यास

१ देवी चौधुरानी

इसकी घटना बड़ी मनोरंजक और वर्णन-शैली बड़ी हृदय मोहनी है इसको पढ़ते समय आप दुनियाकी सारी झंझटोंको भूल जावेंगे और जबतक पुस्तक समाप्त न होगी हाथसे न छोड़ेंगे इसके जोड़का उपन्यास शायद ही मिले। सुन्दर चिकने कागजपर छपे २०० पृष्ठकी पुस्तकका दाम केवल ।॥)

२ इंदिरा

इस उपन्यासकी उपयोगिता इसीसे समझ लीजिये कि भारतकी प्रायः सभी भाषाओंमें इसका अनुवाद हो गया है। इस पुस्तकमें सती इन्दिराने अनेकों संकटोंको झेलते हुए भी अपने सतीत्वकी रक्षा बड़ी वीरतासे की है। इसमें हास्यरसका भी काफी समावेश है। १५५ पृष्ठकी पुस्तकका दाम ।≡)

३ विषवृक्ष

यह बङ्किम बाबूके सबसे अच्छे उपन्यास "विषवृक्ष"का अनुवाद है। इसका कथानक इतना रोचक, वर्णन-शैली इतनी बढ़िया और विचार इतने प्रौढ़ हैं कि पढ़ते ही बनता है। पतिव्रताकी महिमा, पापका भयङ्कर फल, स्त्रीके रहते परायी स्त्रियोंपर कुदृष्टि डालनेका कुपरिणाम तथा दो स्त्रियोंको घरमें रख छोड़नेकी दुर्दशा, इत्यादि कथानकको पढ़ते ही आँखोंके सामने चित्र खिंच जाता है। पृष्ठ लगभग २५०, मूल्य केवल १)

CC-0. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. An eGangotri Initiative